प्राचीन भारत में लक्ष्मी-प्रतिमा

(एक अध्ययन)

CENTRAL INSTITUTE OF TIBETAN HIGHER STUDIES
LIBRARY
Acc No 1907
SARNATH VARANASI

—डाक्टर राय गोविन्दचन्द्र

अपने गरुवर

श्रीमान डॉ॰ वासुदेवशरण अग्रवाल क
चरण कमला म समर्पित
जिनकी प्ररणा से यह पुस्तिका प्रस्तुत
की जा सकी ।

प्रस्तावना

इस काय का सूत्रपात सन् १९५३ मे फ्रास मे हुआ। वही लक्ष्मी की मूर्ति के ऊपर फूश के मत को लकर यह विवाद चल पडा कि साँची भारहुत बाध गया आदि स्थानो पर खदी हुई गजलक्ष्मी की मूर्ति माया देवी की हे जो बद्ध की माता थी अथवा हिन्दू देवी श्री लक्ष्मी की है। उसी समय इस काय की एक रूप रेखा बनी और यह निश्चय किया गया कि किस प्रकार इस विषय का अध्ययन किया जाय। इस अध्ययन मे प्राय सात वष लग गये क्योंकि बीच में अन्य विषयो पर काम करना पडा। सब पुस्तक भी एक ही स्थान पर नहीं मिलीं इस कारण भी समय बहुत लगा।

इधर हमारे गुरुवर डा० वासुदेवशरण जी की आज्ञा हुई कि हिन्दू देवी दवताओं की प्रतिमाओ पर कुछ विशष रूप से काय होना चाहिए क्योंकि बहुत सी सामग्री हमारे सस्कृत के ग्रथो मे बिखरी पडी है और बहुत-से विद्वान उनका उपयोग नही कर पा रहे ह। इसी विचार से यह इच्छा हुई कि अपन प्राचीन भारतीय साहित्य मे जो सामग्री उपलब्ध है तथा जो प्राचीन मूर्तिया मिलती ह उनको एकत्र कर के कुछ अध्ययन किया जाय। इसी धारणा से यह प्रयास प्रारम्भ हुआ।

आज के युग की यह माँग है कि जितनी भी जानकारी किसी विषय की प्राप्त हो वह विद्वानो के सामन रखी जाय जिसमें उसके ऊपर उनका ध्यान आकृष्ट हो और काय आगे बढ। इसी विचार से जो कुछ तथ्य अपन अध्ययन से म निकाल सका हू वह पाठकों के समक्ष उपस्थित कर रहा हू।

इस काय में विशष रूप से एतिहासिक दृष्टिकोण अपनाया गया है तथा सवत्र इसी आधार पर सामग्री एकत्रित तथा प्रस्तुत की गई है। इतिहास सदव प्रमाण खोजता है और प्रमाण भी एसा जिसकी अनुभूति हमारी बाह्य इद्रियो द्वारा हो सके। इस कारण एतिहासिक मान्यताएँ विश्वास पर आधारित नहीं हो सकती। उधर धम केवल विश्वास की ही नींव पर खडा होता है इस कारण उसकी मान्यताए भी दूसरी होती ह। यहा परम्परागत विश्वास को अलग रखकर अन्वेषण किया गया है क्योंकि एतिहासिक दष्टिकोण मे उसका समावेश करना कठिन था।

हमारे देश में अनेक धम और अनेक देवी देवता ह उनमें एक लक्ष्मी देवी को लकर उनके विषय मे जो सामग्री हमारे धार्मिक ग्रथो में, हमारे साहित्य में तथा दूसरे साहित्यो मे प्राप्त हुती ह उनको इकटठा करके यहाँ लक्ष्मी के उपलब्ध स्वरूपो का विवेचन किया गया है। आशा है कि इस सामग्री से विद्वानो को इस विषय पर आगे विचार करन मे सहायता प्राप्त होगी।

म श्री बदरी नाथ शुक्ल आचाय वाराणसेय सस्कृत विश्वविद्यालय तथा श्री अनन्त शास्त्री फडके, आचाय, वाराणसेय सस्कृत विश्वविद्यालय जिन्होन इस पुस्तक के पाठ का सशोधन करने में मेरी सहायता की है और श्री कृष्णचन्द्र बरी जिन्होंन इस पुस्तक को इस सुन्दर रूप में प्रकाशित किया इन सब के प्रति आभार प्रकट करन से पीछे नहीं हट सकता। इन्ही विद्वान सज्जनो की सहायता से यह काय प्रस्तुत हो सका है।

—गोविन्दचन्द्र

कुशस्थली
वाराणसी छावनी

विषय-सूची

विषय		प
	प्रस्तावना	
१	लक्ष्मी तथा लक्ष्मी पूजन ।	३–१२
२	सिन्धु घाटी की सभ्यता म देवी लक्ष्मी की मूर्तिया ।	१३–१८
३	वदिक यग मे लक्ष्मी का स्वरूप ।	१९–२८
४	प्राचीन बौद्ध तथा जन साहित्य म लक्ष्मी का स्वरूप ।	२९–३
५	पुराणा में लक्ष्मी का स्वरूप ।	३३–५७
६	प्राचीन सस्कृत साहित्य म लक्ष्मी का स्वरूप ।	५८–७५
७	भारतीय मुद्राओ और मोहरो पर तथा अभिलखो में लक्ष्मी तथा श्री ।	७६–८८
८	भारतीय अभिलखो में लक्ष्मी ।	८९–९१
९	कतिपय तन्त्र ग्रन्थों में देवी लक्ष्मी का स्वरूप ।	९२–१०१
१०	प्रतिमा तथा तदविषयक कुछ परम्पराए ।	१०२–११३
११	प्राचीन लक्ष्मी की प्रतिमा का विकास ।	११४–१३५
१२	निष्कष ।	१३६–१४१
१३	परिशिष्ट ।	१४२–१५६
१४	पुस्तक तालिका ।	१५७–१६४
१५	फलक ।	

★

प्राचीन भारत

मे

लक्ष्मी-प्रतिमा

१

लक्ष्मी तथा लक्ष्मी-पूजन

भारत के प्रत्यक हिन्दू के घर मे दिवाली के दिन लक्ष्मी की पूजा होती है। कार्तिक अमावस्या की रात्रि दीपको के आलोक से शरद् पूर्णिमा की भाँति खिल उठती है। प्राय सभी हिन्दू साधारणतया दो दिन पूर्व ही अपन अपन घर को झाड पोछ कर स्वच्छ करते ह नया वस्त्र पहनते हैं, तथा बडी धूमधाम से लक्ष्मी का पूजन करते ह। कुछ परिवारो मे उपासक पृथ्वी पर चन्दन से कमल का आकार बना कर मिट्टी की लक्ष्मी की मूर्ति का विधिपूर्वक गणश के साथ पूजन करते ह।[1] धान के लावे का अक्षत बना कर देवी पर मन्त्रो सहित चढाते ह। उसके पश्चात् पानी तथा दूध दही घत शहद चीनी मिश्रित पचामत से स्नान कराते हैं लाल वस्त्र पहिनाते ह चन्दन लगाते ह फूलो की माला तथा कमल का पुष्प चढाते ह धूप दीप नवेद्य उपस्थित करते ह फिर एक थली में कुछ सुवण तथा चादी के सिक्के लक्ष्मी के समक्ष रखकर उसका पूजन करते ह। इन्ही के साथ एक पेटी म इन्द्र तथा कुबेर की भी मूर्ति रखकर पूजन करते ह तथा घत का अखण्ड दीपक प्रज्वलित करते ह। इस प्रकार खजाने मे कुबर के पूजन का विधान कौटिल्य के अथशास्त्र में भी मिलता है।[2] अन्त म लक्ष्मी से प्राथना करते ह कि वह परिवार को धन धान्य से सुसम्पन्न कर। उत्तर भारत के परिवारो में चन्दन घिसकर उससे लक्ष्मी की मूर्ति सफेद पत्थर के चकल पर बनाते ह तथा पूजन करके घर की तिजोरी में रखते हैं। दूसरे दिन उस मूर्ति को पानी म घोल कर घर भर में छिडकते हैं[3] कदाचित इस विश्वास से प्ररित होकर कि इस प्रकार घर के सब स्थान म लक्ष्मी का वास हो जायगा। और दूसरे परिवारो में श्री का यन्त्र चन्दन से एक सफेद चौकोर पत्थर पर बनाते ह और उसकी पूजा करते ह। कही कही यह यन्त्र लोग पत्थर पर खोदवा कर रख लते ह और दिवाली के दिन उसी पर चन्दन लगाकर पूजा करते ह। किसी किसी परिवार म लक्ष्मी की मत्ति भीत पर चित्रित करके उनका षोडशोपचार से पूजन करते ह।

यह विश्वास जनसाधारण में विस्तृत रूप से व्याप्त है कि दिवाली के दिन लक्ष्मी प्रत्येक गह में पधारती है। उनके आगमन की प्रतीक्षा में लोग अपन घर को स्वच्छ करते ह दीपक जलाते ह जागरण करते है तथा द्यूत रचाते ह।

दिवाली के पूव भाद्रपद मे कुछ नगरो म लक्ष्मी का मेला होता है तथा लोग लक्ष्मीव्रत करते ह। यह व्रत भाद्र शुक्ल अष्टमी से प्रारम्भ होकर आश्विन कृष्ण अष्टमी तक चलता है। अष्टमी को उस व्रत का उद्यापन होता है। इस व्रत तथा पूजा की कथा भविष्योत्तर पुराण में महालक्ष्मी व्रत कथा के नाम से प्राप्त होती है[4]। यह उत्सव भदई की फसल कटने के पश्चात् होता है तथा अगहनी बोने के पूर्व। इस प्रकार इस उत्सव का हमारे

---

१ यह गणेश की मूर्ति प्राय सफेद रग की बनती है यों यह लाल रग की रहती है।

२ कौटिल्य—अथशास्त्र—पृष्ठ २, ४

३ मोतीचन्द्र—अवर लेडी आफ ब्यूटी एण्ड अबण्डन्स—"पद्मश्री नेहरू अभिनन्दन ग्रन्थ —१९४९, पृ० ४९७

४ इस व्रत तथा इसके माहात्म्य की कथा 'श्री महालक्ष्मी व्रत कथा' नाम से लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रस, कल्याण, मुंबई से स० १९७२ म प्रकाशित हुई थी।

कृषि से भी सम्बन्ध प्रतीत होता है। इस कथा में एक मगल राजा तथा उनकी दो रानियो चिल्लदेवी तथा चोल देवी का विवरण प्राप्त होता है। इन रानियो के नाम कुछ चुल्ल कोक देवता से मिलते हुए ह जिनकी मूर्ति भारहुत मे प्राप्त हुई है। कथा भी किसी प्राचीन आख्यायिका पर निर्धारित प्रतीत होती है। राजा मगल का नगर पवता के पास समुद्र से बहुत दूर न था । यह कौन सा देश था इसका पता नही। यह व्रत आज भी काशी तथा अन्य नगरा और ग्रामा म प्रचलित है। भाद्रपद शुक्ल अष्टमी को हाथ पाव धोकर सोलह त तुओ का सोलह ग्रन्थियुक्त एक तागा या डोरा बनाकर उसे च दन मालती के पुष्प कपूर अगर इत्यादि से पूजते ह तथा लक्ष्मी से धन धान्य, पृथ्वी, कीर्त्ति, आयु स्त्री घोडा हाथी पुत्र दन की प्राथना करते ह। इसके पश्चात् दक्षिण कर के मणिब ध पर यह तागा बाँधते ह। सोलह दिन तक यह क्रम नित्य चलता रहता है तथा एक गज-लक्ष्मी की चतुर्भुज मूर्ति, कपूर, अगर तथा च दन स सिचित आश्विन कृष्ण अष्टमी को बनाते ह जैसा अधोलिखित मत्र म वर्णित है[1]

शुभ्रवस्त्रपरीधाना मुक्ताभरणभूषिताम ।
पङ्कजासनसंस्थाना स्मेराननसरोरुहाम ।५९।
शारदेन्दुकलाकान्ति स्निग्धनेत्रा चतुर्भुजाम ।
पद्मयुग्मामभयदा वर यग्रकराम्बुजाम ।।
अभितो गजयुग्मेन सिच्यमाना कराम्बुना ।
सञ्चित्यैवं लिखेद्देवी कर्पूरागुरुच दन ।६१।

मूर्तिपूजन करनेवाले सुन्दर आसन पर श्वेत वस्त्र पहनकर बठते ह। पहले आठ पखडियोवाला श्वेत कमल लिखकर बनाते है। तदनन्तर लक्ष्मी का आवाहन तथा पूजन करते है। इस व्रत के उद्यापन मे सुवण से सीग मढवाकर एक गौ, वेदपाठी ब्राह्मण को तथा सुवण अन्न वस्त्र इत्यादि दूसरे ब्राह्मणो को देते ह।

किसी किसी कुल में लक्ष्मी का इस प्रकार का चित्र न बनाकर लक्ष्मी की कच्ची मिट्टी की मूर्ति रखकर पूजन करते ह। यह मूर्ति केवल ग्रीवा तक रहती है। नीचे का भाग कपड से बनाया जाता है। इस प्रकार की दो मूर्तियाँ रखी जाती है। एक को छोटी तथा दूसरी को बडी लक्ष्मी कहते ह। ये मूर्तियाँ राजा मगल की दो रानियों की प्रतीक रूप मे पूजी जाती है। कही-कही घट पर सतिया बनाकर तथा कही मिट्टी के ढले रखकर लक्ष्मी का पूजन होता है जसा जिस कुल का आचार है। प्राय पूण घट का लक्ष्मी का प्रतीक मानते ह। अनुमान ऐसा होता है कि ढेले से घट तथा उससे मूर्ति का चित्र और चित्र से स्वतन्त्र मूर्ति का आकार बना।

माघ के शुक्ल पक्ष म श्री पञ्चमी को बगाल के निवासी बडी धूम धाम से लक्ष्मी की मूर्ति बना कर पूजन करते ह। कई घरो में आश्विन की पूर्णिमा को रात्रि मे इन्द्र तथा लक्ष्मी का श्वेत पुष्प इत्यादि से पूजन होता है तथा श्वेत वस्तुए जसे रेवडी गरी दूध इत्यादि का भोग लगाया जाता है तथा द्यूत रचाया जाता है।

१ हेनरिक जिम्मर—दा आट आफ इडियन एशिया—फलक ३३ (बी)।
२ महालक्ष्मी व्रत—४
३ महालक्ष्मी व्रत—५९, ६०, ६१।
४ जे० एन० बनर्जी—डेवलपमेण्ट आफ हिन्दू आइकोनोग्राफी, पृ०—३७०।

यह कदाचित प्राचीन कौमुदी महोत्सव का प्रतीक है[1]। ऐसे ही एक कौमुदी महोत्सव का विवरण हमें मुद्राराक्षस में भी प्राप्त होता है[2]।

शारदीय नवरात्र में अष्टमी के दिन महाराष्ट्र में चावल के आटे की लक्ष्मी बनाकर पूजन होता है तथा उनके समक्ष नृत्य भी होता है। आज जो लक्ष्मी की मूर्ति दिवाली के पूजन के हेतु बनती है उसका रूप विष्णु धर्मोत्तर पुराण में वर्णित रूप से भिन्न रहता है। विष्णुधर्मोत्तर पुराण के अनुसार जब विष्णु के साथ लक्ष्मी की मूर्ति बनायी जाय तो लक्ष्मी को दो भुजाओं वाली बनाना चाहिये। जब पृथक बनायी जाय तो उन्हें चतुर्भुजा बनाना चाहिये। उनका रूप सुन्दर बनाना चाहिये तथा उनको सब आभूषणों से सजाना चाहिये। इनकी चतुर्भुज मूर्ति को कमलासन पर स्थित करना चाहिए। यह कमल अष्टदल का होना चाहिये। नीचे के दक्षिण कर में केयूर तक जिस कमल की डण्डी हो ऐसा कमल, नीचे के वाम कर में अमृत घट, ऊपर के दो करों में एक में श्रीफल (बिल्वफल) तथा दूसरे में शंख होना चाहिये दोनों ओर दो हाथी बनाये जायें जो घट पर स्थित अपनी सूंडों से घट लिये हुए देवी को स्नान कराते रहें। आज लक्ष्मी की मूर्तियाँ चार प्रकार की बनती हैं एक तो विष्णु के साथ जिसमें लक्ष्मी विष्णु का चरण चापती हुई दिखाई जाती है, या विष्णु के साथ खड़ी बनाई जाती हैं दूसरी में कमल के आसन पर बैठी हुई जिसकी चार भुजाएं रहती हैं ऊपर के दो हाथों में पद्म तथा नीचेवाले दो कर एक वरद मुद्रा में तथा दूसरा जंघा पर स्थित चौथी वह जिसमें इन्हें गज स्नान कराते दिखाये जाते हैं। ये मूर्तियाँ प्रायः सफेद रंग से रंगी रहती हैं। ग्रीवा तक बनी हुई लक्ष्मी की मूर्तियों में एक से धुरिया रंग से और एक सफेद रंग से रंगी रहती है। ये सब मूर्तियाँ आभूषणों से सुसज्जित रहती हैं। मस्तक पर मुकुट, वक्षस्थल पर हार, कानों में कुण्डल बाहुओं में केयूर, मणिबन्ध पर चूड़ी कंगन इत्यादि, कटि प्रदेश में करधनी तथा नाक में नथ[3] रहती है। इनके सिंहासन का कमल अष्टदल का बनाया जाता है तथा ये पद्मासन में बैठी हुई बनाई जाती हैं। इनके चिन्ह आज स्वस्तिक लाल कमल शंख तथा पूर्ण घट माने जाते हैं तथा इनका वाहन उल्लू माना जाता है। इनका पूजन स्वस्तिक बनाकर उस पर मूर्ति रखकर किया जाता है तथा यही स्वस्तिक वणिक वर्ग अपनी बहियों पर दिवाली के दिन नया खाता करते समय बनाते हैं तथा इसे लक्ष्मी का प्रतीक मानते हैं। लाल कमल इनके हाथ में रहता है तथा इन पर चढ़ाया भी जाता है। शंख को लक्ष्मी का प्रतीक मान कर उसका पूजन करते हैं तथा उसको बजाते हैं। पूर्ण घट जिस पर स्वस्तिक बना रहता है, घर के द्वार पर भी दिवाली के दिन रखा जाता है। यही स्वस्तिक हम प्राचीन भारत में सिन्धु घाटी की सभ्यता में मिलता है और सुदूर पश्चिम में मैक्सिको की माया सभ्यता में भी प्राप्त होता है[4]। उत्तर भारत में प्रायः व्यापारी वर्ग दिवाली को लक्ष्मी पूजन करके अपना नया वर्ष प्रारम्भ करते हैं तथा अपनी बहियों कांटे-बटखरे लेखनी तथा मसीपात्र का पूजन करते हैं जौहरी लक्ष्मी-पूजन करके अपने रत्नों का और कांटे-बटखरों का पूजन करते हैं तथा कायस्थ लोग दिवाली के तीसरे दिन द्वितीया को दावात-कलम की पूजा करते हैं। यह सब धन प्राप्ति के हेतु किया जाता है।

---

१ जे०, गोण्डा—'एस्पेक्ट्स आफ विष्णुइज़म'—पृ० २२४, पंडित गोपाल शास्त्री नेने, व्रत वार्षिक पूजा कथा संग्रह, काशी, १६३३, द्वितीय भाग—पृ० ४१।

२ विशाखदत्त—मुद्राराक्षस—३ अंक ३, ४ ५।

३ नथ—बारहवीं-तेरहवीं शताब्दी के पूर्व मूर्तियों पर दृष्टिगोचर नहीं होती।

४ लुई—मोरडन—'अब फ्राम दी वेल आफ टाइम'—दी नेशनल ज्योग्राफिकल मैगज़ीन—जनवरी १६५६—पृष्ठ ११६, का चित्र।

लक्ष्मी की इस आधुनिक मूर्ति का प्राचीनतम स्वरूप क्या था तथा इन महादेवी का पूजन भारत में कब से तथा किस प्रकार प्रारम्भ हुआ किन किन रूपो म इनकी अचना हुई इन विषयो की जिज्ञासा होना स्वाभाविक हे। एतिहासिक दृष्टि तो प्रमाण खोजती है केवल विश्वास पर किसी बात को मानने के लिए उद्यत नही होती। किसी विश्वास का आधार क्या है इसी पर सवप्रथम विचार केन्द्रित करती है।

प्राय सन १९२१ के पूव पाश्चात्य विद्वान यही मानते थ कि भारत में मूर्ति का आगमन यूनान से हुआ इन्हे यह विश्वास नहा होता था कि भारत म मूर्ति कला का स्वतन्त्र रूप से विकास हुआ। ऋगवेद में भी इन्हे प्रतिमा शब्द केवल एक स्थान पर मिला (१० १३० ३) और वहाँ भी यही कि प्रतिमा का आसीत। इस कारण इन्हान यह सिद्ध किया कि सबसे प्राचीन भारतीय बुद्ध मूर्तिया अपोलो के ढाचे पर बनायी गयी। परन्तु अब सिन्ध सभ्यता की मूर्तिया के प्राप्त होने के पश्चात सभी यह मानने लग ह कि भारत म मूर्तियाँ ईसा से २५०० वष पूव भी बनती थी। उस समय को प्राप्त पत्थर कासे तथा पक्की मिट्टी की मूर्तियाँ आज भारत क राष्टीय सग्रहालय की शोभा बढा रही ह[१]। परन्तु इनमें हमारे आज के हिन्दू देवी देवताओ की मूर्तिया नही दिखाई देती ह चाहे हम यहाँ कमल और स्वस्तिक दोनो चिह्न मुहरो की छाप पर अकित मिलते हा[२] तथा एक देवी और देवता भी दिखाई देते हा।

कुमारस्वामी न लक्ष्मी की मूर्तियो को तीन भागो म विभाजित किया है[३]। पद्मस्थिता (कमल पर बैठी हुई) पद्मग्रहा (कमल हाथ म लिये हुए) पद्मवासा (कमल से घिरी हुई)। गज लक्ष्मी की मूर्ति को उन्हान अलग स्थान दिया है परन्तु लक्ष्मी की जितनी भी मूर्तियाँ प्राप्त होती ह उनमें कमल का प्राधान्य है। यह एक चिह्न सभी मूर्तियो में प्राप्त होता है। यदि हम इस चिह्न के साथ किसी देवी की मूर्ति की खोज मोहनजोदडो हडप्पा चान्हुदाडो या रोपड में करें तो कदाचित किसी तथ्य पर पहुच सके। लक्ष्मी के स्वरूप को जगन्माता अनाहिता के स्वरूप से जोडना कुछ उचित प्रतीत नही होता[४] न मोहनजोदडो से प्राप्त योगी के स्वरूप से क्योकि इनम कमल का मूर्ति से कही कोई सम्बन्ध नही दिखाई देता। यह तो प्राय अब विद्वान मानन लग गय ह कि भारत के प्राचीन नगर मोहनजोदडो हडप्पा अमरी नाल कुल्ली चान्हुदाडो से पश्चिम के स्थान, किश उर इत्यादि नगरियो से वाणिज्य सम्बन्ध था, तो उस काल के भारत म एक वणिक समाज का होना अनिवाय-सा है। इनके अपन कोई देवी देवता जो धन को प्रदान करनवाले हो होने चाहिये।

---

१ मारटीमर ह्वीलर—दी इण्डस सिविलिजेशन, पृष्ठ ७६।

२ माधोस्वरूप वत्स—एक्सकवेशन्स एट हरप्पा—खं० २, फलक ९५ सं० ३५२, ३९५, ३९६, ३९७ ३९८ इत्यादि (स्वस्तिक) फलक ९५ स० ४१३ कमल के हेतु।

३ कुमार स्वामी—'अर्ली इंडियन आइकोनोग्राफी, श्री लक्ष्मी—इस्टन आर्ट', खण्ड १ जनवरी १९२९, पृष्ठ १७५।

४ ज० एन० बनर्जी—दी डेवलपमेण्ट आफ हिंदू आइकोनोग्राफी, पृ० १८३ तथा आगे। 'अनाहिता का स्वरूप लक्ष्मी से भिन्न है।

५ मोतीचन्द्र—"पद्मश्री नेहरू अभिनन्दन ग्रथ (१९४८)" पृष्ठ ४९८।

६ गोविन्दचन्द्र—पारयूर य वोज डॉ लाण्द प्रौतो हिस्तारिक। थेज आ यूनिवर्सिटी डु पारी (१९५५)। पृष्ठ २४४।

इस विषय में कुछ निश्चित रूप से कहना कठिन है क्याकि अभी तक यहा की लिपि पढी नही गयी है[1] परन्तु फिर भी यहा से प्राप्त कुछ मोहरो पर की आकृतिया इस अनुमान को पुष्ट करती ह कि सिन्धु घाटी के वणिक वग की कोई देवी एसी थी जिन्होन लक्ष्मी का रूप कालान्तर म ग्रहण किया ।

वदिक युग के प्रारम्भिक काल म तो लक्ष्मी की मूर्ति की कोई कल्पना नही प्राप्त होती । श्री तथा लक्ष्मी शब्द ऋग्वेद में आते ह[3] परन्तु इनसे किसी विशेष रूप का बोध नही होता । माता अदिति[4] से लक्ष्मी का सम्बन्ध कहा तक जोडा जा सकता है यह विचार का विषय है । यो अदिति से लक्ष्मी का सम्बन्ध कुछ बठता नही क्योकि ये दोना शब्द अलग अलग ऋग्वेद में प्राप्त ह तथा इन दोना को एक साथ जोडा नही गया है । डाक्टर कुमार स्वामी ने यह लिखा है कि हिन्दू वदिक दवी अदिति तथा बाबुल की इश्तर म बहुत कुछ साम्य है । इसी प्रकार श्री लक्ष्मी से अदिति का भी सम्बन्ध ज्ञात होता है । वदिक देवी अदिति यजुर्वेद म विष्णु-पत्नी के रूप म हमें मिलती ह[6] और ऋग्वेद म वे जगन्माता सवप्रदाता प्रकृति की अधिष्ठात्री देवी के रूप म । अदिति का इस प्रकार एक रूप श्री लक्ष्मी से मिलता है । जब अदिति के विविध गु। अलग अलग देवियो मे विभाजित करके पूजे जान लग तो एक रूप श्री लक्ष्मी का भी इन्ही अदिति से बना एसा कुमार स्वामी का मत है । परन्तु यह बात कुछ जमती नही ।

यजुर्वेद मे श्री तथा लक्ष्मी दो देवियो के रूप मे हमें मिलती ह श्रीश्चते लक्ष्मी सपत्न्या तथा इनको विष्णु की दो पत्निया माना है । ५जुर्वेद म श्री भूति वद्धि सौभाग्य इत्यादि[9] की द्योतक ह । ब्राह्मणा म जिन देवताओ को श्री है वे अमर कहे गय हैं । इससे ऐसा बोध होता है कि श्री का अथ इस युग में तेज था जसा हम आग देखग । कौशीतकी ब्राह्मण म श्री वह आसन है जिस पर ब्रह्मा स्थित ह[1] । श्री म चेतनधम का आरोपण सबसे प्रथम शतपथ ब्राह्मण म होता है जब प्रजापति अपन तप के द्वारा अपनी श्री को प्रकट करते ह[2] तथा यह एक स्त्री के रूप में उनके समक्ष खडी होती है ।

---

१ ह्वीलर—'दी इण्डस सिविलिजेशन, पृष्ठ ८१ ।

२ मांके—'फरदर एक्सकवेशन एट मोहनजुदाडो फलक—८२, स० १, २ फलक ६६—स० ए वत्स—'एक्सकवेशन एट हरप्पा —फलक ६३, स० ३१८ ।

३ ऋग्वेद—(श्री) १, १६६, १०, १, १७६, १, १, १८८, ६, २, १, १२, ४, १०, ५ ४, २३, ६, ५, ४४, २ इत्यादि (लक्ष्मी) १०, ७१, २ ।

४ ऋग्वेद—१, ८६ १० ।

५ डा० कुमारस्वामी—आरकेइक टराकोटाज ७२ ७३ (आपेक लेपजिग १६२८), अर्ली इण्डियन आइकोनोग्राफी—श्रीलक्ष्मी—ईस्टन आट, ख० १, प० १७५ १७६ ।

६ तत्तिराय सहिता—७, ५, १४, वाजपेयी—२६ ६० ।

७ ऋग्वेद—१, ८६, १० ।

८ वाजसनेयी—३१, २२ ।

६ अथववेद—१२, १, ६३, १०, ६, २६, ६, ५, ३१, ११, १, १२, ११, १, २१ ।

१० शतपथ ब्राह्मण—२, १, ४, ६ ।

११ कौशीतकी ब्राह्मण—१, ५ ।

१२ शतपथ ब्राह्मण—११—४, ३, १ ।

श्रीसूक्त म श्री तथा लक्ष्मी एक ही देवी हो जाती ह । सुवण तथा रजत की (श्रीसूक्त१) माला पहने हुए अथवा जिस माला का एक दाना सुवण का है और एक चादी का—जिसा ज्यूतिया की माला मे गुथा रहता है हिरण्य वणवाली पद्म पर स्थित पद्मवणवाली जिसका सम्बध बिल्वफल (श्रीसूक्त ६) और कमन से है एसी दवी हमारे समक्ष आती ह । तत्तिरीय उपनिषद मे ये वस्त्र भोजन, पेय, धन आदि की प्रदात्री क रूप म हम मिलती ह[1] । एतरेय ब्राह्मण म श्री की कामना करनेवाले के हेतु बिल्व के पेड का यूप शाखा सहित बनान का आदेश मिलता है । विल्व को श्रीफल भी कहा है । रामायण म श्री कुबेर के साथ सबधित मिलती ह जो सासारिक सौख्य के प्रदाता तथा धन के देवता ह । रामायण म पुष्पक प्रासाद पर लक्ष्मी कर म कमल लिय हुए स्थित है एसा वणन मिलता है । महाभारत म लक्ष्मी भद्रा नाम की सोम की पुत्री के साथ कुवर की स्त्री के स्वरूप म उपस्थित होती ह । यहा इनकी उत्पत्ति समुद्र मथन से ग्रीक देवता, अफ्रोडाइट की भाति मिलती है तथा इनका मागलिक चिह्न मकर मिलता है । बौद्ध ग्रथो मे लक्ष्मी के प्रति बाद्धा न श्रद्धा का भाव नही दरसाया है । इनके सम्प्रदाय का नाम केवल मिलिद प ह (प्रश्न) में मिलता है (१६१) । दीघ्घनिकाय के ब्रह्मजाल सूत्र मे इनकी उपासना वर्जित की गयी है । जातक नम्बर ५३५ मे यह पूव म स्थित माना गया ह जसे श्रसा दक्षिण म सद्धा पश्चिम म, हिरी उत्तर मे । श्री को लख्खनी जातक सख्या ३८२ म धत्तरथ की (जो पूव के दिग्पाल ह) पुत्री माना है। यहा वे कहती हैं, म मनुष्य को सासारिक वभव की प्रदात्री हू । म सौन्दय हू (श्री) म लख्खी हू म भूरिपुत्र हू । धम्मपद अट्ठकथा मे (११ १७) लक्ष्मी को रज्ज सिरी दायक देवता बताया है अर्थात् वे राजा को राज्य दिलानवाली देवता ह ।

जैन प यूषणा (पयूषण) कल्प (३६) में त्रिसला के १४ स्वप्नो में जो महावीर के आगमन के द्योतक थे श्री के अभिषक का भी एक विवरण मिलता है । भगवती सूत्र में भी यही कथा मिलती है । इस स्वप्न में श्री को कमल पर स्थित हिमालय के गर्भ म हाथियो द्वारा अभिषिक्त होती हुई त्रिसला ने देखा था ।

कालिदास के रघुवश म[9] लक्ष्मी पद्महस्ता राजलक्ष्मी के स्वरूप में उपस्थित होती ह । कालिदास न अपनी स्वरूपवती नायिकाओ की उपमा लक्ष्मी से दी है । अग्निपुराण में लक्ष्मी को प्रकृति तथा नारायण को पुरुष माना है । विष्णुपुराण में श्री विष्णु की पत्नी तथा समुद्र मथन से उत्पन्न मानी गयी ह[11] । इनको

---

१ तत्तिरीय उपनिषद—१ ।
२ ऐतरेय ब्राह्मण—२, १, ६ तथा आगे ।
३ गोंडा, ज०—'एस्पेक्ट्स आफ विष्णुइज्म (१९५४)', प० १६७ । मनुस्मृति—५, १२० ।
४ रामायण—७, ७६ ३१ ।
५ रामायण वाल्मीकि—५, ७, १४ । पुष्पक कुबेर का विमान था जो रावण कुबेर से जीत कर लका ले आया था ।
६ गोंडा—उपर्युक्त, पृष्ठ १६५ ।
७ महाभारत—१३, ११, ३ ।
८ दीघ्घनिकाय—१, ११ ।
९ रघुवश—४ ५ ।
१० मालविकाग्निमित्र—५ ३० ।
११ विष्ण महापुराण—१ ८ १५ १६ । १४ । १५

कमलालया कहा गया है । भक्तमाल म भी लक्ष्मी को कमला तथा विष्णु की शक्ति कहा गया है[१] ।

एसा ज्ञात होता है कि वेदा म श्री तथा लक्ष्मी अमूत एश्वय के द्योतक शब्द थ । बाद म एक स्थूल रूपबोधक हो गय तथा जनता द्वारा पूजित एक विशेष देवी से इनका सम्ब ध जोड दिया गया । युत्पत्ति की दृष्टि से देखा जाय तो ग्रीक भाषा मे श्री के स्थान पर जो श द प्राप्त होता है उसका अथ है—अधिकारी शासक राजा इत्यादि । हिन्देशिया के उत्तरी सेलवस म बोली जानेवाली टोन टम बोग्रान मे सिय श द धनवान तथा सुन्दर दोना का द्योतक है । कदाचित यह शब्द श्री से निकला हो । लक्ष्मी शब्द लक्ष्म से बना है जिसका अथ है चिह्न एसा मोनियर विलियम्स का मत है । वह कौन-सा चिह्न था जिससे लक्ष्मी का सम्ब ध था निश्चित रूप से तो नही कहा जा सकता परन्तु एसा अनुमान होता है कि स्वस्तिक जो आज भी लक्ष्मी-पूजन म हम यवहार करते ह उसका सम्ब ध लक्ष्मी से हो । श्री अक्षर स्वस्तिक से ही बना हुआ ज्ञात होता है । श्री श द से बहुत से शब्द बन जसे ब्रह्मश्री, राजश्री मुखश्री रणश्री (वीरश्री) गृहश्री इत्यादि । लक्ष्मी से राजलक्ष्मी गहलक्ष्मी रणलक्ष्मी लक्ष्मीवान और बगला का लख्खीवार इत्यादि ।

अनुमान होता है कि ईसा पूव तीसरी शता दी के पहिल लक्ष्मी का मूत स्वरूप निर्धारित हो चुका था क्योकि हम इन्हे भारहुत के कठघरो के खम्भो पर अपने विकसित रूपा मे देखते ह। यहाँ हम लक्ष्मी के दो स्वरूप मिलते हैं। एक बठा हुआ[६] तथा दूसरा खडा । बठी हुई मूर्ति योगासन मे दोनो हाथ जोडे हुए कमल के फूल पर स्थित ह । खडी मूर्तियाँ कमल का फूल एक हाथ मे लिय हुए ह तथा दूसरा हाथ वरद मुद्रा में नीचे की ओर लटका हुआ है । इन दोनो प्रकार के फलका में गज उनको स्नान करा रहे हैं । इस प्रकार उस युग में इनका गज तथा कमल से सम्ब ध स्थापित हो चुका था तथा इनकी मूर्ति की पूण कल्पना भी हो चुकी थी । फूश का मत है कि यह गजलक्ष्मी की मूर्ति बुद्ध की माता माया की द्योतक है तथा हिन्दू देवी लक्ष्मी का आधुनिक रूप इसी से लिया गया है परन्तु यदि ऐसी बात होती तो अश्वघोष ने सौन्दरानन्द में सुन्दरी की पद्म धारण किये हुए लक्ष्मी की मूर्ति से उपमा देते हुए यह न कहा होता कि 'पद्मानना पद्मदलायताक्षी पद्मा विपद्मा पतितेव लक्ष्मी इत्यादि तथा रामायण में गजलक्ष्मी का पुष्पक विमान प्रासाद पर खचित होना न वणन किया गया होता । यदि यह माया का स्वरूप माना जाय तो दो हाथिया को इन देवी को स्नान कराने के हेतु दिखाने की आवश्यकता क्यो हुई एक ही हाथी से काम चल सकता था । गभ के स्वप्न म तो माया को एक हाथी दिखाई देता है जसा साची के कई फलको पर हम देखते ह । यहाँ हाथियो का झुण्ड और उससे अलग होकर एक हाथी को माया देवी की ओर आते हुए तो नही दिखाया गया है ।

---

१ अणु—१, ८, ६३ ।

२ ग्रियसन, सर, जी०—जे, आर, ए, एस १९१०—पष्ठ २७० ।

३ बोआजाक, इ—डिक्सियोनेर एटिमोलोजिक डुला लाग ग्रक, (पारी १९२३) पष्ठ ५१३

४ गोंडा—पूर्वांकित—पष्ठ १९१ ।

५ मोनियर विलियम्स—सस्कृत इगलिश डिक्शनरी, पष्ठ ८७२ ।

६ कलकत्ता इण्डियन म्यूजियम—भारहुत खम्भा ११० के पास ।

७ कलकत्ता इण्डियन म्यूजियम—भारहुत खम्भा २१० तथा १७७ के पास ।

८ फूशे—"आन दी आइकोनोग्राफी वी बुद्धाज नेटिविटी —अर्केआलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया मेमायर्स ४६ (१९३६), पष्ठ २ ।

इस प्रकार हम इस निष्कष पर पहुचते है कि श्री तथा लक्ष्मी का सम्मिश्रण श्रीसूक्त के समय तक हो चुका था तथा इस देवी का मूत रूप किसी जनता की देवी से रामायण काल के पूव ही सम्बन्धित हो गया था। उन जनता की देवी के चिह्नो में पद्म गज जल इत्यादि थ तथा वे सौन्दय और धन की अधिष्ठात्री देवी थी ।

भारत म यक्ष और नाग पूजा प्राचीन समय से होती चली आयी है तथा जसा फरगूसन ने लिखा है कि यहा के आदिवासिया का विश्वास था कि इनके पूजन से ही पानी बरसता है तथा अन्न उत्पन्न होता है[1]। ये विचार वदिक नही है जसा डुला वाल पूस्साँ ने लिखा है[2]। इन विचारो के माननेवालो की एक पूण विकसित सभ्यता थी जसा सिन्धुघाटी की खोदाई से पता चला है[3]। आय इन्हें शिश्न (लिंग) के पूजक मानते थे तथा इन्हें अपनी आहुताग्नि के पास भी नही फटकने देते थ। कालान्तर म कदाचित इनके सम्पक म आने पर तथा इनसे ववाहिक सम्बन्ध जुड जान पर इनके देवता भी आय धम में ल लिये गये परन्तु रहे वे निम्न श्रेणी में जसा व्यवहार महादेव अथवा कुबर के साथ बहुत दिन तक होता रहा। शतपथ ब्राह्मण में यक्षराज कुबेर राक्षसा की गिनती में ह परन्तु जमिनीय ब्राह्मण में यक्ष एक आश्चयजनक जीव के रूप में हमारे समक्ष आते ह[4]। बौद्ध साहित्य में वश्रवण कुबेर चार दिकपालो म एक गिनाय गय ह । शाखायन गह्य सूत्र में (४ ६) आश्वलायन गह्य सूत्र म (३ ४) तथा पाराशर गह्य सूत्र में (२ १२) हमें यक्षो की स्तुति भी मिलने लगती है। पीछे चलकर कुबेर देवताओ के रोकडिया बना दिये जाते ह तथा इन्द्र के साथ आठो दिकपालो में उत्तर के अधिष्ठाता बना दिये जाते हैं। महाभारत में एक यक्षिणी के मन्दिर की चर्चा राजगह में मिलती है (३ ८३ २३)। क्या ऐसा सम्भव है कि इन्ही यक्षिणियो में एक लक्ष्मी भी हो जो बाद में एक अलग देवी बन गयी हो ? हम भारहुत में श्री माँ देवता मिलती हैं। श्री से लक्ष्मी का सम्बन्ध हो ही गया था इस प्रकार यह अनुमान करना कि लक्ष्मी भी किसी यक्षिणी के रूप में आदिवासियो से पूजी जाती थी कुछ अनुचित न होगा। श्रीसूक्त में श्रीमदेवी को लक्ष्मी कहा गया है (श्रीसूक्त २) तथा मणिभद्र यक्ष का भी सम्बन्ध इनसे यहाँ मिलता है (श्रीसूक्त ६) इससे भी इस धारणा की पुष्टि होती है।

भारतीय सभ्यता का दूसरे देशो मे जो प्रसार हुआ उसके फलस्वरूप उन देशो में लक्ष्मी का जो स्वरूप मिलता है तथा जो आख्यायिकाए उनके सम्बन्ध म उनके विषय म मिलती हैं उनसे ऐसा पता चलता है कि बाली द्वीप में लोगो का विश्वास है कि हिन्देशिया के राजाओ की लक्ष्मी उनकी रानी के रूप में रहती थी परन्तु लक्ष्मी का जब विष्णु से प्रम हो गया तो उस प्रेम के फलस्वरूप उनकी मृत्यु हो गयी। उनको पृथ्वी में गाडने के पश्चात् उस स्थान पर कई प्रकार के पौध जम गये। धान का पौधा उनकी नाभि से उत्पन्न हुआ। इस

---

१ फरगूसन—"ट्री एण्ड सरपेण्ट वरशिप"—पृष्ठ २४४ ।

२ डु ला वाले पूस्साँ—'आण्डो योरोपियां ये आण्डो इरनियां'—लाण्ड जस्क वेर आ सा अवा ज.ज क्री (पारी १९२४), पृष्ठ ३०४, ३१५, ३१६ ३२०, इत्यादि ।

३ कुमारस्वामी—यक्षाज—खण्ड १, पृष्ठ ३ ।

४ वायु पुराण—८८, २७ ।

५ कुमारस्वामी—यक्षाज—ख० १ पृष्ठ ४ ।

६ जमिनीय ब्राह्मण—३, २०३ २७२ ।

७ फूश—ल ई.नोग्राफी बुद्धिक डु लाद—खण्ड १ पृष्ठ १२३ ।

कारण वह सबसे श्रेष्ठ समझा जाता है[१]। सूडान मे लक्ष्मी को धान उत्पन्न करनेवाली देवी मानते ह। वे स्वग से इस पृथ्वी पर प्रतिवष आती ह। वे देवी ह तथा विद्याधरो से उनका सम्बध है। पानी तथा लक्ष्मी का योग है इस कारण पृथ्वी पर उनका प्रभाव है जसे गधर्वों तथा यक्षो का[२]।

जावा म प्राचीन सुवण आभूषणो पर 'श्री शब्द खुदा रहता है। इसके आकार को देखकर ऐसा भान होता है जसे कुभ अथवा शख हो[३]। इससे ऐसा ज्ञात होता है कि वहाँ के निवासी लक्ष्मी के विषय मे और बातें तो भूल गये परन्तु उनको सुवण के देवता के रूप मे केवल स्मरण करते रहे। प्राय ऐसा होता है कि काल के प्रभाव से बहुत से देवताओ की पूजा लोप हो जाती है परन्तु उसका कुछ अश लोकाचार के रूप में रह जाता है। जिस प्रकार आज भी भारत में आश्विन की पूर्णिमा को अनक घरो में श्वेत वस्तु चद्रमा के समक्ष रखी जाती है तथा इद्र और लक्ष्मी को भोग लगायी जाती है परन्तु इसके पीछ का इतिहास हम बिलकुल भूल गये ह। हम यह नही जानते कि यह कौमुदी महोत्सव या कौमुदी मह का प्रत्यक्ष रूप है। डच गायना में जो भारतवासी हिन्दू ह उनके अब भी कुछ कुछ रीति रिवाज वसे ही ह जसे हम लोगा के। वे भी दिवाली की रात्रि में दरिद्रा देवी को सूप बजाकर घर से निकालते ह[४]। विदेशो म भी जो लक्ष्मी का स्वरूप गया है उसको भी देखने से इसी बात की पुष्टि होती है कि पहिले ये कोई यक्षिणी थी और कदाचित इनका नाम मदिरा देवी था जिनका कौटिल्य के अथशास्त्र में हमें आदि स्वरूप मे दशन होता है। वदिक युग के अन्त मे इनका सम्बध वदिक शब्द श्री तथा लक्ष्मी से जोड दिया गया तथा इस प्रकार ये पुरुष की और बाद में विष्णु की पत्नी हो गयी। ये शब्द वदिक काल में केवल विभूतियो के द्योतक थे किसी विशेष देवी के रूप से इनका कोई सम्बध न था।

उत्तर वदिक काल में इनकी समुद्र से उत्पत्ति की कथा भी जुड गयी जो किसी प्राचीन आदिवासियो की गाथा पर आधारित ज्ञात होती है क्योकि एसा अनुमान है कि प्रागतिहासिक काल में ओरगी लोथल और भागत्राव[८] बन्दरगाह थे यह प्रमाणित हो चुका है। सिधु घाटी में समुद्र से धन तथा सुवण व्यापारी लाते थे इस कारण यह मान लेना स्वाभाविक था कि लक्ष्मी समुद्र से आती थी और समुद्र से ही उसका जम हुआ। वहत कथा श्लोक सग्रह म हमें सुन्दर यक्षिणी की मूर्ति पूजन के हेतु मिलती है (१९ ७४ ७६) मत्स्य पुराण में हमें लक्ष्मी की मूर्ति के साथ ही यक्षिणी की मूर्ति भी प्राप्त होती है (२६१–४७–५२) जिससे ऐसा अनुमान होता है कि मत्स्य पुराण के काल तक यक्षिणी की पूजा लक्ष्मी से अलग होने लगी परन्तु इन दोनों की

---

१ जे० गोण्डा— एस्पेक्टस आफ विष्णुइज्म प० २२० तथा सिल्वा लेवँ— औटरद फ्राम बाली सस्कृत टेक्स्टस फ्राम बाली" (बडौदा १९३३) पृष्ठ २८।

२ जे० गोण्डा—एस्पेक्टस आफ विष्णुइज्म—पष्ठ २२१।

३ जे० गौण्डा—वही पष्ठ ३२२।

४ वी० ए० गुप्त—"हिन्दू हालीडेज एण्ड सेरिमोनियल्स,' (कैल्कटा १११) पृ० ३६।

५ जे० गोण्डा—एस्पेक्टस, पष्ठ २२४।

६ गोविदचद्र—'पारयूर ये वीज डा लाड प्रतोहिस्तारिक'—थीसिस—(पारी १९५५) पष्ठ २६८।

७ दी लीडर—अप्रल १४, १९५५, पष्ठ ३।

८ इण्डियन आर्कोआलाजी—१९५७—५८, पष्ठ १५।

प्राचीन एकता को लोग भूल नही । वात्सायन के कामसूत्र के समय तक कदाचित यक्ष रात्रि में जो कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा को मनाई जाती थी यक्षिणी के रूप मे लक्ष्मी की पूजा होती थी[१] ।

इस प्रकार य तथ्य हमे इसी धारणा की ओर अग्रसर करते ह कि लक्ष्मी अनार्यों की देवी थी जो कालान्तर म हमारे धम म आ गयी और आर्यों को इन्ह अनार्यो के सम्पक से अपनाना पडा । कभी इनको वरुण की स्त्री माना कभी इद्र की कभी कुबर की और अन्त म आकर विष्ण की पत्नी—जिस रूप में आज इनकी पूजा होती है ।

१ सुभाष ज० रेले— दिवाल। थ्रू दी एजज --दी लीडर, इलहाबाद, अक्टूबर २०, १९६०, पष्ठ १, कालम ७ ।

सिंधु घाटी की सभ्यता में देवी लक्ष्मी की मूर्तियाँ

आज से प्राय ५००० वष पूव के भारतीय नगरो के अवशप सिधु घाटी गुजरात पजाब इत्यादि स्थानो पर प्राप्त होने के कारण अब पश्चिम के इतिहास विशेषन भी यह मानन को बाध्य हो गय ह कि सिधु घाटी की मूर्तियाँ ही भारतवासियो की सबसे प्राचीन मूर्तिया ह तथा भारतीय मूर्तिकला का जन्म भारत मे ही हुआ, भारत ने यूनान से मूर्ति निमाण करना नही सीखा। इन प्राग् एतिहासिक मूर्तियो म कौन सी मूर्तियाँ मनुष्य की ह तथा कौन-सी देवी-देवताओ की ह यह निश्चित रूप से कहना कठिन है। फिर भी यह अनुमान करना कि जिन मूर्तियो के समक्ष कोई हाथ जोडकर बठा ह वह देवी की मूर्ति है कुछ अनुचित न होगा। यो तो एक मोहर जिस पर एक मनुष्य योग आसन म बठा हुआ खदा है उसे पशुपतिनाथ अथवा शिव की मुहर कहा गया है तथा यहाँ से प्राप्त लिग के रूप क पत्थर तथा गोल कट हुए पत्थरा से यह अनुमान लगाया गया है कि यहा शिव पूजन हुआ करता था। जब यहाँ की लिपि की कोई एसी कुजी हाथ लगे जिसके द्वारा यह पूण रूप से पढी जा सके तभी इस विषय पर कुछ निश्चित रूप से कहा जा सकता है। अभी तक इस ओर जितन भी प्रयास हुए हैं उनम कोई सवमान्य नही है। यह गत्थी रोजटा स्टोन की भाँति के दो-या तीन लिपि मे लिख हुए लेख के प्राप्त होने पर ही सुलझ सकती है।

यो तो यहाँ से प्राप्त कासे की नग्न स्त्रियो की मूर्तियो को[१] भी लक्ष्मी की प्रतिमा माना जा सकता है क्योकि इनके दक्षिण कर मे एक पात्र है जिसे धन पात्र अनुमान किया जा सकता है और इनके गले के हार की दो कलियो को कमल की कलियाँ माना जा सकता है और इन्ही दोनो वस्तुओ से लक्ष्मी का अटूट सम्बध है। मूर्तिकला की दृष्टि से इस अनुमान को औरो की अपेक्षा काटना कठिन है। जसा पहिले लिखा जा चुका है लक्ष्मी का अभिन्न सम्बध पद्म जल तथा गज से है। गज मोहनजोदडो तथा हडप्पा की मोहरो पर मिलते हं (आकृति ग घ च छ)। परन्तु अभी तक हाथीदाँत की बनी हुई वस्तुए यहाँ से बहुत कम सख्या म प्राप्त हुई ह। इस कमी के विषय मे माशल की यह सम्मति है कि गज यहाँ पूजनीय पशु समझ जाते थ इस कारण यहा हाथीदात की चीज अधिक मात्रा में नही प्राप्त होती।

प्राचीन समय में गज वरुण का वाहन माना जाता था[५]। इन्द्र से गज का सम्बध एरावत के रूप मे पीछे से चल कर जुडा हुआ प्रतीत होता है (ऋग्वेद म इन्द्र को घोडे पर सवार वणन किया गया है। ऋग्वेद १।१४०।६) य दोनो ही देवता जल से सम्बन्धित थे। एक स्थल के जल से और दूसरे मेघ के जल से, इस

१ ई ज एच मांके—फरदर एक्सकेवेशन एट मोहनजोदडो (दिल्ली १९३७)—प्लेट ८७, मोहर न० २२२।

२ जान माशल—मोहनजोदडो एण्ड दी इन्डस सिविलिजशन ख० १, पष्ठ ६२, ६३ तथा ज एन बनर्जी—डेवलपमेण्ट आफ हिदू आइकोनोग्राफी पष्ठ १८३ तथा आगे।

३ माके—फरदर एक्सकेवेशन—प्लट ७३ स० ९ १०, ११, माशल—मोहनजोदडो ९४, स० ६।

४ माशल—मोहनजोदडो इत्यादि, पष्ठ ५५३।

५ मोनेश्वर दीक्षित—'नोटस आन सम इण्डियन आम्युलेटस", बुलिटन प्रिंस आफ वल्स म्युजियम आफ वेस्टन इण्डिया पष्ठ ८७।

कारण जल से गज का सम्बन्ध अनुमान करना कुछ अनुचित नही है तथा इसका आदिवासियो में पूजन होना भी कुछ असम्भव नही है।

हाथी की आकृति बनी हुई मोहर जो हरप्पा तथा मोहनजोदडो से प्राप्त हुई ह (आकृति ग, घ, च छ) उनको देखन से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि हाथियो को इन मोहरो के बनानेवाले कारीगरो न स्वय देखा था, क्योकि इन्हान हाथियो के शरीर के छोट छोटे अवयवो को भी दर्शान का प्रयत्न किया है। इन सब हाथियो पर सिन्धु घाटी के अक्षरा में कुछ लिखा हुआ है। ये मोहरें नीचे तथा ऊपर की दोनो सतहो से प्राप्त हुई ह, परन्तु इन मोहरो पर के बन हुए अक्षर सब एक ही प्रकार के नही ह। इन पर हाथियो पर के झूल[1] तथा आभूषणो को देखकर एसा ज्ञात होता है कि हाथियो का पर्याप्त सम्मान था। इनम एक हाथी के पुटठे पर पद्म तथा दूसरे पर स्वस्तिक का चिह्न भी बना हुआ प्रतीत होता है। ये दोनो चिह्न अभी तक लक्ष्मी से सम्बन्धित ह। इस कारण गज का लक्ष्मी से कुछ सम्बन्ध उस प्राचीन काल में भी होना कुछ असम्भव नही है।

स्वस्तिक-अकित मोहर हडप्पा तथा मोहनजोदडो दोनो नगरो से प्राप्त हुई ह[2]। यहाँ ये चिह्न प्राय दोहरे बने हुए ह (आकृति ङ ज)। यह चिह्न आज भी लक्ष्मी-पूजन में इसी प्रकार दो अगुलियो से बनाकर व्यवहृत होता है। हडप्पा से प्राप्त एक मोहर पर के स्वस्तिक के चारो हाथ नीचे-ऊपर की ओर उसी प्रकार खिचे हुए ह जसे आजकल स्वस्तिक में बनते ह। (आकृति द), यह चिह्न वरुण के घट पर भी यज्ञादि में आज भी ऐसा ही बनाया जाता है तथा देवी-पूजन के घट पर भी इनको सिन्दूर से बनाते ह क्योकि वह घट भी वरुण का प्रतीक समझा जाता है। परन्तु वरुण आर्यों के देवता हैं इस कारण आर्यों के पूव कदाचित् जल के देवता किसी यक्ष के रूप में पूज जाते रहे होगे, जिनका यह चिह्न ज्ञात होता है जो आगे चलकर वरुण के उस जल के यक्ष देवता से सम्बन्धित होने पर उनसे जोड दिया गया होगा। जल के प्रति यक्षो के प्रेम का विवरण महाभारत में कम से कम दो स्थानो पर प्राप्त होता है। एक तो उस स्थल पर जहाँ पानी लेने जाने पर जल निवासी यक्ष चार पाण्डवो को मार डालता है और युधिष्ठिर के आचरण से सन्तुष्ट होकर उन्हें पुन जीवित कर देता है। दूसरे जहाँ गन्धमादन पवत पर सरोवर की रक्षा के हेतु यक्षगण भीम से युद्ध करते ह।

स्वस्तिक से गज का भी कुछ सम्बन्ध प्रतीत होता है, क्योकि हडप्पा से प्राप्त एक मोहर पर एक ओर स्वस्तिक का चिह्न है, तथा दूसरी ओर हडप्पा लिपि के कुछ अक्षर हैं (आकृति त)।

---

१ वत्स—एक्सकेवेशन ६१, सख्या २२६, २२७, २२८, २२६, २३०, २३१।

२ मार्के—फरदर एक्सकेवेशन इत्यादि प्लेट ८४, स० ५७, प्लेट ८५, सं० ११०, १२७, प्लेट ८६, स० १६६, १६५, १७१, प्लेट ८७ स० २४५, प्लेट ६६, सं० ५०४, ५१२, ५१७ इत्यादि।

३ मार्के—उपर्युक्त प्लट ६६, सं० ६४८, इत्यादि।

४ मार्के—उपर्युक्त प्लेट ८५, सं० १२७।

५ मार्के—उपर्युक्त प्लेट ६६, स० ५०४।

६ मार्के—उपर्युक्त प्लेट ८३, स० १७, ३७, प्लेट ६८, स० ६१६, प्लेट ६४, सं० ३८३।
वत्स—एक्सकेवेशन एट हडप्पा प्लेट ६२, स० २७८, प्लेट ६५, सं० ३६२, ३६७, ३६८।

७ वत्स—उपर्युक्त प्लेट ६२, सं० २७८।

इन अक्षरों को या चिह्नों को[१] यदि गज चिह्नित एक मोहर जो मोहनजोदडो से प्राप्त हुई है[२] उसके अक्षरो से मिलाया जाय तो कम-से-कम प्रथम अक्षर इन दोनो मोहरो के एक-से ही प्रतीत होते हैं। एक दूसरी मोहर पर हाथी के सामन ही स्वस्तिक का चिह्न बना है इससे यह अनमान पुष्ट होता है कि गज से स्वस्तिक का सम्बन्ध था। जो सिन्धु सभ्यता की मोहरें मेसोपोटामिया में प्राप्त हुई ह उनमे भी हाथी की मोहर है। इस कारण एसा अनुमान होता है कि गजचिह्न से व्यापारियो का भी कुछ सम्बन्ध था। इस प्रकार तीन तथ्य हमारे समक्ष प्रकाश में आने लगते है। एक गज और स्वस्तिक का सम्बन्ध दूसरा गज और यापारियो का सम्बन्ध और तीसरा गज और स्वस्तिक से व्यापारियो का सम्बन्ध।

कुछ मोहरें सिन्धु सभ्यता की एसी ह जिनमें एक देवी के समक्ष एक आदमी (उपासक) हाथ जोडे बठा हुआ है। एक मोहर जो हडप्पा से प्राप्त हुई वह भी ऐसी ही है (फलक १ आकृति झ)। इस मोहर की देवी अवश्य सिन्ध घाटी की कोई देवी प्रतीत होती है। इसी से मिलती हुई एक मोहर और मोहनजोदडो से प्राप्त हुई है इसम एक देवी की मूर्ति है। यह देवी एक गोल बावली से निकल हुए दो कमल नाल के बीच में खडी हैं (फलक १ आकृति क)। इन कमल नालो म कमल की कलियाँ लगी प्रतीत होती ह। इन देवी के मस्तक के पीछे चोटी है तथा ऊपर की ओर तीन नोकोवाला त्रिशूल का मुकुट है। इसके समक्ष एक पुरुष घुटना टके वीर आसन म बैठा उपासना कर रहा है। इसके पीछे एक बकरा गले म माला पहने खडा है। इस पुरुष के सिर पर भी उसी प्रकार का मुकुट तथा चोटी है जसी देवी के सिर पर है। इस मोहर के नीचे के भाग में सात आदमी खड हैं। इनके मस्तक पर भी एक एक नोक के मुकुट तथा एक एक चोटी है, जो नीचे तक लटक रही है। ये सातो मनुष्य लम्बा कुरता पहिन दिखाये गये ह जसा मुसलमान सन्यासी पहिनते हैं और जिन्हे अलफी कहते हैं। इन मनुष्यो तथा उपासक के सिर पर के आभूषणो से यह दिखाने का प्रयत्न किया गया है कि य सब उसी देवी के भक्त ह, जसे गिलगमिश तथा अकाडकी स्त्रियो के केशविन्यास द्वारा मेसोपोटामियाँ में दिखाने का प्रयत्न कलाकार ने किया है[६]। भारत मे उपासना का यह दृश्य कला में हम सवप्रथम यहा मिलता है। इधर बहुत कम लोगो का ध्यान गया है। आज लक्ष्मी पूजन के अवसर पर जो भीत पर चित्रकारी की जाती है इसमे भी एक राजा तथा उनके सात लडके बनाय जाते ह। इस सात की सख्या का क्या अभिप्राय है, यह नहीं कहा जा सकता। सिन्धु घाटी की इस मुहर पर भी सात ही आदमी ह। सम्भवत यह कल्पना तो दूरारूढ होगी कि लक्ष्मी का सम्बन्ध समुद्र से है और समुद्रा की सख्या साधारणत सात ही मानी जाती रही है। बकरे की बलि आज भी लक्ष्मी को कही-कही दी जाती है इस कारण यह सोचना अनुचित नही है कि यहा भी बकरा बलिप्रदान के हेतु ही माला पहनाकर खडा किया गया है। क्या यह लक्ष्मी की मूर्ति का प्राचीन स्वरूप हो सकता है ? ऐसा भाव अनायास हृदय मे उठने लगता है। यहा पद्मालया के रूप में देवी को प्रदर्शित किया गया है।

---

१ वत्स—एक्सकेवेशन एट हडप्पा—प्लेट—१०० सं० ६५६।

२ माके—फरदर एक्सकेवेशन—इत्यादि—प्लेट १०३ स० १५।

३ वत्स—उपर्युक्त प्लेट २ स० १ ए।

४ फ्राक फोट—दी इण्डस सिविलीजशन दी नियर ईस्ट—प्लट—१ आनुएल बिबल्योग्राफी आफ इण्डियन आर्कओलाजी—१९३६, वत्स—एक्सकेवशन एट हडप्पा—प्लेट ६३, स० ३१६।

५ माके—उपर्युक्त—प्लेट ९४, स० ४३०।

६ प्रजीलुस्की, जे—ला ग्राण्ड डी एस, पृष्ठ १००।

इसी प्रकार की एक और भी मोहर यहा से प्राप्त हुई है[१]। इस मोहर में बायीं ओर दो कमलनालो के बीच म एक देवी दोना हाथ नीचे किये हुए समभाव में खडी ह (फलक १ आकृति ख–२)। इनके मस्तक पर एक त्रिकोण मकुट बना है परन्तु इस मुकुट का आकार पहलेवाले त्रिकोण मकुट से भिन्न है जो पहिले के मोहर में देवी पहन ह। पहलेवाली मोहर नीचे की सतह की है तथा दूसरी ऊपर की सतह से प्राप्त हुई है। इस कारण ऐसा ज्ञात होता है कि पीछे चलकर पहिलेवाले त्रिकोण मकुट न यह रूप धारण किया हो। यहाँ का बकरा भी माला पहिने हुए देवी के सामन है। इसके सीग बड बडे ह जसे पहाडी बकरो की होती ह। इस बकरे के पीछे एक उपासक दोनो हाथ फलाये हुए दोनो घुटनो को पथ्वी पर टके हुए बठा हाथ जोड रहा है। इसके मस्तक पर भी उन्ही देवी के मुकुट के आकार का मुकुट है। उस उपासक की पीठ की ओर एक चौकी रखी है जिस पर कदाचित कुछ भोज्य पदाथ रखा है। देवी तथा उपासक दोनो के मस्तको के पीछे चोटियाँ लटक रही ह जिससे ऐसा ज्ञात होता है कि देवी के उपासक न अपना रूप देवी की भाँति बना रखा है जसा पहिले वाली मोहर के उपासक के विषय मे लिखा जा चका है। इस मोहर के दूसरे पहल पर[२] गदहे की आकृति का एक पशु है जिसके समक्ष एक नाद रखी है इसके पीछ मनुष्य है तथा सिन्धु सभ्यता की लिपि के कुछ अक्षर अथवा चिह्न बन ह। इनम एक चिह्न आरे की भाँति का वसा ही है जैसा एक हाथी के मोहर पर बना है (फलक १ आकृति-ग)। इसी मोहर के तीसरे पहल पर दक्षिण की ओर एक हाथी है (आकृति ख–१) जिसके पीछे एक कुत्ता है। इस मोहर में देवी हाथी तथा स्वस्तिक सभी ह इस कारण इस मोहर से हम यह निष्कष अवश्य निकाल सकते ह कि इस मोहनजोदडो की देवी का सम्बन्ध पद्म से हाथी से तथा बकरे से था तथा इनका चिह्न स्वस्तिक था। इन देविया को माके ने वक्ष का देवता कहा है[५] परन्तु हम तो यहा एक ऐसी मोहर प्राप्त हुई है जिसमे पेड को माला चढायी जा रही है[६] जहा पेड का पूजन होता हो वहाँ उसके देवता की भी पूजा की बात कुछ जमती नही। कुछ इन्ही से मिलती जुलती हडप्पा की भी एक मोहर है (आकृति–झ) जिसमें एक देवी एक कोठरी में दिखायी गयी है जिसके ऊपर तथा बगल मे कमल की कलिया बनी हुई ह। ये देवी भी उसी मोहनजोदडो की देवी की भाँति दोनो हाथ नीचे किये हुए खडी हैं। इनके मस्तक पर भी एक त्रिको मुकुट तथा चोटी है। इनके समक्ष भी एक उपासक हाथ जोड बठा है तथा उसके पीछ एक बकरा बठा है जिसके बड-बड सीग ह। इस मोहर के दूसरे पहल पर सिन्धु घाटी लिपि के कुछ अक्षर या चिह्न बने हुए ह।

दूसरी मोहर जो हडप्पा स प्राप्त हुई है उसम एक दवी की मूर्ति बीच में है जिनके दोनो ओर कमलनाल कमल की कलिया सहित दिखाय गय हं (आकृति–ञ)। इसम कोई उपासक अकित नही किया गया है। इन देवी के मस्तक पर भी एक त्रिकोण मुकुट है परन्तु यह मोहनजोदडो की दोनो देवियो के मुकुटो से भिन्न ह। इस मुकुट के दोनो बगल के सिरे नीचे की ओर गिरे हुए है। जहा मोहनजोदडोवाला मुकुट जो दूसरी मोहर पर है (आकृति–ख २) इस मुकुट के दोनो बगल के सिरे मेढ़ के सीग की भाति मुडे हुए ह। इस हडप्पा

१ माके–फरदर एक्सकेवेशन—प्लेट ८२ स० १ सी
२ माके—फरदर एक्सकेवेशन—प्लेट ८२ स० १ बा०।
३ माके—फरदर एक्सकेवेशन—प्लेट १०२ स० १५।
४ माके—फरदर एक्सकेवेशन—प्लेट ८२ स० १ ए०।
५ माके—फरदर एक्सकेवेशन—खण्ड १।
६ माके—फरदर एक्सकेवेशन—प्लट ९० स० २४ ए०।
७ वत्स—एक्सकेवेशन एट हडप्पा—प्लट ९२, स० ३१६।

की मोहर के दूसरे पहल पर सिन्ध घाटी के कुछ अक्षर अथवा चिह्न बने हुए हैं[१]। इनमें दो चिह्न ऐसे हैं जो स्वस्तिकवाले त्रिकोण मोहर पर भी प्राप्त होते हैं (आकृति–त) तीसरा चिह्न या अक्षर भिन्न है। इसी प्रकार की और एक मोहर हडप्पा में प्राप्त हुई है। इसमें देवी एक कठघरे में खडी दिखायी गयी है जैसी आज के मन्दिरों में व्यवस्था है तथा इनके समक्ष भी कोई उपासक नहीं है (आकृति–थ) इन मोहरों को देखने से ऐसा अनुमान होता है कि किसी ऐसी देवी का पूजन मोहनजोदडो तथा हडप्पा में होता था जिनका सम्बन्ध कमल से था। व्यापारियों को किसी ऐसी देवी की आवश्यकता भी थी जो उन्हें स्थल मार्ग में पशुओं और डाकुओं से तथा जल के मार्ग में तूफान तथा जल जन्तुओं से त्राण दे सकें क्योंकि इनका व्यापार तो सुदूर सुमेर एलाम ईरान सीरिया इत्यादि देशों में होता था। मोहरों पर की देवी इन्हीं व्यापारियों की ही अधिष्ठात्री ज्ञात होती है।

सिन्ध घाटी सभ्यता के नगरों में शंख तथा शंख की बनी चूडियां इत्यादि प्रचुर संख्या में प्राप्त हुई हैं[२]। शंख से लक्ष्मी का सम्बन्ध अभी तक चला आता है तथा आज भी बंगाल में स्त्रियां सौभाग्यसूचक शंख की चूडी पहनती हैं सौभाग्यवती लडकियों को 'लख्खिमेय' भी कहते हैं। शंख कभी कभी लक्ष्मी के हाथ में भी प्राप्त होता है[३]। इस कारण यह अनुमान करना कि शंख भी इन देवी से सम्बन्धित था कुछ अनुचित न होगा। शंख और पद्म दोनों ही जल से उत्पन्न होते हैं तथा दोनों ही कुबेर की निधियों में हैं।

मोहनजोदडो की ऊपरी सतह से कुछ ऐसी मृण्मूर्तियां प्राप्त हुई हैं[४] जिनके मस्तक के गहने के साथ एक दिउली कनपटी के पास बनी है। इनमें अब भी काजल की कालिख लगी है जिससे ऐसा ज्ञात होता है कि ये दिउलियाँ दीपक की भाँति व्यवहार में आयी थीं। आज दीपावली के अवसर पर मृण्मूर्तियाँ ऐसी बनती हैं जो हाथ में दीपक लिये हुए रहती हैं। इन्हें पढे लिखे लोग दीपलक्ष्मी और अनपढ ग्वालिन कहते हैं तथा इनके हाथ की दिउली में दीपक जलाया जाता है और इनको लक्ष्मी के समक्ष रखा जाता है। इस कारण ऐसा ज्ञात होता है कि इस प्रकार की मूर्तियां देवीपूजन के हेतु सिन्धु घाटी में भी व्यवहार में आती थीं।

इस प्रकार बकरे की बलि किसी मूर्ति के समक्ष उपस्थित करना तथा पूजन के हेतु दीपक जलाना अथवा शंख फूंकना या धान का लावा चढाना इत्यादि वैदिक आर्यों के धर्म से बिलकुल विपरीत था। इनके यहां मूर्तियों के पूजन के स्थान पर यज्ञ होता था तथा देवताओं को प्रसन्न करने के हेतु घृत तथा यव इत्यादि की आहुति दी जाती थी। पुरोडाश यव के आटे का बनता था धान का नहीं तथा आर्य लिंगपूजकों को पतित समझते थे। यक्षों और गन्धर्वों को ये पहिले देवयोनि में नहीं मानते थे।

विद्वानों का मत है कि भारत के आदिनिवासी जगन्माता को योनि के रूप में तथा पुरुष को लिंग के

---

१ वत्स—एक्सकवेशन एट हडप्पा—प्लेट ९३, सं० ३१८।

२ वत्स—एक्सकवेशन एट हडप्पा—प्लेट १००, सं० ६५६।

३ माके—फरदर एक्सकवेशन—सं० १ पृ० ६३९ तथा आगे।

४ वत्स—उपर्युक्त प्लेट—८१–१, २, ३, ४, ५, ६ इत्यादि।

५ माके—उपर्युक्त प्लेट १५१ सं० ४८, ५०।

६ विष्णुपुराण—३, ८२, ७।

७ मार्शल—मोहनजोदडो प्लेट—९४, सं० १ माके—उपर्युक्त पृ० २६०, प्लेट ७३ सं० ४ प्लेट—७५, २१, २३।

८ पिग्गट—प्री हिस्टारिक इण्डिया—पृ० २६१।

रूप म और नागो यक्षो तथा यक्षिणियो को मूतरूप में पूजते थ । पूजन के हेतु इन देवी देवताओ का आय धम म प्रवश तथा इनकी पूजनविधि का हिन्दू धम में समावेश विजित जातियो का आर्यों पर सास्कृतिक विजय का सूचक है । बहुत दिनो तक आर्यों न अपन यज्ञ कम की विधि को विशुद्ध रखने का प्रयत्न किया होगा[३] लेकिन अ त म इन्ह आदिवासियो के पूजन तथा इनके देवताओ को अपनाना पडा । फिर भी आर्यों के यज्ञो में इन आदिवासियो के देवी देवताओ क मूत रूप को स्थान नही प्राप्त हुआ । आज तो हम यह कहने लग ह कि ये सब हमार आर्यो के देवी देवता ह तथा इनके मन्दिरो में अनार्यों का प्रवेश निषिद्ध है । इनका षोडशोपचार पूजन भी हम वदिक मन्त्रो से करन लग ह ।

हमारी लक्ष्मी भी कदाचित उपयुक्त मोहरो पर भारत के आदिवासियो की देवी थी, जो अब आय देवी लक्ष्मी के रूप म हमारे समक्ष उपस्थित ह तथा जिनकी स्तुति हम आज ऋग्वेद के श्रीसूक्त से करते है । इन देवी का सम्बन्ध कमल स्वस्तिक तथा गज से बहुत प्राचीन था तथा सम्भवत य यक्षिणी के रूप में सिन्धु घाटी की सभ्यता म पूजी जाती थी और पीछे चल कर इनका लक्ष्मी का रूप हो गया ।

❋

---

१ कुमार स्वामी—हिस्ट्री आफ इण्डियन एण्ड इण्डोनेशियन आर्ट—पृ० ५ ।
२ कुमार स्वामी—यक्षाज ख० १—पृ० ३ ।
३ यक्ष पूजन म सुगन्धित द्रव्य चन्दन, इत्र, पुष्प धूप, दीप, फल, मादक द्रव्य इत्यादि चढ़ाये जाते थे—बृहत कथा श्लोक सग्रह (१३–३, ५) । इसी प्रकार आज भी षोडशोपचार पूजन मे देवताओ को चढ़ाया जाता है ।
४ जसे धूप चढाते समय हम वदिक मन्त्र 'धूरसि धरवन्तम इत्यादि वदिक मन्त्र का पाठ करते ह, जिससे धूप से कोई सम्बन्ध नहीं है ।

३

वैदिक युग मे लक्ष्मी का स्वरूप

लक्ष्मी तथा श्री शब्द दोनो हम ऋग्वेद मे मिलते ह परन्तु निराकार सज्ञा के रूप म अथवा अमूत विशपण की भाति। उपमान द्वारा भी इन श दा से किमी स्वरूप विशप की अनुभूति नही होती। श्री शब्द तेज सौन्दय शाभा कान्ति विभूति अथवा सम्पदा कीति तृप्तिकारक के अर्थों में प्रयुक्त हुआ है। श्री श द ऋग्वेद म श्री (९ १०९ १५) धृत श्री (१० ६५ २) दात श्री' (१० ९१ २) श्रिये (२ २३ १८ ४ ५ १५ ४ १० ४ २३ ६ ५ १० ३ ५ ६० ४ ९ १०४ १, १० ४५ ८ १० ७६ २ १० ९१ ? १० ९५ ६ १० १०५ १०) श्रिया (१ १६६ १० ३ १ ५ ७ १५ ५ १० ९१ ५) श्रिय (१ १७९ १ ८ २० ७) सुश्रिय (३ ३ ५ ९ ४३ ४), श्रेया (५ ६० ४) श्राया (५ ५३ ४) श्रया (६ ४१ ४) श्रिया (१ १८८ ६ २ ८ ३ ५ ३ ४) श्रीगा (१० ४५ ५) श्रिय (२ १ १२ ९ १६ ६) अभिश्रिय (१० ६६ ८) श्रियसे (५ ५९ ३) अश्रीर (८ २ २०) अश्रीरा' (१० ८५ ३०) श्रियरधि (५ ६१ १२) श्रीणीत (९ ४६ ४) श्रीणाना (९ ६५ २६) श्रीणन (९ १०९ १७) रूपा म प्राप्त होता है। इसके विभिन्न अथ उपयुक्त ज्ञात होते ह। श्र। श द से बना श्रेणि भी प्राप्त होता है (१० ९५ ६) जिसका अथ यहा पक्ति (सेना की सुसस्कृत पक्ति) ज्ञात होता है। दूसरा श द श्रेष्ठ' मिलता हे जिसका अथ होता है सबसे उच्च (१० १७९ ३)। एसा अनुमान होता है कि श्री श द का प्राचीन अथ तेज छटा, कान्ति था जो व्यवहार म आने पर उन विभूतियो का भी द्योतक हो गया जिनके द्वारा तेज इत्यादि दश्य होता है जसे "सम्पदा इत्यादि।

लक्ष्मी श द यहा सज्ञा के रूप में तो अवश्य आया है परन्तु प्रयुक्त सामान्य अथ म ही हुआ है। धीराभद्रषा लक्ष्मीर्निहिताधि वाचि इत्यादि मत्र मे लक्ष्मी का वाणी म निहित होना बताया गया है। इस

---

१ ऋक्—७, १५, ५।

२ ऋक—१, १६६ १०, ५, ३, ३ ५, ६०, ४, ५, ६१ १२, ९, ४३ ५, ९, १०९ १५।

३ ऋक—तनुनाम श्रिय–१, १७९, १, अश्रार– ८, २, २० १०, ८५, ३० १०, ९१, २।

४ ऋक—२, १, १२, ४ १०, ५, ४, २३ ६, ५, ३ ४, ५९, ३ १०, ६६ ८।

५ ऋक—१ १८८ ६, १०, १, ५, १०, ४५ ८, १०, ६५, २ १०, ७६ २, १०, ९१, ५।

६ ऋक—२ ८, ३ २, २३, १८ ३ १, ५, ३, ३ ५, ४, ५, १५, ७, १५, ५, ८, २० ७, ९, १६, ६, ९, ६२ १९, ९, १०४, १, राज्य श्रा–१० ९५ ३, १०, ९५, ६ १०, १०५, १०।

७ ऋक—५, ५३ ४, ६, ४१ ४, १०, ४५, ५।

८ ऋक—९, ४६, ४, ९, ६५, २६।

९ ऋक—१० ७१ २।

वाक्य से लक्ष्मी का स्वरूप तो प्रकट होता नही, परन्तु यह अवश्य ज्ञात होना है कि यह श द ऐश्वय का द्योतक था।

ऋग्वेद म धन के कोई विशष देवता हो एसा भी नात नही होता क्योकि ऊषा अश्विनी कुमारो[२], इन्द्र[३] तथा अग्नि इत्यादि प्राय सभी देवताओ से प्राथनाए की गई ह कि वे धन द। देवियाँ भी हमे ऋग्वेद म प्राप्त होती ह परन्तु उनम भी लक्ष्मी का नाम नही आता जैसे अदिति (३ ४ ११) सिनिवाली (२ ३२, ८) इला (३ ४, ८) सरस्वती (२ ३२ ८) इन्द्राणी (२ ३२ ८) राका (२ ३२ ४) वरुणानी, (२ ३२, ८)। इद्राणी का तो शची नाम भी प्राप्त होता है (४ ३० १७)। देवपत्नियो म इद्राणी अग्नानी अश्वनानी रोदसी वरुणानी इत्यादि मिलती हैं (५ ४६ ८) परन्तु लक्ष्मी या श्री विष्णु की पत्नी के रूप म नही मिलती। विष्णु की प्राथना है परन्तु उनकी पत्नी की नही (५ ४६ ८)।

श्री श्रेयस श्रष्ठ श द वेदो तथा अवस्ता दोनो म पाए जाते ह। अवस्ता में इस श द का अथ श्रेष्ठत्व तथा महत्व ओल्डनवग न किया है। पीछ चलकर श्री को सुन्दरता का द्योतक बताया है। श्रीर' शब्द द्वारा उस स्त्री की सु दरता का वणन किया गया हे जिसका शरीर अदवी सूरा अनाहिता धारण करती है इत्यादि[५]।

ऋग्वेद में अग्नि वश्वानर (३ २ १५, ४ १ २० ४ २ २०) का धन का स्वामी कहा है[६]। अग्नि को धन का दाता कहा है श्रीणाम उदारा धरूणो रयीणाम्। पूपण श्री के अधिष्ठाता कहे गय ह[८] अश्विनो को श्रिय पक्षश्च कहा है[९] सोम को भी श्री का अधिष्ठाता कहा है।[१०]

जिन शब्दो में श्री सूक्त में लक्ष्मी की स्तुति की गई है य ऋग्वेद के खिल स्वरूप म प्राप्त होते ह जसे –

हिरण्यवर्णा हरिणी सुवण रजतस्रजम।
च द्रा हिरण्मया लक्ष्मी जातवेदो म आवह॥
त म म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम।
यस्या हिरण्य बिन्देय गामश्व पुरुषानहम्॥

उन्ही में प्राय अपानपात देवता की भी–

हिरण्यरूप स हिरण्यसन्दगपानपात्सेदु हिरण्यवण।
हिरण्ययात्परि योनेर्निषद्या हिरण्यदा ददत्यन्नमस्म।

(ऋक् २ ३५ १०)

---

१ ऋक – ७ ७५ २।
२ ऋक – ७, ७५ ६।
३ ऋक् – १० ४७, १८।
४ ऋक – ४, ५ १२।
५ ओल्डनबग – वदिक वर्डस फार ब्यूटीफुल एण्ड ब्यूटी इत्यादि, रूपम स० ३२, अक्तूबर १९२७ पृ० ९८, ९९।
६ गोण्डा जे० – एस्पेक्टस आफ विष्णुइज्म प० १७४।
७ ऋग्वेद – १०, ४५, ५।
८ ऋग्वेद – ६, ४८, १९।
९ ऋक् – १, १३९, ३।
१० ऋक् – ९, १६, ६, ९, ६२, १९।

क्या इनका कुछ सम्बन्ध लक्ष्मी से था ? इनका सम्बन्ध जल से तो था (२ ३५ ३) जैसे लक्ष्मी का था (श्री सूक्त—३) जिन्हे आर्द्रा्ं कहा है।[1] ऋग्वेद म यह भी कहा गया है कि दप रहित नवयवतिया अपानपात देवता को अलकृत करती ह (२, ३५ ४) जसे श्री महालक्ष्मी व्रत मे युवतिया श्री लक्ष्मी की मूर्ति नाकर उनका अलकृत करती ह।[2] कदाचित ये भी आर्यों के देवता अनार्यो की लक्ष्मी के सदृश्य धनप्रदाता मान जाते रहे हो।

यजुर्वेद म 'श्री तथा 'लक्ष्मी परमपुरुष की सपत्नियो के रूप म'[3] प्रकाश में आती है 'श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्र पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् (३१ २२)। इस मत्र से एसा ज्ञात होता है कि इस काल तक श्री का अथ ब्रह्मश्री तथा लक्ष्मी का अथ राज्यश्री हो चुका था, नही तो इनका दो भिन्न रूपो मे इस प्रकार वणन करन की आवश्यकता ही न पडती।

एक दूसरे मत्र में श्री से मस्तक म आविभूत होने की प्राथना की गयी ह—

शिरो म श्रीयशो मुख त्विष कशाश्च श्मश्रूणि।
राजा मे प्राणो अमत सम्राट चक्षुर्विराट श्रोत्रम ॥

इससे भी यही प्रतीत होता है कि श्री का अथ ब्रह्मश्री अथवा ज्ञान का तेज मान लिया गया था। श्री तथा रयी दोनो को एक और मत्र मे अलग किया है। विष्णु पत्नी यहा अदिति मिलती है जो ऋग्वद म प्रकृति की द्योतक है। श्री तथा रयी का निम्नाकित मत्र म अलग अलग किया हे जिससे एसा ज्ञात होता है कि श्री का धन से कोई सम्बन्ध न था। (रयी शब्द धन का द्योतक है।)

श्रीणामुदारो धरूणा रयीणाम् मनीषाणाम् प्रापण सोमगोपा

इस मत्र का देवता अग्नि है उनसे यह निवेदन है कि—श्रीणामुदारो अथात ज्ञानी म उदार, धरूणो रयीणामु—धन को धारण करनेवाल मनीषाणाम प्रापण —मन की अभिलाषाओ को देनेवाल सामगोप — सोम के रक्षक हो। इस मत्र से यह प्रतीत होता है कि श्री का अर्थ ब्रह्मज्ञान के तेज के रूप म इस काल तक रूढ़ हो चुका था।

परन्तु तत्तिरीय सहिता की वखानस शाखा के स्मात सूत्र में धन की प्राप्ति के हेतु चत्र की पूर्णिमा को अग्नि के पश्चिम की ओर धान अथवा कुछ लोगो के मतानुसार मूग और घत की आहुति देन का आदश प्राप्त होता है। (स्मात सूत्र ४ ८, मत्र जिनसे आहुति देना है तत्तिरीय सहिता ५ ७, २ तथा आग)।

---

१ श्री सूक्त — ३ १२ तथा १३।
२ श्री महालक्ष्मी व्रत — ५६।
३ विष्णु की सपत्नी कहा है — वाजसनेयि १२, ५।
४ वाजसनेयि — ३१, २२।
५ वही — २०, ५।
६ वही — १२, २२।
७ तैत्तिरीय सहिता — ७, ५, १४, वाजसनेयि — २६, ६०।
८ ऋग्वेद — १, ८६, १०।
९ ऋग्वेद — १०, ४५, ५।

एक और स्थान पर सोम का श्रीणत पश्मय कहा है। यह मत्र गाहपत्य अग्निकुण्ड की इष्टिका लगाने के समय व्यवहार म आता है[1]। इसी प्रकार श्री श द और भी स्थलो पर मिलता है परन्तु उसका अथ तज ही निकलता है। इस काल म श्री तथा लक्ष्मी श दो के अर्थो म भद निश्चित हो चुका था। दोना का एक स्थान पर हाना बडा सौभाग्यसूचक था। य दोना केवल परम पुरुष की ही सपत्नियो के रूप म वर्णित ह।

सामवेद म भी श्री श द मिलता है[3] परन्तु सामवेद म प्राय मत्र तो ऋ वेद के ही ह इस कारण उन्ही अर्थों म श्री' श द का यवहार यहाँ भी हुआ है।

अथववेद म श्री' श द भूति सम्पत्ति वद्धि, ऐश्वय के अथ म प्रयु त हुआ है। जसे पथ्वी की प्राथना करते हुए यह कहा गया है कि 'मुझ एश्वय से सुप्रतिष्ठित करो। बहस्पति जब देवताओ को असुरो पर विजय पान के हतु यत्र बाधते ह ता उस मत्र म भी कहते ह कि देवताओ को श्री प्राप्त हो अर्थात भौतिक एश्वय प्राप्त हो। श्री तथा लक्ष्मी श दा के अथ म अथववेद म कोई विशेष भेद नही दष्टिगोचर होता। (१) यहाँ बकरे से लक्ष्मी का सम्ब ध स्पष्ट हमारे समक्ष आता है। यहा यह निर्देश प्राप्त होता है कि पचौदन यज्ञ म जो बकरे की बलि दता है वह अपने शत्रु की श्री को नष्ट करता है। यहाँ श्री का अथ भौतिक धन ही प्रतीत होता है। बकरा हम मोहनजोदड की मोहरो पर एक देवी के समक्ष देख चुके ह। इस मत्र म जिस जन विश्वास की वनि प्रस्फुटित होती है उससे एसा ज्ञात होता है कि लक्ष्मी को बकरे की बलि धन की प्राप्ति के हेतु पहिले दी जाती थी। अज की बलि से प्राप्त होनेवाल सुखो का वणन भी पचौदन यज्ञ के प्रकरण म मिलता है।[8]

अथववेद में विष्णुपत्नी का विवरण प्राप्त होता है। इनका विश्पत्नी से सम्ब ध भी यहा ज्ञात होता है।

विश्पत्नी अर्थात वश्यपत्नी तथा विष्णुपत्नी का सम्ब ध पीछ के साहित्य म बहुत हो जाता है क्योकि लक्ष्मी वश्या की देवता मानी जाती ह।

या विश्पत्नीद्र मसि प्रतीची सहस्रस्तुका भिष ती देवी।
विष्णो पत्नि तुभ्य राता हवीषि पतिं देवी राधसे चोदयस्व ॥[9]

लक्ष्म' श द अथववेद म चिन्ह के अथ म प्रयुक्त हुआ है तथा कणवेध के सस्कार के मत्रो में आता है।[10] कणबध के समय किसी प्रकार के चिह्न कदाचित कानो पर बनाए जाते थ। यह चिह्न स्वस्तिक के रूप का हो

१ वाजसनयि — १२, ५५।
२ वही — १२ २४, १२, १,, १२, २५, २१, ३५, २६, ७, ३६, ४।
३ सामवेद — २, १, ५ (१०१ मत्र), ६, १, ३ (४८६ मत्र)।
४ अथववेद — १२, १, ६३।
५ वही — १०, ६, २६।
६ वही — ६, ५, ३१, ११, १, १२, ११, १, २१।
७ अथववेद — ६, ५, ३१।
८ अथववेद — ६, ५, १० – १।
९ अथववेद — ७, ४८, ३। इसा के साथ ७, ४८, २ को देखन से ऐसा ज्ञात होता है कि विश्पत्नी से सिनीवाली का कुछ सम्ब ध था।
१० अथर्ववेद — ६, १४१, २–३।

सकता है परन्तु लक्ष्मी शब्द किसी देवी का भी उस समय द्योतक था उनको पापी इत्यादि शब्द से अथर्ववेद मे सम्बोधित किया है तथा लोहा गम करके उसे दागने को कहा है ।

'प्रपतेत पापि लक्ष्मि नश्यत प्रामुत पत
अयस्मयेनाकेन द्विपते त्वा सजामसि । [1]

अथर्ववेद के इसके आगे के मन्त्रो म हम दो प्रकार की लक्ष्मी मिलती है एक पापी और एक अच्छी । कदाचित् अच्छी लक्ष्मी आर्यों की श्री देवी थी और पापी अनार्यों की । इन्ही का पुराणो के समय मे अलक्ष्मी और लक्ष्मी नाम हो गया होगा । एसा अनुमान होता है कि आदिवासियो की इस देवी को आर्य अपने घर म घुसने से निषेध करते थ परन्तु पीछे चलकर इनको इस देवी को अपना लेना पडा जसा हम यजुर्वेद के श्रीश्चते लक्ष्मी सपत्न्या मत्र[2] और श्री सूक्त के मत्रो से जान पडता है । लक्ष्मी को अथर्ववेद म हिरण्यहस्त भी कहा है ।[3]

श्री शब्द अथर्ववेद म भी ऋग्वेद की भांति किसी देवी विशेष का द्योतक नही ज्ञात होता । श्री शब्द सम्पत्ति के अर्थ में कई स्थानो पर प्रयुक्त हुआ है तथा तेज के[4] और सुन्दरता के अर्थ म भी परन्तु किसी देवी के अर्थ में नही ।

ऐसा ज्ञात होता है कि इस सहिता के समय तक कदाचित श्री शब्द का अर्थ ऋग्वेद काल से कुछ कम व्यापक हो चला था परन्तु लक्ष्मी या श्री का कोई विशेष रूप नही बन पाया था ।

श्री सूक्त जो ऋग्वेद के पाँचवे मडल के परिशिष्ट के रूप में हम प्राप्त होता है विद्वानों के मतानुसार यह परवर्ती काल का है । इसमें श्री तथा लक्ष्मी शब्द एक दूसरे के पर्यायवाची मिलते ह । कदाचित् उस समय तक लक्ष्मी को आर्यों न अपनाना प्रारम्भ कर दिया था । यहा हमे श्री अथवा लक्ष्मी एक देवी के रूप म मिलती है (श्रिय देवीम) यह देवी कैसी है (हिरण्यवर्णाम)[6] सुवर्ण के रगवाली है तथा (सुवर्ण रजतस्रजम) सुवर्ण तथा चाँदी का स्रज धारण किय हुए है । स्रज' शब्द ऋग्वेद म कई स्थानो पर आया है[9] अश्वनी को पुष्करस्रज कहा है ।[10] इस शब्द का अर्थ मस्तक पर बधने की माला ही ज्ञात होता है । इस प्रकार की सुवर्ण तथा रजत के लम्ब दानो की बनी हुई जूतिया आज भी स्त्रियाँ मस्तक पर आश्विन कृष्ण अष्टमी को पूजा करके पहिनती ह । (जूतिया एक प्रकार की माला होती है जिसम यव के आकार के लम्ब मनके चादी और सोन के लग रहते ह)

गले म पद्म की माला है (पद्मामालिनीम) इनका मुख चन्द्रमा की भाति गोल है (चन्द्राम्) आँखें हिरनी की भाँति ह (हरिणीम) तथा सुवर्ण के आभूषणो से सुसज्जित है (हिरण्यमयीम्) सद्य स्नाता होन

---

१ अथर्ववेद –– ७, ११५, १–४ ।
२ वाजसनेयि –– ३१–२२ ।
३ अथर्ववेद –– ७, ११५, २ ।
४ अथर्ववेद –– ६, ७३, १, ६, ५, ३१, ६, ६, ६,, १०, ६, २६, १२, २, ४५
५ अथर्ववेद –– १२, ५, ७, १३, १, ६, २०, १०, २ ।
६ अथर्ववेद –– ८, २, १४, २०, १४३, २ ।
७ श्रीसूक्त –– ३ ।
८ श्रीसूक्त –– १ ।
९ ऋग्वेद –– ४, २८, ६, ८, ४८, १५ ।
१० ऋग्वेद –– १०, ८४, ३ ।

के कारण शरीर से जल टपक रहा है (आर्द्राम) मुख पर संतोष के भाव ह (तृप्ताम), उनका प्रभा मण्डल चन्द्रमा की भाति गोल है उसम से किरणें निकल रही हैं (चन्द्राम प्रभासाम) पद्म पर स्थित है (पद्मस्थिताम) एक हाथ म पद्म है (पद्मिनमिम) दूसरे म विल्व फल यह रथारूढ है जो सुवण का है (हिरण्यप्रकाराम) जिसके आग घोडे जुते हुए ह[२] जिनके दोना ओर हाथी चिग्घाड रहे ह (हस्तिनादप्रमोदिनीम्)।

इस सूक्त म मणिभद्र यक्ष का लक्ष्मी से सम्बध ज्ञात होता है (मणिनासह) तथा श्रीमां देवी से भी। श्रीमां देवी या सिरिमा देवता की मूर्ति भारहुत म प्राप्त हुई है। भारहुत की सिरिमा देवता भी श्री देवी की भाति बहुत से आभूषणा से सुसज्जित है[३] इनके मस्तक के ऊपर एक प्रभाम डल बना हुआ है जिस पर कमलदल अकित है। इस देवता के दक्षिण कर में कमल था जो अब टूट गया है ऋद्धि से भी जो कुबेर की स्त्री कही गई है श्री का कुछ सम्बध होना चाहिए (कीर्तिम ऋद्धिम ददातु मे)।[५] इनकी प्रसन्नता गध के अपण से प्राप्त होती है (गधद्वारा) इस कारण इन पर पुष्प चदन अगर इत्यादि सुगधित द्रव्य चढाए जाते ह जसे यक्षपूजन म यवहृत होते ह। श्रीसूक्त के अनुसार इनके ऋषि क म चिक्लीत श्रीत तथा आनद थ। कदाचित यही इनकी उपासना के सजनकर्ता थे इसी कारण इनका यहा स्मरण किया गया है। इस सूक्त के पढने से एसा भास होता है जैसे कोई वणिक अपने व्यापार के हतु जाते हुए अपने देवता से धन इत्यादि देन की प्राथना कर रहा हो तथा उनसे अपन को सब प्रकार की हानि तथा कष्ट से बचान के हतु निवेदन करता हो। क्षुत्पिपासामला ज्येष्ठामलक्ष्मी नाशयाम्यहम। अभूतिमसमृद्धिञ्चसर्वान्निणुद मे गृहात।' (श्रीसूक्त ८)।

अथववेद सहिता तक कुबर उत्तर के दिग्पाल के रूप में नही प्रतिष्ठित हुए थे यहाँ तो उत्तर के दिग्पाल सोम मिलते ह। कदाचित इस समय तक कुबेर को देवता के रूप में आर्यों न नही अपनाया था। इस श्रीसूक्त में देवसख का अथ कुबेर किया जाता है और ऐसा अनुमान होता है कि इस काल तक भी इनको देवता की पदवी नहीं प्राप्त हुई थी।

शख को अथर्ववेद म हिरण्यजा तथा समुद्र से उत्पन्न आयुष्य प्रदान करनेवाला बताया गया है[७] परन्तु इसका सम्बध लक्ष्मी से इस काल तक नही जोडा गया था। श्रीसूक्त में भी कही शख शब्द नही आया है। पीछ विष्णुधर्मोत्तर पुराण में शख को हम लक्ष्मी के एक हाथ में पाते ह।[८]

विष्णुपत्नी अथववेद म भी मिलती ह[९] परन्तु इनका सम्बध लक्ष्मी से नही मिलता। विष्णुपत्नी का विश्पत्नी से सम्बध मिलता है तथा विश्पत्नी का सिनीवली से। सिनीवली को उत्तम अगोवाली सुभगा

---

१ श्रीसूक्त – ६, विष्णुधर्मोत्तर पुराण – ३, ८२, ७।

२ श्रीसूक्त – २ (अश्वपूर्वाम रथमध्याम)।

३ सी० शिवराम मूर्ति -- ए गाइड टू दी आर्केआलाजिकल गलेरीज आफ दी इण्डियन म्यूजियम, फलक १ – डी०।

४ महाभारत — ८, ११७, ६।

५ श्रीसूक्त — ७।

६ अथववेद — ३, २७, १–६, श्रीसूक्त — ७।

७ अथववेद — ४, १०, १–४।

८ विष्णुधर्मोत्तर — ३, ८२, ७।

९ अथर्ववेद — ७, ४६, ३।

पथुजघना कहा है।[१] इनको एक मत्र मे विष्णुपत्नी भी कहा गया है।[२] गाडा का मत है कि सिनीवली शब्द भूमि का द्योतक है जो आगे चलकर भूमि देवी के रूप म हमे विष्णु की एक पत्नी के स्वरूप में मिलती है।

अमावस्या की तिथि लक्ष्मीपूजन के निमित्त क्यो चुनी गई है इसका कुछ सकेत हमे अथववेद में मिलता है। अमावस्या के दिन इन्द्र इत्यादि देवता एक स्थान पर एकत्रित होते हैं, इस कारण अमावस्या की तिथि धन की देनवाली मानी गयी है। कदाचित इसीलिय लक्ष्मी का पूजन कार्तिक की अमावस्या को होता है।

शतपथ ब्राह्मण मे श्री एक परम सुन्दरी देवी के रूप मे हमारे समक्ष उपस्थित होती है। प्रजापति अपन तप के द्वारा इनको प्रकट करते ह जैसे यूनानिया के देवता जीयस अपन मस्तक से पालस अथनी को प्रकट करते हैं तथा उनसे सम्भाषण करते ह[६]। इनके स्वरूप को देखकर देवता माहित हो जाते हैं और उनको मार डालना चाहते ह[७] परन्तु प्रजापति के कहन पर उन्ह छोड देते ह और उनकी सब विभूतियाँ ले लेते ह जैसे भोजन, राज्य प्रताप धन, अधिकार इत्यादि। ये विभूतियाँ श्री के पास पुन देवताओ को आहुति देने पर चली जाती ह। इस प्राचीन कथा से भी यह सकेत मिलता है कि कदाचित य भारत के आदिवासिया की कोई देवी थी जिनसे आय देवताओ को आहुति दिलवान की कथा का प्रकरण बनाकर इन्हे अपन देवताओ के सग में मिला लिया गया। ये देवी सब विभूतियो की देनेवाली थीं।

शतपथ के अनुसार जिन देवताओं में श्री है वे अमर तथा योतिमय ह। जिनको श्री की प्राप्ति होती है उनम तेज ऐश्वय इत्यादि सदव बन रहते ह[८]। अश्वमेध यज्ञ के प्रकरण म अश्व का पूजन करती हुई यजमान स्त्री को श्रीस्वरूपा कहा है[९] क्योकि इस पूजन से राजा को श्री अर्थात् ऐश्वय की प्राप्ति होती है, जो दिग्विजय के पश्चात् मिलना अनिवाय है। श्री को भोज्य अर्थात् भोग्य भी कहा है[१०]। राजसूय यज्ञ के प्रकरण मे राजा जिस व्याघ्रचम के आसन पर बठता है उसे भी श्री कहा गया है[११], परन्तु यहाँ आसन को श्री कहने का तात्पर्य यह है कि राजा अपने तेज सहित उस आसन पर बैठता है इस कारण उसके उठने के पश्चात भी प्राय दशको को उस स्थान पर अपनी श्रद्धा के कारण राजा के तेज का भास होता है। श्रेष्ठ शब्द का जो श्री से बना है, अथ उत्तम, सबसे ऊचा उत्कृष्ट, नायक, मस्तक इत्यादि वेदो तथा ब्राह्मणों में मिलता है ([१२])।

---

१ अथववेद — ७, ४६, २, ऋक् — २, ३२, ७।
२ अथववेद — ५, ७, ४६।
३ गोण्डा — एस्पेक्ट्स आफ विष्णुइज्म, पृ० २२७।
४ अथववेद — ७, ७६, २।
५ अथववेद — ७, ७६, ४।
६ शतपथ ब्राह्मण — ११, ४, ३, १, ११, ४, ३, ४।
७ शतपथ — २ १, ४६।
८ शतपथ — १०, १, ४, १४।
९ शतपथ — १३, २, ६, ७।
१० शतपथ — ८, ६, २, ११।
११ शतपथ — ५, ४, २, ११।
१२ अथववेद — ४, २५, ७, ६, ९, २ इत्यादि, शतपथ — १, ६, ३, २२, १०, ३, ५, १०, १२, ८, ३, २।

शतपथ में लक्ष्म तथा लक्ष्मी दोनो शब्दो की व्याख्या स्पष्ट रूप से की गयी है। दक्षिण तऽ है कऽ उपधति तदेतग् पुण्या लक्ष्मीदक्षिणानो दध्महऽइति तस्याधस्य दक्षिणतो लक्ष्म भवति त तुण्य लक्ष्मीकऽ इत्याचक्षतऽ उत्तरत स्त्रियाऽउत्तरतऽधायत नाहि स्त्री।'[१]

राजा के आसन में श्री की धारणा जमिनि तथा ऐतरेय ब्राह्मणो में भी प्राप्त होती है[२] जसा पहले कहा जा चुका है इस कथन को दर्शक की भावना का द्योतक ही समझना चाहिए। इस सिंहासन के और भागो म प्रजापति बहस्पति, सोम वरुण इत्यादि का निवास कहा गया है[३] यह भी कल्पना इसी कारण की गयी कि राजा को सबका रक्षक तथा सर्वदेवरक्षित मानते थ। वसुओ ने आदित्य को इसी प्रकार के सिंहासन पर अभिषिक्त किया था इस कारण राजाओ को ऐसे ही सिंहासन पर अभिषिक्त करते थे। कौशीतकी उपनिषद के अनुसार ब्रह्मा के आसन को भी श्री कहा है। इस कारण भी इस उपमा के आधार पर राजा के आसन को भी श्री कहा होगा। इस पर बठन पर ही राजा शुद्ध समझा जाता था[५] तथा उसके शरीर म इद्र, चद्रमा, सूय वायु, कुबेर, वरुण तथा यम का वास समझा जाता था।[६]

एतरेय ब्राह्मण में श्री की इच्छा रखनवाले को शाखा सहित बिल्ववृक्ष का यूप बनाने का निर्देश प्राप्त होता है। बिल्वफल श्रीफल कहा जाता है[८] तथा श्रीसूक्त में बिल्वफल का श्री से सम्बध स्पष्ट है, जैसा पहल लिखा जा चुका है। जमिनी ब्राह्मण में श्री तथा अन्न शब्द एक साथ प्राप्त होते ह तथा अन्न को ही श्री तथा श्री को ही अन्न कहा है[९]। कौशीतकी उपनिषद में भी श्री तथा अन्न शब्द एक साथ ही प्राप्त होते हैं[१०]। अत ऐसा ज्ञात होता है कि श्री का सम्पदा के अथ में इस काल तक व्यवहार होने लगा था। जमिनि ब्राह्मण में एक अन्य स्थान पर यह कथा मिलती है कि असुरो से यज्ञ में भूल हुई, इस कारण उनकी श्री नष्ट हो गई[११]। यह कोई आश्चर्य का विषय नही है क्योकि उस प्रारम्भिक युग में धन तो अन्न, पशु, वस्त्र आभूषण इत्यादि ही समझे जाते थे तथा ये जिसके पास यथष्ट मात्रा में हो वही श्रेष्ठ समझा जाता था। इसी कारण श्रष्ठी शब्द उस मखिया का द्योतक था जो इन वस्तुओ का प्रचर मात्रा मे अपने यहा सग्रह कर सकता था।

बहदारण्यक उपनिषद् में उस स्त्री में भी श्री का वास बताते ह जिसने अपने अशुचि वस्त्र उतार दिय ह[१२]। इसीसे मिलती-जुलती आज्ञा अथर्ववेद में मिलती है जिसमें यह कहा गया है कि पुरुष को स्त्री का अशुचि

---

१ शतपथ — ८, ४, ४, ११।
२ जमिनि — २, २५, एतरेय — ८, १२, ३।
३ ऐतरेय ब्राह्मण — ८, १२, ३।
४ कौशीतकी — १, ५।
५ मनु — ५, ९४।
६ मनु — ५, ९६।
७ ऐतरेय — २, १, ६ तथा आगे।
८ मनु — ५, १२०, श्रीसूक्त — ६।
९ जमिनि ब्राह्मण — १, ११७।
१० कौशीतकी — १, ५।
११ जमिनि — १, १, ४, ४।
१२ बहदारण्यक उपनिषद् — ६, ४।

वस्त्र नहीं धारण करना चाहिए क्योंकि उससे उसकी श्री या शोभा नष्ट हो जाती है।[1] तत्तिरीय उपनिषद् म श्री से गौ, अन्न इत्यादि की प्राप्ति की चर्चा है[2]। महानारायण उपनिषद मे लक्ष्मी को उस पुरुष की पत्नी या विभूति कहा है जो सूय मे है। इस पुरुष को पीछे चलकर विष्णु मान लिया गया[3]। इस प्रकार कदाचित् लक्ष्मी पीछे विष्ण की पत्नी बन गयीं। इस उपनिषद मे भी इन्हें गाय धन अन्न, पान इत्यादि सवप्रदाता कहा है।

अथर्ववेदीय सीतोपनिषद् में सीता को सीता भगवती ज्ञेया मूलप्रकृति-सज्ञिता[4] कहा है तथा उनको महालक्ष्मी कहा है। यहाँ यह भी कहा है श्री देवी त्रिविध रूप कृत्वा भगवत्सकल्पानुसारेण लोक रक्षणाथ रूपम धारयति अर्थात् लक्ष्मी ने तीन रूप धारण किए तथा भगवान के सकल्प के अनुसार विविध रूप ससार के रक्षण के हेतु धारण करती है। कृष्णोपनिषद म कृष्ण और रुक्मिणी को विष्णु लक्ष्मीरूपो व्यवस्थित माना है।[6] देव्युपनिषद् म लक्ष्मी को दक्ष की दुहिता कहा है। सौभाग्यलक्ष्मी उपनिषद् मे यह कथा मिलती है कि १५ श्लोक वाले श्रीसूक्त का सुननेवाले आनन्द कदम, चिक्लीत इत्यादि ऋषि ह।[8] इससे यह ज्ञात होता है कि ये ही इनके आदिवासी प्रथम उपासक थ। इसी में श्री चक्र को लिखकर लक्ष्मी को आवाहन करन का भी आदेश मिलता है[9] श्रिय यन्त्राङ्ग दशक च विलिख्य श्रियमावाहयेत[10]। यहाँ श्री का जो स्वरूप मिलता है वह गजलक्ष्मी का है। भूयाद्भूयाद्विपद्माभयवरदकरा तप्तकान्ति स्वराभा शभ्रा भ्रामेभयुग्मद्वयकरधृतकुम्भाद्भिरासिच्यमाना। रक्तौघा बद्धमौलिर्विमलतरदुकूलातवाल वनाढ्या पद्माक्षी पद्मनाभोरसि कृतवसति पद्मागरश्री श्रिय न। अर्थात् पद्म की नाभि पर बठी हुई पद्मपत्र के समान आँखवाली पद्म हाथ मे लिये हुए शभ्र वस्त्र धारण किए हुए जिनको दो हाथी कुम्भो से स्नान करा रह ह ऐसी मूर्ति बनानी चाहिए।[1] इनकी स्तुति यहाँ यो है—

> श्रीलक्ष्मीवरदा विष्णुपत्नी वसुप्रदा हिरण्यरूपा स्वण मालिनी रजतस्रजा
> स्वणप्रभा स्वर्णप्रकारा पद्मवासिनी पद्महस्ता पद्मप्रिया मुक्तालकारा
> चन्द्रसूर्या बिल्वप्रिया ईश्वरी भुक्तिर्मुक्तिर्विभूतिऋद्धि समृद्धि कृष्टि
> पुष्टिधनदा धनेश्वरी श्रद्धा भोगिनी भोगदा सावित्री धात्री विधात्रीत्यादिव[11]

भावार्थ यह है कि वर देनेवाली श्रीलक्ष्मी जो विष्णुपत्नी ह जो वसुप्रदा ह जो हिरण्यरूपा हैं, जिनके गले में स्वण की माला है, जो चांदी की माला मस्तक पर धारण किए हुए ह जिनकी स्वण के समान प्रभा है,

---

१ अथववेद —— १४, १, २७।
२ तत्तिरीय उपनिषद — १, ४।
३ महानारायण उपनिषद।—— १, १२।
४ सीतोपनिषद् —— १४।
५ सीतोपनिषद —— १६।
६ कृष्णोपनिषद् — १६।
७ देव्युपनिषद् —— ८।
८ सौभाग्यलक्ष्म्युपनिषद —— १, ३।
९ सौभाग्य लक्ष्म्युपनिषद —— १, १९।
१० सौभाग्य —— १, २८, २९।
११ सौभाग्य —— १, ३८।

स्वण का जिनका प्रभामण्डल है पद्म में जिनका वास है जो पद्म हाथ में लिये हैं, जिन्हें पद्म प्रिय है जिनके आभूषण मोतियो के ह, च द्र तथा सूय की भाँति चमक रही है, जि हे बिल्वफल प्रिय है जो इश्वरी ह जो भुक्ति मुक्ति, विभूति ऋद्धि समद्धि पुष्टि धन की देनवाली ह जो धन की देवी ह जो श्रद्धा से पाई जाती है तथा जो सवभोगो को देनवाली सावित्रा धात्री विधात्रा की भाति ह उनको नमस्कार है ।

गोडा का मत है कि अवस्ता म श्री शब्द समृद्धि का द्योतक है सौन्दय का नही क्योकि उवरा शब्द अवस्ता साहित्य मे उस वस्तु का द्योतक था जो व्यवहार योग्य हो तथा भोज्य वनस्पति हो इस कारण बण्डि डाड के १८ ६३ की ऋचा म श्रीर शब्द समद्धि का द्योतक है ।[1] सोम की ही भाँति की एक दूसरी वनस्पति दूरोश यहा दिखाई देती है, इसे भी श्रीर कहा है[2] जैसे वेदो में सोम को कहा है । उषा को भी श्रीर कहा है तथा आहुर मजदा की पुत्री आर्मैती को भी श्रीर कहा है[3] । ओल्डन बग का ध्यान है कि श्री श द का अथ सौन्दय का द्योतक था क्योकि श्रीर शब्द उस सु दर स्त्री के सम्ब ध में प्रयुक्त हुआ है जिसके शरीर म अदवी सुरा अनाहिता प्रकट होती है तथा उस घोड के सम्ब ध में प्रयुक्त हुआ है जिसमें तिश्त्रय प्रकट होते हैं । देवी की बाह गोरी तथा श्रीर बत यी गयी हैं । इस प्रकार इससे इतना तो स्पष्ट ही है कि श्री शब्द उस काल म ईरान म प्रचलित तो था परन्तु ऋग्वेद की ही भाति वह किसी देवी का द्योतक नही था । भारत म वदिक युग के पश्चात् श्री और लक्ष्मी श द धन प्रदान करनवाली किसी यक्षिणी (जनदेवी) के साथ जोड दिए गए और उनका उस काल का प्रचलित स्वरूप अपना लिया गया ।

१ गोण्डा —आस्पेक्टस आफ विष्णुइज्म पृ० २०४ ।

२ अवस्ता — ७, ६, १६–३२, १०, ७ तथा आगे ।

३ गोण्डा — वही पृ० २०६ ।

४ ओल्डनबग — वदिक कर्डस फार ब्रियुटीफुल एण्ड बियुटी इत्यादि रूपम् स० ३२, अक्तूबर १६२७, पृष्ठ ६६ ।

प्राचीन बौद्ध तथा जैन साहित्य मे लक्ष्मी का स्वरूप

बौद्ध तथा जन दोनो धर्मों न लोक-सग्रह के स्थान पर जीवन में त्याग को महत्व दिया। इस कारण इन धर्मों के आचार्यों न लक्ष्मी की ओर से जनसाधारण का आकषण हटाने का प्रयत्न किया। परन्तु मनुष्य यदि तृष्णा पर विजय पा जाय तो वह देवता हो जाय। उस काल म बहुतो ने इस प्रवृत्ति को अपने मन से हटाने का प्रयत्न किया परन्तु सफलता सबको तो नही मिली। लक्ष्मी का पूजन मानसिक तथा वाचिक चलता ही रहा। मिलिन्द पन्ह म लक्ष्मी पूजको के पथ का एक साधारण विवरण हमे मिलता है[1]। निद्दस की पथो की सूची में इस पथ को स्थान ही नही दिया गया है कदाचित इसी कारण से कि उधर लोगो का मन ही न जाय। परन्तु इन सब प्रयत्नो के परे भी लक्ष्मी की ओर से जनसाधारण का मन नही हटाया जा सका तथा ईसा पूव दूसरी शताब्दी के भारहुत के कठघरे के स्तम्भो पर तथा साची के तोरणा पर लक्ष्मी विविध स्वरूपो में विद्यमान है। मिलिन्द पन्ह के देखन से तो एसा ज्ञात होता है कि लक्ष्मी पथी इस देश म बस ही अधिक सख्या म थे जसे और धर्मानुयायी। प्रत्यक शुक्रवार को ये उपासक गुप्त अर्चना तथा पूजा करते थे। प्रत्येक पूजन-पद्धति कदाचित प्राचीन आदिवासियो के यहा से हिन्दू धम मे आई थी तथा उसका कुछ सकेत हमें यहाँ प्राप्त होता है क्याकि अथववेद काल तक लक्ष्मी को आय बहुत अच्छी दृष्टि से नही देखते थे, जसा पूव म कहा जा चका है[2] चाहें उन्ह परम पुरुष की विभूतियो के रूप म स्वीकार कर चुके हो[3] उसी प्रकार जसे हारीति को बौद्ध धर्मावलम्बी देवी के रूप मे तो स्वीकार कर चुके थे, परन्तु वे उन्ह श्रद्धा के भाव से कभी नही देख सके। अश्वघोष के सौन्दरानन्द मे भी लक्ष्मी की मूर्ति का सकेत तो मिलता है परन्तु उनके प्रति कोई श्रद्धा का भाव नही दिखाई देता।

सा पद्मराग वसन वसाना
पद्मानना पद्मदलायताक्षी।
पद्मा विपद्मा पतितेव लक्ष्मी
शुशोष पद्मस्रगिवातपेन।

दीघनिकाय के ब्रह्मजाल सुत्त म तो इनकी पूजा[5] का निषेध किया गया है परन्तु इनका प्रचार इतना था कि ये साची तथा भारहुत मे कई स्थानो पर हमे खुदी हुइ प्राप्त होती ह तथा इनको भारहुत के एक लख मे देव कुमारिका कहा है[6]।

---

१ मिलिन्द पन्ह — १९१।

२ अथववेद — ७, ११५, १–४।

३ शुक्ल यजुर्वेद — ३१–२२ (यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि ऋग्वेद मे लक्ष्मी शब्द अन्तिम दसवे मण्डल में मिलता है तथा यजुर्वेद में भी ३१वें अध्याय में।।

४ अश्वघोष — सौन्दरानन्द – ६, २६।

५ दीघ निकाय — १, ११।

६ बरुआ सिन्हा – भारहुत इन्सक्रिपशन्स पृष्ठ ७४।

जातको के देखने से एसा ज्ञात होता है कि बौद्धो न जनसाधारण के विश्वास से प्रभावित होकर इन्हें पीछे अपना लिया था जसे बौद्ध उग्रतारा को हिन्दुओ ने लक्ष्मी का एक रूप मान कर अपना लिया था[१] जातक ५३५ म लक्ष्मी दक्षिण दिशा की देवी असा पश्चिम दिशा की श्रद्धा तथा उत्तर की हिरी के साथ पूव की देवी मान ली गइ थी परन्तु फिर भी इनकी भत्सना की गइ क्योकि य अपनी कृपा प्रदान करते समय मूर्खों तथा विद्वानो में भद नही करती। प्राय मख इनको विद्वानो से अधिक प्रिय होते ह। इस जातक का यह विवरण सरस्वती तथा लक्ष्मी की प्रचलित प्रतिद्वद्विन्ता की कथा का बीज ज्ञात होता है। आज जनसाधारण में यह प्रसिद्ध है कि जहा लक्ष्मी का निवास होता है वहा सरस्वती का नही तथा जहाँ सरस्वती विराजती हैं वहा लक्ष्मी का पदापण नही होता। यहा एक जातक म एक राजा आसा सध्दा हिरि तथा सिरि के बीच का झगडा निपटाते ह। सिरि प्रभात काल के तारे की भाँति सुन्दर है। वे कहती ह जिस पर म प्रसन्न हो जाऊ, वह सभी सुख प्राप्त कर लेता है। दूसरी देविया उनकी भत्सना करती हैं क्योकि उनकी कृपा के बिना विद्वान तथा चतुर भी विफल हो जाते हैं तथा उनकी कृपा से आलसी तथा कुरूप भी ससार में सफलता प्राप्त कर लेते हैं[२]। इस प्रकार का अपराध लगन पर सिरि हिरी से हार जाती है।

सिरि काल कण जातक मे (३९२) सिरिमाता धतरट्ठ की पुत्री कही गई ह जो बौद्धधम में पूव के दिक्पाल माने गए हैं तथा जिनकी मूर्ति भारहुत में मिली हैं[३]। वे कहती हं कि मनुष्यो को विजय दिलाने वाली म ही हू म ही श्री मै ही लक्ष्मी म ही भूरिपन्ना ह। कदाचित यह वही सिरि मा देवता ह जिनकी मूर्ति हमें भारहुत से मिली है, जिसका सकेत पहिले किया जा चका है।

धम्मपद अट्ठकथा (११, १७) में श्री को राज्य की भाग्यदेवी माना है रज्ज सिरीद यका देवता। इसी प्रकार की धारणा हिन्दू धम में भी प्राप्त होती है—'राज्यदा राज्यहन्त्री च लक्ष्मी देवी नमोस्तुते मैत्रीवल जातक आथ सूर जातक माला में लक्ष्मी को पद्मालया कहा गया है। पद्म के सरोवर को छोडकर तुममें वास करें ऐसी प्राथना मिलती है। कुछ इसी प्रकार की प्राथना श्री सूक्त में भी प्राप्त होती है (श्रीसूक्त ६७।) जापान की बौद्धकथाओ के अनुसार लक्ष्मी हारिति की पुत्री मानी गई है[५]। कुछ सम्बन्ध इन दोनो में अवश्य

---

१ प० कन्हैया लाल मिश्र —सौभाग्य लक्ष्मी (बम्बई – स० १९८८) पष्ठ १०५ श्लोक १२ त्वरिता पातु मा नित्यमुग्रतारा सदावऽतु।

२ इसी प्रकार के भाव हमें हिन्दू धम में भी प्राप्त होते ह —कन्हैया लाल मिश्र —सौभाग्य लक्ष्मी —पृष्ठ २३।

सत्येनाशौचसत्वाभ्याम् तथा शीलादिभिगुण।
त्यज्यन्ते ते नरा सद्य सत्यक्ता य त्वयाऽमले॥
त्वयावलोकिता सद्य शीलाद्यरखिलगुण।
कुलश्वर्यश्च युज्यन्ते पुरुषा निगुणा अपि॥
स श्लाघ्य स गुणी धन्य स कुलीन स बद्धिमान।
स शूर स च विक्रान्तो यस्त्वया देवि वीक्षित॥

३ कुमार स्वामी —यक्षाज, ख २ पष्ठ ४।

४ उपर्युक्त —पृष्ठ ६४।

५ कुमार स्वामी —अर्ली इण्डियन आईकोनोग्राफी श्री लक्ष्मी —पष्ठ १७७।

झलकता है, क्योकि कौशाम्बी में भी इन दोनो की मूर्तियाँ एक ही मन्दिर म पाई गई ह[1] । परन्तु लक्ष्मी की मूर्ति हारिति के दक्षिण की ओर स्थित थी इससे एसा ज्ञात होता है कि लक्ष्मी को हारिति से श्रेष्ठ मानते थे ।

षष्ठी देवी से तो श्री का सम्बन्ध था ही क्योकि श्रीसूक्त को षष्ठी कल्प म पढने का आदेश मानवगृह्यसूत्र में प्राप्त होता है[2] षष्ठी देवी की पूजा आज भी बालक के उत्पन्न होने पर छठवें दिन की जाती है । इनसे हारिति से कुछ सम्ब ध अवश्य था क्योकि हारिति भी बालको से ही सम्ब धित थी[3] तथा आज उनकी पूजा शीतला देवी के रूप में होती है ।

जन साहित्य में सवप्रथम श्री के अभिषेक का दशन हमें महावीर स्वामी की माता त्रिशला के स्वप्न मे होता है[4] यहाँ जो स्वरूप प्राप्त होता है वह गजलक्ष्मी का है जिसमें दोनो ओर दो गज भगवती लक्ष्मी को स्नान करा रहे हैं तथा देवी पद्म के सरोवर से उत्पन्न होते हुए एक पद्म पर स्थित ह । इस दशन का फल उत्तम समझा जाता है क्योकि इसे महावीर स्वामी के जो इस ससार के निस्तार करनेवाले हैं आगमन का सूचक इस कल्प म माना है । यह विवरण इस प्रकार है—

पौमद्दह कमलवासिनीम् सिरिम् भगवैम पिच्छ हिवन्त सेल सिहरे
दिसाग । इण दोरू पीवर करभि सिच्चमाणिम ।

अर्थात कमल के ताल में कमल पर वास करनेवाली भगवती श्री हिमालय पर हाथी, हाथियो की सूडो से स्नान कराई जाती हुई । इसी स्थान पर श्री की सुन्दरता का भी वणन है ।

हीरामानिक सग्रहालय के कल्पसूत्र की एक प्रति म लक्ष्मी की कमल पर स्थित एक मूर्ति चित्रित की है, परन्तु इसमें कारीगर की भूल से इ हें हाथी स्नान कराते हुए नही दिखाय गये हैं चित्र (क) ।

भगवती सूत्र मे यही विवरण धरिणि के चौदह स्वप्नो में एक मिलता है परन्तु यहाँ केवल 'अभिसेय' शब्द से इस दृश्य को व्यक्त किया गया है[5] यहाँ भी गजलक्ष्मी का ही स्वरूप आपेक्ष्य है ।

हेमच द्र के पीछे के लिखे हुए परिशिष्ट परवन में श्लोक १२ में श्री को श्रीदेवी कहा है तथा यह इगित किया है कि इनके हाथ में कमल देवताओ के पूजन के हेतु है तथा इनका वास हिमालय में है जिसका नाम पद्मह्रद है अर्थात् पद्मो से भरा हुआ बडा सरोवर ।

उद्योतना की कथा में कुवलय माता के रूप में वे जन धम के प्रधान तत्वो से अकित एक परिपत्र राजा को प्रदान करती हं । जैन धर्मावलम्बी पूण कलश या पुन्नकलस में भी लक्ष्मी का वास मानते हैं और इस पर दो आखें अकित करते हैं[8]

---

१ गोवि द च द्र — दी पारपूर आफ दी बुद्धिस्ट गाडेसेज आफ कौशाम्बी — मजारी — मई १९५६ पृष्ठ १९ प्लेट २ ।
२ मानव गृह्य सूत्र – २, १३ ।
३ पोल लुई कुशो — मिथोलाजी आजियाटिक पष्ठ ९५ ।
४ पर्युषणा कल्प — ३६ ।
५ आन द० के० कुमार स्वामी — दी काकरस लाइफ इन जन पेण्टिग — जे० आई० एस० ओ० ए० खण्ड ३, न० २ — १९३५ — पष्ठ १३३ प्लेट ३५ – ४ ।
६ बारनेट — अन्तगड दसाओं, पष्ठ २४ ।
७ कुमार स्वामी — उपर्युक्त — पष्ठ १३६ ।
८ गोण्डे — आसपेक्ट्स आफ विष्णुइज्म — पष्ठ २२० ।

श्री सघनाम का एक विहार भी हमें पाटलिपुत्र में प्राप्त होता है, जहाँ जनाग समूह श्री महावीर स्वामी के निर्वाण के १६४ वष पश्चात् सग्रहीत हुआ था[१] कदाचित यह श्री से सम्बन्धित कोइ स्थान था । जन लोग पूण कलश म भी श्री वास समझते ह अब उसको प्रतिमा का स्वरूप देने के हेतु उस पर आँख भी बनाते ह चित्र (ख)[२]।

इस प्रकार जन धम म भी जहा महावीर की माता को इनका दशन महावीर के आगमन का सुख सवाद सूचक माना गया वहाँ भी इनकी पूजा अचना को विशष महत्व नही दिया गया । बौद्ध धम में तो इन्हें दूर ही रखन का प्रयत्न दिखाई देता है । यदि इनका प्रभाव जनता पर बना रहा तो उसका कारण था मनुष्य की तष्णा तथा सुखी जीवन यतीत करन की इच्छा । बढते हुए बौद्ध सघो को धनिक महाजनो की आवश्यकता थी, जिनसे पर्याप्त भोजन और वस्त्र प्राप्त हो सके तथा जो विहारो का निर्माण करा सकें । एसी दशा म उनके देवी देवताओ को अनिच्छापूवक भी मानना ही पडा । फूशे की धारणा कि साची इत्यादि स्थानो पर अकित गजलक्ष्मी की मूर्ति बुद्ध की माता माया की द्योतक है भ्रा त पूण प्रतीत होती है[३] । यदि इस प्रकार की अकित मूर्ति माया की होती तो अश्वघोष लक्ष्मी की टूटी हुई मूर्ति का विवरण न देता जसा पहिले लिखा जा चुका है ।

❋

---

१ नागेन्द्रनाथ वसु — भारतीय लिपि तत्त्व — पृ० ४० ।

२ कुमार स्वामी — दी कांकरस लाइफ इन जन पेंटिग — उपयुक्त — पृ० १३६ ।

३ फूश — आर्केआलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया मेमायर — २४६ — पृ० २ ।

पुराणों मे लक्ष्मी का स्वरूप

पुराणो के काल के विषय में अनेक मत-मतान्तर हं परन्तु यह अब प्राय माना जान लगा है कि इसके कुछ भाग बहुत प्राचीन ह ।[1] इनमें प्राय सग प्रतिसग वश मन्वन्तर तथा वशानचरित मिलते हैं। प्राय अठारहो पुराणो म ये वणन तो प्राप्त होते ही ह परन्तु कही कही भद मिलता है । कुछ बात बहुत प्राचीन ज्ञात होती हैं जो कदाचित गाथाओ के रूप में विद्यमान थी परन्तु कुछ बात पीछे की जोडी हुई ज्ञात होती ह । भाषा को देखने से भी ज्ञात होता है कि कुछ पुराण के अश तो पहिल के ह और कुछ बाद के परन्तु इनमें कितना अश प्राचीन है तथा कितना अर्वाचीन यह कहना अभी कठिन है । यहाँ यवन शक पह्लव तथा हूण भी मिलते ह और ऋग्वेद के पुरु कुत्स त्रसदस्यु भी मिलते हं तथा सिद्धाथ (बुद्ध) राहुल मौय नन्द इत्यादि भी ।

परन्तु पुराणो मे वर्णित जो कथाएँ हमे प्राप्त होती ह वे जन विश्वास से सम्बद्ध अवश्य थी । प्राय पुराणो की अधिकतर कथाओ का सम्बन्ध ईसा पूव दूसरी शताब्दी से लकर ईसा पश्चात आठवी शताब्दी तक के जनविश्वासो से ज्ञात होता है । देवी देवताओ के मूत स्वरूप यहा हम मिलते हं तथा उनके विषय म कथाए भी प्राप्त होती ह । ऐसा ज्ञात होता है कि पुराण के काल में मूर्तियो के पूजन का विशेष प्रचार हो गया था तथा यज्ञ हवन इत्यादि की ओर से लोगो का प्रेम कम हो चला था ।[2] बौद्ध तथा जन धम के प्रचार का यह स्वाभाविक परिणाम था ।

जो सामग्री हम यहाँ देवी देवताओ की प्रतिमा के विषय की मिलती है उसके दखन से एसा ज्ञात होता है कि पौराणिक काल तक देव प्रतिमा बनाने के निमित्त कुछ नियम भी बन गय थे जिससे साधारण जन भी प्रतिमा को देखते ही देवता को पहचान सके इस लिए यह भी कह दिया गया था कि आयुधम वाहनम चिन्हम् यस्य देवस्य यदभवत् [3] । यहा हमें देवालय के बनाने के नियम मिलते ह, जिन्ह पृथ्वी शोध कर बनाने का निर्देश मिलता है । इस काल में अनुमानत बहुत से मन्दिर बन गय थे तथा पूजा की पद्धति भी निश्चित हो चुकी थी । व्रत उपवास इत्यादि भी जैनो के सम्पक से हिन्दुओ में चल पड थे ।[5]

लक्ष्मी के स्वरूप का यहाँ विशद वणन हमें प्राप्त होता है तथा इनकी मूर्ति का पूजा का विधान भी मिलता है ।

---

१ इ० ज० रापसेन केम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया (एस० चन्द एण्ड को० फस्ट इण्डियन रप्रिन्ट—१९५५)—पृष्ठ २६६, ए० एम० टी० जाकसन—सेनटेनरी वाल्यूम आफ दी जनरल आफ दी रायल हिस्टारिकल सोसाइटी बाम्बे ब्राच, पष्ठ ७३ ।

२ नारद पुराण—पूव खण्ड—२४, १४ ।

३ विष्णु धर्मोत्तर पुराण—३, ९४, ४५ ।

४ विष्ण धर्मोत्तर पुराण—३, ९४, १ ।

५ उपर्युक्त—३, १५४, १–१५ ।

नारद पुराण (अध्याय ६२) तथा कम पुराण के प्रथम अध्याय म जिन अठारहो पुराणो के नाम गिनाये गये ह उनम ब्रह्म पुराण सवप्रथम आता है। इसम वर्णित "लक्ष्मी तीथ' के प्रसग में लक्ष्मी तथा दरिद्र का कथोपकथन बडा सुन्दर है।[1] लक्ष्मी कहती ह कि कुल शील इत्यादि सब होते हुए भी मेरे बिना देहधारी मनुष्य जीता हुआ भी मृतक के समान है। दरिद्र उत्तर देता है कि जहाँ हम ह वहाँ काम क्रोध मद लोभ मात्सर्य इत्यादि रहता ही नही न वहाँ धन का उन्माद होता है न ईर्ष्या होती है, न उद्धत वृत्ति। इस पर लक्ष्मी जी पुन कहती है कि मेरी कृपा से सारे प्राणी पूज्य हो जाते ह निधन शिव तुल्य हो जाता है तुरन्त उसके पास धी श्री ह्री शान्ति और कीर्ति चली जाती है। कसा भी मनुष्य हो वही सर्वोत्तम हो जाता है उसमें सभी गुण दिखाई देने लगते ह और सब उसको प्रणाम करते ह, इस कारण से म श्रेष्ठ हू। इस पर फिर दरिद्र कहता है कि मैं लज्जा से मरता हू क्योकि म तुम्हारा ज्येष्ठ सुत हूँ। तू पुरुषोत्तम को छोडकर पाप से रमण करती है।

अन्तत य अपना झगडा लकर गौतमी के पास जाते ह। गौतमी जी सव प्रकार की 'श्री का वणन करती हुई कहती ह कि जहाँ कही सुन्दरता है, वही लक्ष्मी है—

ब्रह्म-श्रीश्च तप-श्रीश्च यज्ञ-श्री कीर्तिसञ्ज्ञिता।
धनश्रीश्च यश श्रीश्च विद्या प्रज्ञा सरस्वती।
भुक्तिश्रीश्चाथ मुक्तिश्च स्मृतिर्लज्जा धृति क्षमा।
यद्रम्यम सुन्दरम वा तत्
लक्ष्मीविजृम्भितम्॥[2]

विष्णु के वक्ष स्थल पर श्रीवत्स के चिह्न का भी विवरण यहा प्राप्त होता है।[3] पुरुषोत्तम क्षत्र के वणन म श्री और विष्णु का सम्वाद मिलता है जिससे यह पता चलता है कि कही-कही विष्णु की मूर्ति के साथ श्री' की मूर्ति नही बनाई जाती थी। ब्रह्म पुराण में मेरु पवत के अन्तगत द्रोण पर्वत को अग्नि, सूय इन्द्र इत्यादि के साथ लक्ष्मी तथा विष्णु का भी क्रीडा-स्थल बताया गया है।[5] नारायण तथा श्री को[4] लक्ष्मी और विष्णु को स्त्री पुरुष के उदाहरण के रूप में कई स्थानो पर वणन किया गया है। कृष्ण को श्रिय कान्त श्रीपते तथा श्रीनिवास भी कहा गया है।[6]

पद्म पुराण में भी विष्णु के वक्ष स्थल पर श्रीवत्स का चिह्न प्राप्त होता है।[7] इनको श्रियायुक्त

---

३ ब्रह्म पुराण —अध्याय १३७।
४ उपयुक्त — १३७–३२, ३३, ३४, ३५, ३६।
१ ब्रह्म पुराण — ४५–४१, ६४।
२ उपयुक्त — ४५–७५।
३ उपयुक्त — १८–५४।
४ उपयुक्त — ३४–४४।
५ उपयुक्त — १४४–२२।
६ उपयुक्त — ५२–१०।
७ पद्म पुराण — २ १८, १४।

भी कहा है श्रिया युक्तम भासमानम सूयकोटिसमप्रभम [1] । विष्ण के शत नामो म श्रीपति श्रीधर श्रीद श्रीनिवास नाम मिलते हैं । एसा अनुमान होता है कि इस काल तक विष्णु सहस्र नाम नही बना था ।

विष्णु पुराण म दक्ष की कयाओ मे लक्ष्मी का नाम मिलता है— श्रद्धा लक्ष्मीधृ तिस्तुष्टिर्मेधा पुष्टिस्तथा कृपा । [2] इनका विवाह दक्ष ने धम के साथ किया । दूसरी इनकी उत्पत्ति भृग तथा ख्याति से मिलती है— देवो धातविधातारौ भगो ख्यातिरसूयत । श्रिय च देवन्देवस्य पत्नी नारायणस्य या ।। तीसरी कथा इनके क्षीर सागर से उत्पन्न होन की मिलती है ।[5] इसका समवय इस प्रकार किया है कि विष्ण जगतपिता आदि पुरुष ह तथा लक्ष्मी नित्य जगमाता । यदि लक्ष्मी स्वाहा हैं तो विष्णु हुताशन, यदि लक्ष्मी ऋद्धि ह तो विष्ण स्वयम कुबेर लक्ष्मी इद्राणी का स्वरूप ह, मधसूदन इन्द्र स्वरूप इत्यादि । तथा यह भी कहा गया है कि यह भद कल्प कल्प की कथाओ के भद से उत्पन्न हुआ है समुद्र मथन से, जम की कथा और पुराणो की भाँति यहा मिलती है । दुर्वासा के शाप स इन्द्र श्री से रहित हुए तब वे भगवान के पास गये उन्होंने समुद्र मथन की आज्ञा दी तब समुद्र स चौदह रत्न निकले उनमें लक्ष्मी भी थीं[8] । तथा लक्ष्मी को दिग्गजो ने हेमपात्र द्वारा गगाजल से स्नान करया — गङ्गाद्या सरितस्तोय स्नानाथमुपतस्थिरे । दिग्गजा हेमपात्रस्थमादाय विमल जलम । यही रूप गजलक्ष्मी का कदाचित हमें बौद्ध स्तूपों के तोरणों पर तथा विविध स्तूपो के खम्भा पर मिलता है । क्षीर सागर ने इन्हें पद्म की माला दी और विश्वकर्मा ने इन्हें सब आभूषण प्रदान किये । इन्होंने सब देवताओ को देखा तथा माला श्रीहरि के गल म डाली अर्थात् उनका वरण किया[1] । इनकी प्रार्थना जो इद्र ने की उसमें इनको जल से उत्पन्न पद्मालया पद्मकरा पद्मपत्रनिभेक्षणा पद्ममुखी पद्मनाभप्रिया कहा है । इस स्तुति में इनके सब गण तथा सब रूप प्राप्त होते है—

इद्र उवाच—

नमस्य सवलोकाना जननीमजसम्भवाम । श्रियमन्निद्रपद्माक्षी विष्णुवक्ष स्थस्थिताम ।
पद्मालया पद्मकरा पद्मपत्रनिभेक्षणाम् । वन्दे पद्ममुखी देवी पद्मनाभप्रियामहम ।।११८।।
त्व सिद्धिस्त्व स्वधा स्वाहा सुधा त्व लोकपावनी । सध्या रात्रि प्रभा भूतिर्मेधा श्रद्धा सरस्वती ।।
यज्ञविद्या महाविद्या गुह्यविद्या च शोभन । आत्मविद्या च देवि त्व विमुक्तिफलदायिनी ।।१२०।।
आन्वीक्षिकी त्रयी वार्त्ता दण्डनीतिस्त्वमेव च । सौम्यासौम्यजगद्रूपस्त्वयत्तद्देवि पूरितम ।।१२१।।
का त्वन्या त्वामृते देवि सवयज्ञमय वपु । अध्यास्ते देवदेवस्य योगचि य गदाभत ।।१२२।।
त्वया देवि परित्यक्त सकल भुवनत्रयम । विनष्टप्रायमभवत्त्वयदानी समधितम् ।।१२३।।

---

१ उपर्युक्त — २, १८, ४३ ।
२ उपर्युक्त — २, ८७, ११ ।
३ विष्णु पुराण — १, ७, २३ ।
४ उपर्युक्त — १, ७, २४ ।
५ उपयुक्त — १, ८, १५ ।
६ विष्णु पुराण — १, ८, १६ ।
७ उपयुक्त — १, ८, १७–३५ ।
८ उपर्युक्त — १, ६, १–१०० ।
६ उपयुक्त — १, ६, १०३ ।
१० उपयुक्त — १, ६ १०५, १०६ ।

दारा पुत्रास्तथा गारसुहृद्धा यधनादिकम । भव त्यत महाभागे नित्य त्वद्वीक्षणान्नृणाम ।।१२४।।
शरीरारोग्यमश्वयमरिपक्षक्षय सुखम । देवि त्वददष्टिदष्टाना पुरुषाणा न दुलभम ।।१२५।।
त्व माता सवलोकाना देवदेवो हरि पिता । त्वयैतद्विष्णुना चाम्ब जगद याप्त चराचरम ।।
मा न कोश तथा गोष्ठ मा गृह मा परिच्छदम । मा शरीर कलत्र च त्यजथा सवपावनि ।।१२७।।
मा पुत्रा मा सुहृद्वग मा पशु मा विभूषणम् । त्यजेथा मम देवस्य विष्णोवक्ष स्थलालये ।।१२८।।
सत्वन सत्यशौचाभ्या तथा शीलादिभिगुण । त्यज्यन्ते ते नरा सद्य सन्त्यक्ता ये त्वयामल ।
त्वया विलोकिता सद्य शीलाद्यरखिलगुण । कुलश्वर्यैश्च युज्यन्ते पुरुषा निगुणा अपि ।।
स श्लाघ्य स गुणी धन्य स कुलीन स बुद्धिमान । स शूर स च विक्रान्तो यस्त्वया देवि वीक्षित ।।१३१।।
सद्यो वगुण्यमायान्ति शीलाद्या सकला गुणा । पराङमुखी जगद्धात्री यस्य त्व विष्णुवल्लभे ।।१३२।।

इनका विविध अवतार विविध कल्पों में होता है । इस कारण इनकी उत्पत्ति[1] भृगु और ख्याति से वर्णित है तथा समुद्र म थन से भी इनका ज म पद्म से भी हुआ तथा सीता के रूप में पृथ्वी से भी पुन रुक्मिणी के रूप म इन्होंने विष्णु को अपना स्वामी बनाया जसा भृगु तथा ख्याति की सुता न किया था उसीके अनुरूप समय समय पर देह धारण की[2] और विष्णु को ही अपना स्वामी बनाया । भारत में कुछ लोग नग्न रहते थे इसका भी सकेत यहा मिलता है ।

तपस्यभिरतान सोऽथ मायामोहो महासुरान् ।
मैत्रेय ददश गत्वा नर्मदातीरसश्रितान् ।
ततो दिगम्बरो मण्डो बर्हिपिच्छधरो द्विज ।।
मायामोहोऽसुरान श्लक्षणमिद वचनमब्रवीत[3]

इससे ऐसा ज्ञात होता है कि भारत के आदिवासियो की कई जातिय नग्न रहती थी इसी कारण कद चित् उनकी देवी भी नग्न रहती होगी —एसा अनुमान होता है । ये लोग वेद की निन्दा करते थे तथा यज्ञ कम आदि नही करते थे इससे इ ह मोक्ष नही प्राप्त होता था[4] ।

शिव पुराण म जल धर के युद्ध के प्रकरण म यह कथा प्राप्त होती है कि विष्ण लक्ष्मी के सहित जलधर के यहाँ निवास करते है[5] । यहाँ मोहिनी महश की माया है तथा उमा वही मोहिनी देवी जगत् माता ह उमाख्या सा महादेवी त्रिदेव जननी परा[6] । वह कहती ह अहमेव त्रिधा भिन्ना तिष्ठामि त्रिविधगुणै, गौरी लक्ष्मी सुरा ज्योती रजस्सत्वतमोगण[7] । तुलसी लक्ष्मी की अवतार ह । समुद्र म थन का प्रकरण यह प्राप्त होता है, परन्तु इसमे लक्ष्मी की उत्पत्ति नही मिलती है[8] ।

---

१ उपयुक्त — १ ६–११७–१३२ । गीता प्रस — स० १६० ।
२ उपर्युक्त — १, ६, १४१–१४६ ।
३ उपयुक्त — ३, १८, १–२, ३, १८, ४८ ।
४ उपयुक्त — ३, १८, २१–२८ ।
५ शिव पुराण — २, ५, १८, १४ ।
६ उपयुक्त — २, ५, २६–१६ ।
७ उपयुक्त ६ — २, ५, २६–३४ ।
८ उपयुक्त — २, ५, २६–४७, ५० ।
६ उपयुक्त — ३, १, १६, १–४२ ।

श्रीमद्भागवत महापुराण में श्री भगवान् विष्णु की सेवा करती हुई वकुण्ठ म शुक को दिखाई देती है[१]। यहा इनके जन्म के विषय म अन्य पुराणो मे वर्णित समुद्र मन्थन वाली कथा मिलती है[२] जिसकी कान्ति से विद्युत् के समान सब दिशाए प्राज्वल्यमान हो गयी, एसा ध्यान यहाँ मिलता है।[३] इनके अभिषेक का भी वणन यहाँ प्राप्त होता है[४]। इनके हाथ म कमल है— ततोऽभिषिषिचुर्देवी श्रियम पद्मकरा सतीम। दिगिभा पूर्णकलशै सूक्तवाक्यर्द्विजरित। य कोशय वस्त्र धारण किये हुए ह तथा वरुण द्वारा पह नाई हुई वजयन्ती की माला मस्तक को सुशोभित कर रही है और विश्वकर्मा के बनाय हुए विचित्र आभषणो से सुसज्जित ह। पद्म का हार सरस्वती को भाति इनके भी गल मे है तथा नाग की आकृति का कुण्डल काना में है[६]। इनका स्वरूप निम्नांकित है—

तत कृतस्वस्त्ययनोत्पलस्रज नन्दिद्विरेफाम परिगृह्य पाणिना।
चचाल वक्त्र सुकपोलकुण्डलम सव्रीडहास दधती सुशोभनम॥
स्तनद्वय चाति कृशोदरी समम निरन्तर चन्दनकुङ्कुमोक्षितम।
ततस्ततो नूपुरवल्गुशिञ्जितर्विसपती हेमलतेव सा बभौ॥

इन्होंने मधसूदन को वरा और उनके गले में नय कमल की माला पहिनाई[८]।

यहा रुक्मिणी को श्री कहा है[९]। इनसे प्रद्युम्न का जन्म हुआ। प्रद्युम्न मकरध्वज काम व थ, इस कारण भी श्री का सम्बन्ध मकर से किया गया।

भविष्य पुराण में विशेष कुछ सामग्री लक्ष्मी के विषय म प्राप्त नही होती परन्तु यहा मत्स्य पुराण की भाति प्रतिमा बनाने की कुछ मान्यताएँ मिलती ह[१०] जो परिशिष्ट में दी जा रही ह। सूय को विशेष पुष्पो को चढाने के प्रसग मे यह श्लोक मिलता है तस्य चायतनम् भक्त्या गैरिकेणोपलपयेत प्राप्नुयान्महती लक्ष्मी रोगश्चापि प्रमुच्यते।[११] जिससे एसा ज्ञात होता है कि लक्ष्मी शब्द धन का पर्यायवाची हो गया था। सत्राजित की कथा म अश्रय का अथ दरिद्र मिलता है[१२] तथा यहा राजा अपनी स्त्री की लक्ष्मी से समानता करता हुआ कहता है कि येनावयोरिय लक्ष्मीर्मृत्युलोके सुदुलभा।[१३]

---

१ भागवत — २, ६, १३।
२ उपयुक्त — ८, ८, ७।
३ उपर्युक्त — ८, ८ ८।
४ उपर्युक्त — ८, ८, १०–११।
५ उपयुक्त — ८, ८, १४।
६ उपयुक्त — ८, ८, १५–१६। नागों की आकृति का कुण्डल इनके नाग से सम्बन्ध का द्योतक है।
७ उपर्युक्त — ८, ८, १७–१८।
८ उपर्युक्त — ८, ८, २३, २४।
९ उपयुक्त — १०, ५२, २३।
१० भविष्य महापुराण — ब्रह्म पर्व १, अध्याय १३२–१–३१।
११ उपयुक्त — ब्रह्म पर्व १, अध्याय ६८–१७।
१२ भविष्य महापुराण — ब्रह्मपव १, अध्याय ११६–२५।
१३ उपर्युक्त — ब्रह्मपर्व १, अध्याय ११६–४२।

ब्रह्मववत पुराण में कई प्रकार की लक्ष्मी का स्वरूप वर्णित है स्वर्ग की लक्ष्मी राजाओ की राज्य लक्ष्मी गृहलक्ष्मी वैष्णवो की वष्णवी इत्यादि। यहाँ य अदिति रूपिणी भी वर्णित ह[1]। कृष्ण को यहाँ स्वय मभू कहा है और उनके मन से लक्ष्मी की उत्पत्ति बताइ गयी ये देवी गौर वणवाली रत्नजटिता अलकारो से विभूषित कही गयी ह। य पीत वस्त्र धारण किय हुए ह तथा नवयौवना ह। य सव एश्वय तथा सव सम्पत्ति की देवी हैं। स्वग म ये स्वगलक्ष्मी ह तथा राजाओ के यहाँ ये राज्यलक्ष्मी के रूप में विद्यमान ह। ये हरि के पृष्ठ भाग पर स्थित वर्णित ह।[2]

आविबभूव मनस कृष्णस्य परमात्मन । एका देवी गौरवर्णा रत्नालकारभषिता।
पीतवस्त्रपरीधाना सस्मिता नवयौवना। सर्वैश्वर्याधिदेवी सा सवसम्पत्फलप्रदा ।।
स्वग च स्वगलक्ष्मीश्च राजलक्ष्मीश्च राजसु ।।६६।।
सा हरे पुरत स्थित्वा परमात्मानमीश्वरम। तुष्टाव प्रणता साध्वी भक्तिनम्रात्मक धरा ।।६७।।
ये गौर वण वाली ह परन्तु इनकी आभा तप्त काचन के समान ह[3]।

कृष्ण और लक्ष्मी न सरस्वती को, जो कृष्ण से उत्पन्न हुई थी ब्रह्मा को रत्न तथा तथा माला सहित दिया यह विचित्र विवरण यहा प्राप्त होता है।[4]

आगे चलकर प्रकृति खण्ड म यह कथा मिलती है कि भगवान कृष्ण स्वेच्छा से द्विधारूप हो गये— 'स्वेच्छया च द्विधारूपो बभूव ह। स्त्रीरूपा वामभागाशा दक्षिणाश पुमान्स्मृत । यह अतीव सुन्दर स्वरूप देवी का था—

अतीव कमनीया च चारुचम्पकसन्निभाम ।।
पूर्णेन्दुबिम्बसदशनितम्बयुगला पराम । सुव सकदलीस्तम्भसदृशश्रोणिसुन्दरीम ।।३१।।
श्रीयुक्तश्रीफलाकारस्तनयग्ममनोरमाम। पुष्ट्या युक्ता सुललिताम मध्यक्षीणाम मनोहराम ।।
अतीव सुन्दरी शान्ता सस्मिता वक्रलोचनाम। वह्निशुद्धाशकाधाना रत्नभूषणभूषिताम् ।।
शश्वच्चक्षश्चकोराभ्याम पिबन्ती सतत मुदा। कृष्णस्य सुन्दरमुख चद्रकोटिविनिदकम् ।।
कस्तूरीबिन्दुभि साधमधश्चन्दनबिन्दुना। सम सिन्दूरबिंदु च भालमध्य न बिभ्रतीम ।।
सुवक्रकबरीभारम मालतीमाल्यभूषितम। रत्नद्रसारहार च दधती कान्तकामुकीम।
इत्यादि[5]।

यहाँ और पुराणा की भाँति सरस्वती गगा तथा लक्ष्मी के कलह की कथा भी मिलती है जिससे ये तीनो देवियाँ मृत्युलोक में आयी। यहा ये तीना हरि की भार्या के रूप में मिलती ह लक्ष्मी सरस्वती गङ्गा तिस्रो भार्या हरेरपि। शाप के कारण लक्ष्मी तुलसी हुई। इनके ज म की कथा यो मिलती है कि रास मण्डल में कृष्ण

१ ब्रह्मववत पुराण —प्रकृति खण्ड – अ याय – ३, ७२–७८।
२ उपर्युक्त — ब्रह्म खण्ड ३, ६६–६७।
३ उपर्युक्त — ब्रह्म खण्ड ३, ६९।
४ उपयुक्त — ब्रह्म खण्ड ६, १।
५ ब्रह्मववत पुराण — प्रकृति खण्ड – २, ३०–३६।
६ उपयुक्त — प्रकृति खण्ड – ६, १७–४१।
७ उपयक्त — प्रकृति खण्ड – ६, १७।

के वाम अंग से एक देवी का जन्म हुआ। व देवी द्वादशवर्षीया थी— अतीव सुन्दरी श्यामा न्यग्रोधपरिमण्डला।' यथा द्वादशवर्षीया रम्या सुस्थिरयौवना [1]। य देवी स्वयम दा हो गयी स. च देवी द्विधा भूता [2] इनके वाम अंग से लक्ष्मी तथा दक्षिण अंग से राधिका हुई— तद्वामांशा महालक्ष्मीर्दक्षिणांशा च राधिका"[3]। ये दोनों— समा रूपेण वर्णेन तेजसा वयसा त्विषा। यशसा वाससा मूर्त्या भूषणेन गुणेन च। कृष्ण भी चतुर्भुज तथा द्विभुज दो रूप हो गये तथा द्विभुज रूप में भगवान् ने राधिका का ग्रहण किया तथा चतुर्भुज रूप में लक्ष्मी को।

द्विभुजो राधिकाकान्तो लक्ष्मीकान्तश्चतुर्भुज। गोलोके द्विभुजस्तस्थौ गोपगोपीभिरावृत।
चतुर्भुजश्च वैकुण्ठ प्रययौ पद्मया सह। सर्वांशेन समौ तौ द्वौ कृष्णनारायणौ परौ [5]॥

महालक्ष्मी ने योग से अपना नाना रूप धारण कर लिया—

स्वर्गे च स्वर्गलक्ष्मीश्च शक्रसम्पत्स्वरूपिणी। पतितेप च मर्त्येष राजलक्ष्मीश्च राजसु।
गृहलक्ष्मीर्गृहेष्वेव गृहिणी च कलांशया। सम्पत्स्वरूपा गृहिणा सर्वमङ्गलमङ्गला। इत्यादि॥

इनका एक रूप क्षीर सागर की कन्या का भी हुआ क्षीरोदसिन्धु कन्या सा श्रीरूपा पद्मिनीषु च'। 'इनकी पूजा पहिले नारायण ने की फिर ब्रह्मा ने तथा उसके उपरान्त शिव ने। उसके उपरान्त स्वयमभू मनु ने तथा ऋषियो गंधर्वों ने। नागो ने पाताल में इनकी पूजा की। चैत्र पौष तथा भाद्रपद में मंगलवार को इनकी पूजा करनी चाहिए। त्रिभुवन में वर्ष के अन्त में पौष की सक्रान्ति को मनुष्य इनकी पूजा करते हैं[1]। ये नारायण की प्रिया वैकुण्ठवासिनी वैकुण्ठ की अधिष्ठात्री देवी हैं।

ब्रह्मवैवर्त पुराण में इनके जन्म की एक और कथा या मिलती है कि एक समय दुर्वासा के शाप से इन्द्र की श्री नष्ट हो गयी। उस समय लक्ष्मी रुष्ट होकर स्वर्ग को छोड़ कर चली गयी। उस समय देवता दुःखित होकर नारायण के पास गए और उनकी आज्ञा से इन्होंने समुद्र मन्थन किया। तब लक्ष्मी की उत्पत्ति पुनः क्षीर सागर से हुई। उस समय इन्होंने सुरों को वर दिया और वर माला विष्णु को दी।

एक और कथा इस प्रकार की ब्रह्म वैवर्त पुराण में लक्ष्मी से सम्बन्धित मिलती है। एक बार लक्ष्मी ने कुशध्वज की कन्या के रूप में अवतार धारण किया। एक समय ये तपस्या कर रही थी कि रावण वहां आया उसने इनके साथ रमण करना चाहा, इस पर इन्होंने उसे शाप दे दिया कि वह सकुटुम्ब नष्ट हो जायगा। उसके

---

१ उपर्युक्त — प्रकृति खण्ड – ३५, ५।
२ उपर्युक्त — प्रकृति खण्ड – ३५, ७।
३ उपर्युक्त — प्रकृति खण्ड – ३५, १०।
४ उपर्युक्त — प्रकृति खण्ड – ३५, ८।
५ उपर्युक्त — प्रकृति खण्ड – ३५, १२।
६ उपर्युक्त — प्रकृति खण्ड – ३५, १४–१५।
७ उपर्युक्त — प्रकृति खण्ड – ३५, १८–२४।
८ उपर्युक्त — प्रकृति खण्ड – ३५, १९।
९ उपर्युक्त — प्रकृति खण्ड – ३५, २५–३०।
१० उपर्युक्त — प्रकृति खण्ड – ३६ १।
११ उपर्युक्त — प्रकृति खण्ड – ३६, ४–१०।

पश्चात इन्होंने अपनी देह छोड दी और दूसरे जन्म में सीता के रूप में अवतरित हुई।[१] इस प्रकार सीता को लक्ष्मी का अवतार बताया गया है।

लक्ष्मी कहाँ रहती है यह भी यहाँ बताया गया है और यह भी कहा गया है कि किन किन स्थानों से चली जाती है[२]। इनके ध्यान और पूजा की विधि भी यहाँ प्राप्त होती है। यह निम्नांकित है—

ध्यानं च सामवेदोक्तं यदुक्तं ब्रह्मणा पुरा। ध्यानेन हरिणा तेन तन्निबोध वदामि ते ॥९॥
सहस्रदलपद्मस्य कर्णिकावासिनीं पराम्। शरत्पार्वणकोटीन्दुप्रभाजुष्टकरां वराम् ॥१०॥
स्वतेजसा प्रज्वलन्तीं सुखदृश्यां मनोहराम्। प्रतप्तकाञ्चननिभां शोभां मूर्तिमतीं सतीम् ॥११॥
रत्नभूषणभूषाढ्यां शोभितां पीतवाससा। ईषद्धास्यप्रसन्नास्यां रम्यां सुस्थिरयौवनाम् ॥१२॥
सर्वसम्पत्प्रदात्रीं च महालक्ष्मीं भजे शुभाम्। ध्यानेनानेन तां ध्यात्वा चोपचारैः सुसंयुतः ॥१३॥
संपूज्य ब्रह्मवाक्येन चोपहाराणि षोडश। ददौ भक्त्या विधानेन प्रत्येकं मन्त्रपूर्वकम् ॥१४॥
प्रशस्यानि प्रहृष्टानि दुर्लभानि वराणि च। अमूल्यरत्नखचितं निर्मितं विश्वकर्मणा ॥१५॥
आसनं च विचित्रं च महालक्ष्मि प्रगृह्यताम् ॥१५॥[३]

आगे इन्द्र प्रार्थना करते हैं—

ॐ नमः कमलवासिन्यै नारायण्यै नमो नमः। कृष्णप्रियायै सारायै पद्मायै च न० ॥५२॥
पद्मपत्रेक्षणायै च पद्मास्यायै न०। पद्मासनायै पद्मिन्यै वैष्णव्यै च न० ॥५३॥
सर्वसम्पत्स्वरूपायै सर्वदात्र्यै न०। सुखदायै मोक्षदायै सिद्धिदायै न० ॥५४॥
हरिभक्तिप्रदात्र्यै च हर्षदात्र्यै न०। कृष्णवक्षःस्थितायै च कृष्णेशायै न० ॥५५॥
कृष्णशोभास्वरूपायै रत्नाढ्यायै न०। सम्पत्त्यधिष्ठातृदेव्यै महादेव्यै न० ॥५६॥
सस्याधिष्ठातृदेव्यै च सस्यलक्ष्म्यै न०। नमो बुद्धिस्वरूपायै बुद्धिदायै न० ॥५७॥
वैकुण्ठे च महालक्ष्मीर्लक्ष्मीः क्षीरोदसागरे। स्वर्गलक्ष्मीरिन्द्रगेहे राजलक्ष्मीर्नृपालये ॥५८॥
गृहलक्ष्मीश्च गृहिणां गेहे च गृहदेवता। सुरभिः सा गवां माता दक्षिणा यज्ञकामिनी ॥५९॥
अदितिर्देवमाता त्वं कमला कमलालये। स्वाहा त्वं च हविर्दाने कव्यदाने स्वधा स्मृता ॥६०॥
त्वं हि विष्णुस्वरूपा च सर्वाधारा वसुंधरा। शुद्धसत्वस्वरूपा त्वं नारायणपरायणा ॥६१॥
क्रोधहिंसावर्जिता च वरदा च शुभानना। परमार्थप्रदा त्वं च हरिदास्यप्रदा परा ॥६२॥
इत्यादि (ब्रह्मवैवर्त पुराण)[४]

लिंग पुराण में समुद्र मन्थन से लक्ष्मी की उत्पत्ति मिलती है, परन्तु अलक्ष्मी की उत्पत्ति होने के पश्चात् अर्थात् समुद्र से पहिले अलक्ष्मी निकलती हैं फिर लक्ष्मी। इस कारण अलक्ष्मी को यहाँ ज्येष्ठा भी कहा है। इसका संकेत श्रीसूक्त में भी मिलता है।[५] अलक्ष्मी का विवाह दुःसह से होता है। दुःसह उसे छोडकर पाताल चले जाते हैं। अलक्ष्मी भगवान् की आराधना करती है और उनके समक्ष भगवान लक्ष्मी

१ उपर्युक्त—प्रकृति खण्ड – १४, १–२१।
२ उपर्युक्त—प्रकृति खण्ड – ३८, २७–५५।
३ ब्रह्म वैवर्त पुराण—प्रकृति खण्ड – ३९, ९–१५।
४ उपर्युक्त—प्रकृति खण्ड – ३९, ५२–६२।
५ क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठामलक्ष्मीं—श्रीसूक्त।

के सहित प्रकट हो कर उनको वरदान देते है कि जहाँ उनकी पूजा न होती हो वहा वह रहे इत्यादि । यह लक्ष्मी नारायण के साथ प्राप्त होती है[१] एक बडी विचित्र बात यहाँ यह है कि न दक्ष की कन्याओ में लक्ष्मी का नाम मिलता है[२] जसा और पुराणो म मिलता है, न शिव-पावती विवाह मे जहाँ दिति अदिति सावित्री सरस्वती इत्यादि बहुत सी देवियो के नाम ह । यहाँ नारायणी नाम अवश्य मिलता है[३] परन्तु लक्ष्मी का नही ।

इसी पुराण में एक लक्ष्मी दान का प्रकरण प्राप्त होता है । उसम लक्ष्मी की मूर्ति बनाकर दान करने का निर्देश है । इसका विवरण यो है कि मडप तथा वेदी बना कर एक सहस्र सुवण मोहरो के सुवण से अथवा पाच सौ मोहरो के सुवण से या १०८ मोहरो के सोन से लक्ष्मी की मर्ति बनाई जाय । यह सब लक्षणो से युक्त हो तथा इसे वस्त्र और आभूषणो से सुसज्जित करके वेदी पर मण्डल बना कर उसके मध्य मे रखे (वह मण्डल कदाचित् श्रीचक्र हे) । फिर श्रीसूक्त से इनकी पूजा करे और उनके दक्षिण भाग में स्थण्डिल के ऊपर विष्णु गायत्री द्वारा विष्णु भगवान की अचना करे । उसके पश्चात् होम करे इत्यादि । यहाँ अभाय वश लक्ष्मी की मर्ति के स्वरूप का विवरण नही प्राप्त होता ।

नारद पुराण मे हमें जगत की उत्पत्ति का जो स्वरूप मिलता है उसमें महा विष्णु की माया को जगत को उत्पन्न करनेवाली शक्ति कहा है— तस्य शक्ति परा विष्णोजगत् काय प्रवर्तिनी ।[५] इस माया के विविध रूप ह जैसे दुर्गा, भद्रकाली चण्डी माहेश्वरी लक्ष्मी वष्णवी वाराही ऐन्द्री इत्यादि । उमति केचिदाहुस्ता शक्ति लक्ष्मी तथा परे[६] ये भी वसी ही सवव्यापी ह जसे विष्ण— यथा हरिजगदव्यापी तस्य शक्तिस्तथा मुन । यहा मातृकाओ का स्वरूप भी मिलता है तथा वाराही और वैष्णवी का स्वरूप भी ।

विष्णु को कमला कान्त[८] तथा कमला पति[९] कहा है । इनके वक्षस्थल पर श्रीवत्स के चिह्न का भी वर्णन है—'सर्वलिकार सयुक्तम श्रीवत्साकित वक्षसम्'[१०] । यह लोकोक्ति भी यहा मिलती है कि जहा शिव पूजा तथा विष्णु पूजा होती है वहाँ लक्ष्मी सदव बसती हैं ।[११] यह लोकोक्ति आज भी प्रचलित है । यहा वामन भगवान बलि से कहते है कि पथ्वी वष्णवी का भी कहत ह— 'पृथ्वी वष्णवी पुण्या पथ्वी विष्णपालिता ।'[१२] भू देवी का वष्णवी से सबन्ध इस काल तक कदाचित् जुड चुका था ।

१ लिंग पुराण — उत्तरार्ध – अध्याय ६ ।
२ लिंग पुराण — पूर्वार्ध – अध्याय ६३ ।
३ लिंग पुराण — पूवाध – अध्याय १०३ ।
४ लिंग पुराण — उत्तरार्ध – अध्याय ३६ ।
५ नारद पुराण — पूव खण्ड ३–६ ।
६ उपयुक्त — पूर्व खण्ड ३–१३ ।
७ उपर्युक्त — पूव खण्ड ३, १२ ।
८ उपयुक्त — पूर्व खण्ड २, १० ।
९ उपयुक्त — पूव खण्ड ४, ६४ ।
१० उपयुक्त — पूव खण्ड ४, ६५, ७०, २६, ३३, उ० ख० ५२, ७७ ।
११ उपयुक्त — पूव खण्ड ११–६ ।
१२ उपयुक्त — पूव खण्ड ११–६२ ।

महालक्ष्मी को विष्णु के दक्षिण रखना चाहिय तथा सरस्वती को वाम भाग में, यह निर्देश भी यहा मिलता है[१]। वासुदेव को भी लक्ष्मी सहित बनाने का आदेश प्राप्त होता है[२]। विष्णु के साथ इनकी पूजा करने का भी निर्देश है[३]। यहाँ श्रीकवच श्रीयन्त्र के विषय की तथा मन्त्र सिद्धि की भी सामग्री प्राप्त होती है।[४]

लक्ष्मी को यहा कमला कहा है[५] तथा यहा इनका कुबेर से भी सम्बन्ध दर्शाया गया [६]। शेष शायी भगवान विष्णु की प्रतिमा का वणन भी नारद पुराण में मिलता है। इसमें लक्ष्मी भगवान के चरण चाप रही है। इस प्रकार की अनन्त शायी भगवान विष्णु की अनेको मूर्तिया प्राप्त हुई ह।

माकण्डेय पुराण म लक्ष्मी को दत्तात्रेय की स्त्री कहा है तथा उनका स्वरूप बताते हुए कहा है कि इनका मुख चन्द्रमा की भाँति है ये कमल लोचनी और पीन पयोधरा ह, इनके शरीर से सुगन्ध निकल रही है, य मधुर भाषिणी तथा स्त्रियो के सभी गणो से विभूषित हं।

वामपार्श्वस्थितामिष्टामशेषजगता शुभाम ।
भार्यां चास्य सुचर्वाङ्गी लक्ष्मीमिन्दुनिभाननाम् ।
नीलोत्पलाभनयना पीनश्रोणिपयोधराम ।
गदन्ती मधुरा भाषा सर्वैर्योषिद्‌गुणयुताम् ।।

इनको असुर ले जाते ह परन्तु दत्तात्रय कहते ह कि असुर इनको सिर पर ल गय ह इसलिय य वापस आ जायँगी[८]।

महालक्ष्मी के स्वरूप को वणन करते हुए माकण्डय पुराण के देवी माहात्म्य म यह लिखा हुआ है कि गुप्त रूपी देवी के तीन अवतार ह लक्ष्मी महाकाली, सरस्वती, जो तीन तत्वो की प्रतिनिधि है राजस तामस सात्विक। लक्ष्मी को धन देनेवाली देवी कहा है। राजस गुणो की प्रतीक लक्ष्मी ह। इनके हाथ में मरूलुग अनार, गदा पात्र तथा योनियुक्त लिंग का वणन यहा मिलता है। य आदि शक्ति कही गयी ह[९]।

एक दूसरे स्थान पर लक्ष्मी का दक्ष की कन्या भी कहा है। जिन्हे धम ने पत्नी के रूप में स्वीकार किया[१०]। इनमें दप का जन्म हुआ श्रद्धा कामम् श्रीश्च दपम्[११]। यहा 'श्री तथा लक्ष्मी में कोई भद नही दिया है। श्री को देव देव नारायण का पत्नी भी कहा है[१२]।

१ नारद पुराण — पूव खण्ड ६६–७६, १०० ।
२ उपर्युक्त — पूव खण्ड ६६–८६ ।
३ उपर्युक्त — पूव खण्ड ७०–४५ ।
४ उपर्युक्त — पूव खण्ड ७०, १४६–१६०, ६८–१ ८२ ।
५ उपर्युक्त — पूव खण्ड ८६–७८ ।
६ उपर्युक्त — पूव खण्ड ८६–८२ ।
७ उपर्युक्त — उत्तर खण्ड ५२–७६ ।
८ माकण्डय पुराण — १८–३६, ४०, ४७ ।
९ गोपीनाथ राव — एलीमण्टस आफ हिन्दू आइकोनोग्राफी पृष्ठ ३३५–३३६ ३३७ ।
१० माकण्डय पुराण — ५०–२०, २१ ।
११ उपर्युक्त — ५०–२५ ।
१२ उपर्युक्त — ५२–१५ ।

मारकण्डेय पुराण में एक स्थान पर कहा है कि पद्मिनी नाम की विद्या की देवी लक्ष्मी है—"पद्मिनी नाम या विद्या लक्ष्मीस्तस्याश्च देवता इनकी निधियाँ है पद्म, महापदम, मकर, कच्छप, मुकुन्द, नन्द, नील तथा शंख। पदम सुवर्ण चाँदी इत्यादि देता है महापद्म रत्नों की प्रदाता है मकर शस्त्र इत्यादि देता है कच्छप निधि के प्रभाव से मनुष्य सूमड़ा हो जाता है यह तामसी निधि है, मुकुन्द निधि से गाने बजानेवालो के व्यापार से लाभ होता है। नन्द नामक निधि सब प्रकार के व्यापार में सहायता करती है, नील नामक निधि के प्रसन्न होने पर मनुष्य वस्त्र कपास, धानादि का संग्रह करता है तथा मूँगा मोती इत्यादि शंख-सीप इत्यादि के व्यापार से लाभ प्राप्त करता है, शंख नाम की निधि के प्रसन्न होने पर मनुष्य अपना भरण-पोषण सुख पूर्वक करता है।

अग्नि पुराण में श्री को विष्णु की पत्नी माना है[1] तथा इनकी मूर्ति विष्णु के साथ बनाने का आदेश दिया है। लक्ष्मी के हाथ में पद्म देने को कहा है "श्रीपुष्टि चापि कर्त्तव्या पद्म वीणा कराम्विते"[2]। श्री को विष्णु के और अवतारों के साथ बनाने को लिखा है जैसे नृसिंह इत्यादि अवतारों में— श्री पुष्टि संयुक्त कुर्यादलेन स भद्रया[3]" तथा 'दक्षिण वामके शंख लक्ष्मीर्वा पदमनवा[4]"। लक्ष्मी की मूर्ति बनाने में कहा है— 'लक्ष्मीर्याम्य कराम्भोजा वामे श्रीफल संयुता'।[5] लक्ष्मी के एक हाथ में पदम तथा दूसरे में श्रीफल होना चाहिये। श्रीफल बेल के फल को कहते हैं। इनको भद्रपीठ पर स्थापित करके श्रीसूक्त से इनकी षोडशो पचार पूजा करनी चाहिए[6]।

श्री पर्वत का भी वर्णन अग्नि पुराण में आया है तथा राजलक्ष्मी का भी। राजा को राजलक्ष्मी को अपने यहाँ स्थिर करने के हेतु जैसे इन्द्रपुरी में श्री की स्तुति की गयी थी वैसी करनी चाहिये। इस स्तुति में इन्हें सर्वलोकों की जननी पद्माक्षी विष्णु के वक्षस्थल पर स्थित कहा है।[8] इनको सर्व शक्तिमान कहा है जिनकी कृपा कटाक्ष से तुरन्त निर्गुण मनुष्य भी गुणवान हो जाते हैं[9]।

"त्वयाऽवलोकिता सद्य शीलाद्यैरखिलैर्गुणै। कुलैश्वर्यश्च युज्यन्ते पुरुषा निर्गुणा अपि।

स श्लाघ्य स गुणी धन्य स कुलीन स बुद्धिमान। स शूर स च विक्रान्तो यस्त्वया देवि वीक्षित॥'[9]

अग्निपुराण के ६४ वें अध्याय में विष्णु से वरुण का भी सम्बन्ध प्राप्त होता है तथा लक्ष्मी और अदिति का भी[10]।

---

१ अग्नि पुराण — २५-१३, १२-७-१७।
२ उपर्युक्त — ४४-४७।
३ उपर्युक्त — ६३-६।
४ उपर्युक्त — ४६-२।
५ उपर्युक्त — ५०-१५।
६ उपर्युक्त — ६२-१-१४।
७ उपर्युक्त — २१७-१३।
८ उपर्युक्त — २३७-१, २।
९ उपर्युक्त — २३७-१४, १५।
१० कुमार स्वामी — यक्षाज खण्ड २, पृ० ३४।

बाराह पुराण मे विष्णु के हृदय पर 'श्री या श्रीवत्स के चिह्न का विवरण प्राप्त होता है[१]। इसके साथ कौस्तुभ मणि भी है। यहा अष्ट मात्रिका मे वष्णवी का भी स्वरूप प्राप्त होता है[२]। अन्धकासुर के वध के समय रुद्र के क्रोध की ज्वाला से उत्पन्न होती है। वष्णवी को विष्णु की माया भी कहा है—'तिष्ठामि परमप्रीत्या माया कृत्वा तु वष्णवीम्[३]। वष्णवी का स्वरूप वष्णवी माहात्म्य मे बताया गया है। इनको या सा रक्तेन वर्णेन सुरूपा तनुमध्यमा। शङ्खचक्रधरा देवी वष्णवी सा कला स्मृता[४]' कहा है। इनको आग चल कर वष्णवी विशालाक्षी रक्तवर्णा सुरूपिणी' भी कहा है[५]। इनका स्वरूप भी इस प्रकार का है—'नीलकुञ्चितकेशान्ता बिम्बोष्ठायतलाचना। नितम्बरसनादामनूपुराढया सुवच्चसा[६]। य देवी 'सर्वाङ्ग शोभना देवी यावदास्ते तपोऽन्विता बताई गयी ह[७]। सौभाग्य व्रत के दान मे लक्ष्मी का हरि के साथ स्वरूप बनान का निर्देश प्राप्त होता है सलक्ष्मीक हरिं वापि यथाशक्ति प्रसन्नधी। ततस्तान् ब्राह्मणे दद्यात्पात्रभूते विचक्षण[८]।' शिला की प्रतिमा के प्राण प्रतिष्ठा क मन्त्र में पुराण पुरुष विष्णु को लक्ष्मी से युक्त बताया है—"योऽसौ भवाल्लक्षणलक्षितश्च लक्ष्म्या च युक्त सतत पुराण[९]"। विष्णु को श्री से युक्त रजत प्रतिमा में बनान का विधान प्राप्त होता है[१०]।

स्कन्द पुराण म २२ खण्ड ह परन्तु लक्ष्मी विषयक सामग्री यहाँ बहुत थोडी सी प्राप्त होती है। गन्धमादन पवत पर एक लक्ष्मीतीथ का वणन यहा मिलता है जहा स्नान करन पर युधिष्ठिर को प्रभूत धन की प्राप्ति हुई थी[११]। यहाँ यह वणन मिलता है कि इस तीथ म स्नान करन से नलकूबर न रम्भा को पाया[१२]। इसी तीथ में स्नान कर के कुबर महापदम के स्वामी हुए ह[१३]। इससे कुबर का तथा नलकूबर का सम्बन्ध लक्ष्मी से ज्ञात होता है। यहाँ श्री माता का ध्यान तथा उनकी पूजा प्राप्त होती है परन्तु इस माता से भारहुत की श्रीमा देवता के स्वरूप में अन्तर मिलता है—

श्रीमाता सा प्रसिद्धा च माहात्म्यमं शृणु भूपते।

कमण्डलु धरा देवी घण्टाभरणभूषिता। अक्षमालयुता राजञ्छुभा सा शुभरूपिणी। रक्ताम्बरधरा साधुरक्ता चन्दनचर्चिता। रक्तमाल्या दशभुजा पञ्चवक्त्रा सुरेश्वरी।[१४]

---

१ बाराह पुराण — १, २१, ३१–१७।
२ उपयुक्त — २७–३१।
३ उपयुक्त — १८७–१५।
४ उपयुक्त — ९०–३०।
५ उपयुक्त — ९१–५।
६ उपयुक्त — ९२–३, ४।
७ उपयुक्त — ९२–१५।
८ उपयुक्त — ५८–१५।
९ उपयुक्त — १८२–२३।
१० उपयुक्त — १८६–२।
११ स्कन्द पुराण — सेतु महात्म्य २१, १–६४।
१२ उपयुक्त — सेतु महात्म्य – २१, १९।
१३ उपर्युक्त — सेतु महात्म्य – २१, २०।
१४ उपयुक्त — धर्मारण्य महात्म्य – १७ ११–१४।

इस प्रकार इस देवी के यहा पाच मुख तथा दस हाथ मिलते ह । सम्भव है यह स्वरूप श्रीमाता का बाद में कल्पित हुआ हो जसे द्विभुजा वाली लक्ष्मी का पीछ के काल की चार भुजा वाली लक्ष्मी म परिवर्तित स्वरूप। यहाँ यह वणन प्राप्त होता है कि य देवी पूजित होन पर मन वाछित वर देती ह[१] ।

प्रणम्याङिघ्रयुगा तेभ्यो ददाति मनसेप्सितम्। इनके पूजन से श्रियोऽर्थी लभते लक्ष्मी भार्यार्थी लभते च ताम[२]।' इन देवी न कर्णाटक नामक दत्य का हथिनी रूप धर कर वध किया जो सदव स्त्री पुरुषो के बीच आकर विघ्न करता था[३]।

इस पुराण में यह भी वणन प्राप्त होता है कि इनकी पूजा वणिक लोग प्रतिवष करते ह[४] तथा शुभ कार्यों में भी इनकी सदा पूजा करते ह । इनको बलि देत ह तथा मधु क्षीर दधि घत और शकरा से इनकी पूजा करते ह धूप दीप चन्दन इनको अर्पित करते ह विविध धान्य तथा फल इनका भोग लगाते ह और दीपक अर्पित करते ह इत्यादि[५]। यह पूजा आज की दीवाली की लक्ष्मी की पूजन की भाति प्रतीत हाती है। लक्ष्मी का वास तुलसी में यहाँ वर्णित है[६] तथा लक्ष्मी को यहाँ समद्रजा कमला पद्मवासा कहा है। श्रियऽमृतकणोत्पन्ना तुलसी हरिवल्लभा ' इत्यादि[७]। लक्ष्मी जी हरि गौरी के पूजन से तथा तीज के व्रत से कसे प्राप्त होती ह यह कथा भी यहा मिलती है[८]। यहा गौरी पावती को लक्ष्मी की सौभाग्य दाता कहा है[९]।

वामन पुराण में लक्ष्मी बलि क पास जाती ह उनका स्वरूप यहा वर्णित है। इन लक्ष्मी जी की पदमनाभ की भाति प्रभा है इनके हाथ में कमल है। अथाभ्युपगता लक्ष्मीर्बलि पद्मान्तरप्रभा। पदमोद्यतकरा देवी वरदा सुप्रवशिनी[१०]" और फिर लक्ष्मी न बलि क शरीर मे प्रवेश किया[११]। ये बडी मनोहर स्वरूप वाली थी— 'एवमुक्त्वा तु सा देवी लक्ष्मी दत्यनृप बलिम्। प्रविष्टा वरदा सेव्या सवदेव मनोरमा।"

वामन भगवान न जब विराट रूप धारण किया उस समय लक्ष्मी उनके कटि भाग म स्थित हुइ अर्थात् परम पुरुष की पत्नी के रूप मे दिखाई दी[१२]।

कूर्म पुराण में प्रारम्भ में ही समुद्र मन्थन की कथा मिलती है तथा श्री की उत्पत्ति क्षीर सागर से कही गयी है तथा इनको नारायण की पत्नी भी कहा है— तदन्तरे भवेद्देवी श्रीर्नारायण वल्लभा[१३]।' ये विशालाक्षी

---

१ स्कन्द पुराण — धर्मारण्य महात्म्य – १७, १९।
२ उपर्युक्त — धर्मारण्य महात्म्य – १७, ३७।
३ उपर्युक्त — धर्मारण्य महात्म्य – १८, १–३।
४ उपर्युक्त — धर्मारण्य महात्म्य – १८, ५–६।
५ उपर्युक्त — धर्मारण्य महात्म्य – १८, ३०–३६।
६ उपर्युक्त — चातुर्मास — १७, १३।
७ उपर्युक्त — चातुर्मास – १७, २, ५।
८ उपर्युक्त — नागर खण्ड – १६८, १–७४।
९ उपर्युक्त — काशी खण्ड उत्तराध – ८७–३५।
१० वामन पुराण — २३, १३।
११ उपर्युक्त – २३, १८।
१२ उपर्युक्त — ३१, ६२।
१३ कूर्म पुराण — पूव – १–३०।

थी तथा पदमवासिनी थीं[1]। इनका रूप यहा चतुर्भज दिखाया है तथा इनके मस्तक पर माला का वणन है। चतुर्भजा शङ्खचक्रपदमहस्ता स्रगन्विता कोटिसूयप्रतीकाशा मोहिनी सवदेहिनाम्[2]। य विष्णु चिह्न से अंकित ह[3]। पुन इनको कमलायतलोचना कहा है तदा श्रीरभवद्देवी कमलायतलोचना। सुरूपा सौम्यवदना मोहिनी सवदेहिनाम्। शचिस्मिता सुप्रसन्ना मङ्गला महिमास्पदा। दिव्य कान्ति समायुक्ता दिव्यमाल्योपशोभिता[4] यहाँ लक्ष्मी की अचना के लिय भी निर्देश है तथा श्री मे और लक्ष्मी में यहाँ कोई भद नही ज्ञात होता तथा इनको भगवत्पत्नी भी कहा है। यथादेश चकारासौ तस्माल्लक्ष्मी समचयत श्रिय ददाति विपुलाम् पुष्टि मेधा यशो बलम। अर्चिता भगवत्पत्नी तस्माल्लक्ष्मी समचयत्[5]। भगवान विष्णु का श्रीपत भी कहा है[6]। महादेव क प्रसाद से पावती पूजन से लक्ष्मी (धन) की प्राप्ति का भी विवरण यहा प्राप्त होता है। — लभने महती लक्ष्मीम् महादेवप्रसादत[7]।

लक्ष्मी क प्रादुर्भाव की एक और कथा भी मिलती है। इसके अनुसार ख्याति नाम की दक्षसुता से भृगु न इन्हें उत्पन्न किया तथा सवलक्षणा से युक्त होन क कारण इनका नाम लक्ष्मी पडा। य नारायण की स्त्री हुइ — भृगो ख्यात्या समुत्पन्ना लक्ष्मी नारायणप्रिया। [8]।

अन्धकासुर का इन्ही विष्णु की देवी न वध किया था यह भी कथा यहाँ मिलती है[9]। नारायण के हृदय पर श्रीवत्स का चिन्ह है यह भी विवरण यहाँ प्राप्त होता है[10]। यहाँ विष्ण का नाम श्रीनिवास भी मिलता है[11]।

मत्स्य पुराण म श्रीदेवी की मूर्ति बनान को विधान प्राप्त होता है। यह प्रकरण इस प्रकार है

'श्रियं देवी प्रवक्ष्यामि नव वयसि सस्थिताम्। सुयौवनाम पीनगण्डा रक्तोष्ठी कुञ्चितभ्रुवम्॥
पीनोन्नतस्तनतटा मणिकुण्डलधारिणीम्। सुमण्डलम् मुख तस्या शिर सीमन्त भूषणम्॥
पद्मस्वस्तिकशङ्खर्वा भूषिता कुण्डलालक। कञ्चुकाबद्धगात्रौ च हारभूषौ पयोधरौ।
नागहस्तोपमौ बाहू केयूरकटकोज्वलौ। पद्म हस्त प्रदातव्य श्रीफल दक्षिण भुज॥
मखलाभरण तन्दत्तप्तकाचन सप्रभाम्। नानाभरणसपन्ना शोभनाम्बर धारिणीम्॥
पार्श्वे तस्या स्त्रिय कार्याश्चामरव्यग्रपाणय। पद्मासनोपविष्टा तु पद्मसिंहासनस्थिता॥

---

१ कूम पुराण पूव — १–३२, ३८।
२ उपर्युक्त — १, १९ स्रग – मस्तक पर धारण करनवाली फूल की माला का नाम है।
३ उपयुक्त — १–५५।
४ उपर्युक्त — २–७, ८, ९।
५ उपर्युक्त — २–२१, २२।
६ उपर्युक्त — ९–२५।
७ उपर्युक्त — १२, ३२३।
८ उपयुक्त — १३, १।
९ उपर्युक्त — १६, ३८–७४।
१० उपर्युक्त — १, ३०।
११ कूम पुराण उत्तराध — ३९, ८।

करिभ्या स्नाप्यमानाऽसौ भङ्गाराभ्यामनकश । प्रक्षालयन्ती करिणौ भङ्गाराभ्या तथा परौ ।।
स्तूयमाना च लोकशस्तथा गन्धवगुह्यक । तथव यक्षिणी काया सिद्धासुर निषेविता ।
(मत्स्य पुराण २६०।४०-४७)

इसके आगे यक्षिणी की मूर्ति बनान का विधान है। लक्ष्मी की मूर्ति विष्ण के साथ बनान का जो प्रकरण यहाँ प्राप्त होता है इसम विष्ण के वाम भाग म लक्ष्मी को बनान का निर्देश मिलता है[1] —

"वामतस्तु भवेल्लक्ष्मी पद्महस्ता शुभानना। गरुत्मानग्रता वाऽपि सस्थाप्यो भूतिमिच्छता ।।

इसी मूर्ति के पाश्व में श्री तथा पुष्टि की भी मूर्ति बनाने का निर्देश है। इस प्रकार इस काल तक लक्ष्मी, श्री तथा पुष्टि के अलग अलग ध्यान तथा अलग अलग मूर्तियाँ बनन लगी थी—

'श्रीश्च पुष्टिश्च कत्तव्ये पाश्वयो पदमसयुता ।"[2]

यहा वष्णवी देवी का अलग रूप भी दिखाया गया है इनके हाथ में लक्ष्मी की समुद्र से उत्पत्तिकी भी कथा यहा प्राप्त हाती है—'श्रीरनन्तरमुत्पन्ना घतात्पाण्डुरवासिनी'[3] तथा भगवान विष्णु के उनके ग्रहण करन की भी कथा जग्राह कमला विष्णु' कौस्तुभ'[4] वष्णवी की प्रतिमा बनाने के प्रसग म यहा कहा है कि वष्णव विष्णु सदृशी गरुडे समुपस्थिता । चतुर्बाहुश्च वरदा, शङ्ख चक्र-गदाधरा'[5] ।

श्रीदेवी की प्रतिमा का वणन यहा इस प्रकार मिलता है—

श्रिय देवी प्रवक्ष्यामि नव वयसि सस्थिताम् । सुयौवनाम पीनगण्डा रक्तौष्ठी कुञ्चितभ्रुवम् ।।
पीनान्नतस्तनतटाम मणिकुण्डलधारिणीम । सुमण्डलम मुख तस्या शिर सीमन्तभूषणम् ।
पद्म स्वस्तिक शखर्वा भूषिता कुञ्चितालक । कञ्चुकाबद्ध-गात्रौ च हारभूषौ पयोधरौ ।।
नागहस्तोपमौ बाहू केयूरकटकोज्ज्वलौ । पद्म हस्ते प्रदातव्यम् श्रीफल दक्षिण भुज ।।
मेखलाभरणा तद्वत्तप्तकाञ्चसप्रभाम । नानाभरणसपन्ना शोभनाम्बरधारणीम् ।।
पार्श्वे तस्यास्त्रिय कार्याश्चामरव्यग्रपाणय । पद्मासनोपविष्टा तु पद्मसिंहासनस्थिता ।।
करिभ्यास्नाप्यमानाऽसौ भृङ्गाराभ्यामनेकश । प्रक्षालयन्ती करिणौ भृङ्गाराचा तथा परौ[6] ।।

यक्षिणी की प्रतिभा भी यहाँ मिलती है वह भी श्री से मिलती हुई है । इनकी भी सुर सिद्ध सेवा करत का विवरण मिलता है[7] ।

गरुड पुराण में विष्णु को श्रीपति कहा है—

श्रीपतिं जगदाधारमशभक्षयकारकम् ।
व्रजामि शरण विष्णु शरणागतवत्सलम् ।।"[8]

---

१ मत्स्य पुराण — २५८, १२ ।
२ उपयुक्त — २५८, १३ ।
३ उपयुक्त — २५०, २ ३ ।
४ उपयुक्त — २५१—३ ।
५ उपयुक्त — २६१—२८, २६ ।
६ उपयुक्त — २६०—४०—४६ ।
७ उपयुक्त — २६१—४७ ।
८ गरुड पुराण — ६—१६ ।

जहाँ पितामही के रहते माता मर जाय वहाँ एक पिण्ड महालक्ष्मी के नाम देने की विधि गरुड पुराण म मिलती है। उसी से सपिण्डी करन को कहा है[1]। लक्ष्मीनारायण की मूर्ति बनाने के विषय में यहाँ केवल इतना मिलता है—

तस्या सस्थापयद्धम हरिं लक्ष्मीसमन्वितम्।
सर्वाभरणसयुक्तमायुधाम्बरसयुतम[2]॥'

इनकी पूजा कुकुम तथा पुष्प माला से करने का विधान प्राप्त होता है[3]।

वाय पुराण म यह कथा मिलती है कि स्वायम्भुव की सुता न लोक माताओ को उत्पन्न किया— स्वायम्भुवसुताया तु प्रसूत्या लोकमातर इनमें श्रद्धा लक्ष्मी धृतिस्तुष्टि पुष्टिर्मेधा क्रिया तथा [5] य सब धम को विवाही गयी[6]। लक्ष्मी के पुत्र हुए दप। कितना ठीक कहा है जहा लक्ष्मी है वहा दप का होना स्वाभाविक है। श्रद्धा काम विजज्ञ व दर्पो लक्ष्मीसुत स्मृत। य तथा अन्य सब धम के लडके हुए हं।

एक और स्थान पर स्वायम्भुव से इनका जन्म मेधा सरस्वती इत्यादि के साथ लिखा है—'स्वाहा स्वधा महाविद्या मधा लक्ष्मी सरस्वती'। यहाँ हमें श्रीवत्स का चिह्न विष्णु के हृदय पर भी प्राप्त होता है।[8] ऋषिवशानकीनम् में श्री को नारायण की पत्नी कहा है[9] फिर आग चलकर पुरन्दर इन्द्र को भी श्रीपति कहा है— तत्रास्ते श्रीपति श्रीमान सहस्राक्ष पुरन्दर। कृष्ण के चतुभुज रूप म श्री के सहित भी वणन मिलता है—'चतुर्बाहु सजज्ञ दिव्यरूप श्रियाऽन्वित[11]। इनके वक्षस्थल पर श्रीवत्स का चिह्न था[12]।

विष्णुधर्मोत्तर पुराण ने लक्ष्मी की उत्पत्ति की मीमासा की है और यह निणय किया है कि इनकी उत्पत्ति स्वायम्भुव मन्वन्तर में भृगु की दुहिता के रूप मे हुई है— स्वयम्भुवेऽन्तरे देवी भृगो सा दुहिता स्मृता[13]'। स्वारोचिष मन्वन्तर में अग्नि से[1], औत्तमस्य मन्वन्तर में जल से[15], तामस मन्वतर में

१ गरुड पुराण — १३–४३।
२ उपर्युक्त — १३–६५।
३ उपर्युक्त — १३–६७, ६८।
४ वायु पुराण— १०–२२।
५ उपर्युक्त — १०–२५।
६ उपर्युक्त — १०–२६।
७ उपर्युक्त — ९–८३–८५।
८ उपर्युक्त — २५–२५।
९ उपर्युक्त — २८–२।
१० उपर्युक्त — ३४–७५।
११ उपर्युक्त — ९६–११३
१२ उपर्युक्त — ९६–२०४।
१३ विष्णु धर्मोत्तर पुराण — १, ४१, ३३।
१४ उपर्युक्त — १, ४१, ३३।
१५ उपर्युक्त — १, ४१, ३४।

पृथ्वी से[1], रवत मन्वन्तर में बिल्व से, चाक्षुप मन्वतर में[2] उत्फुल्ल कमल से तथा ववस्वत मन्वन्तर में समुद्र मन्थन से जिन्हें हरि ने प्राप्त किया[3]। इस समुद्र से उत्पन्न लक्ष्मी का स्वरूप निम्नाकित है—

'देवी लक्ष्मीस्ततो जाता रूपेणाप्रतिमा शुभा ॥३२॥
यस्या शुभौ तामरसप्रकाशौ पादाम्बुजौ सप्ष्टतलाङ्गुलीकौ।
जङ्घे शुभे रोमविवर्जिते च गूढास्थिक जानुयुग मुरम्यम ॥३३॥
सुवणदण्डप्रतिमौ तथोरू चाभोग्यरम्य जघन घन च।
मध्य सुवृत्त कुलिशोदराभ वलित्रय चारुशभ दधानम ॥३४॥
उत्तुङ्गमाभोगिसम विशाल स्तनद्वय चारुसुवणवणम।
बाहू सुवत्तावतिकोमलौ च करद्वयम पद्मदलाग्रकान्ति ॥३५॥
कण्ठ च शङ्खाग्रनिभ सुरम्य पष्ठ सम चारु सिराविहीनम्।
कणौ शुभौ चारुशुभप्रमाणौ सम्पूणचन्द्रप्रतिम च वक्त्रम् ॥३६॥
कुन्दन्दुतुल्या दशनास्तथोष्ठौ प्रवालकाना प्रतिपक्षभूतौ।
स्पष्टा च नासा चिबुक च रम्य कपोलयुग्म शशितुल्यकान्ति ॥३७॥
उन्निद्रनीलोत्पलसन्निकाश त्रिवणमाकर्णिकमक्षियुग्मम्।
शिरोरुहा कुञ्चितनीलदीर्घा वीणव वाणी मधुरा शुभा च ॥३८॥
वस्त्र सुसूक्ष्मे विमल दधाना चन्द्राशतुल्यऽतिमनोभिरामे।
श्रोत्रद्वयनाप्यथ कुण्डल च सन्तानकाना शिरसा च मालाम ॥३९॥
गङ्गाप्रवाहप्रतिम च हार कण्ठेन शभ्र दधती सुवत्तम।
तथाङ्गदौ रत्नसहस्रचित्रौ हसस्वनौ चाप्यथ नूपुरौ च ॥४०॥
करेण पद्म भ्रमरोपगीत वडूयनाल च शभ गृहीत्वा।
स्वरूपमूढेषु सुरासुरेषु दृष्टि ददौ चारुमनोभिरामा ॥४१॥

इस विवरण में इनकी पूरी मूर्ति अङ्कित है।

विष्णधर्मोत्तर पुराण मे लक्ष्मी की मूर्ति बनाने का प्रकरण जहा आया है वहा हरि के समीप इनकी मूर्ति बनाने का जो विधान है, उसमें इन्हें दो भुजा वाली बनाने का आदेश दिया गया है तथा जब इनकी मूर्ति पथक बनाई जाय तब इसे चतुभुज बनान को कहा है। यह विवरण विष्णधर्मोत्तर पुराण के ततीय खण्ड म प्राप्त है, जो निम्नाकित है—

वज्र उवाच—

'आचक्ष्व रूप लक्ष्म्या मे भृगुवशविवधन। या माता सवलोकस्य पत्नी विष्णोमहात्मन ॥१

माकण्डेय उवाच—

हरे समीपे कर्त्तव्या लक्ष्मीस्तु द्विभुजा नृप। दिव्यरूपाम्बुजकरा सर्वाभरणभूषिता ॥ २ ॥
गौरी शुक्लाम्बरा देवी रूपेणाप्रतिमा भुवि। पथकचतुभुजा कार्या देवी सिहासने शुभे ॥ ३ ॥
सिंहासनेऽस्या कतव्य कमल चारुकर्णिकम्। अष्टपत्र महाभाग कर्णिकायान्तु सस्थिता ॥ ४ ॥

---

१ विष्णु धर्मोत्तर पुराण — १, ४१, ३४।

२ उपयुक्त — १, ४१, ३५।

३ उपयुक्त — १, ४१, ३६।

विनायकवदासीना देवी कार्या महाभुज । बहन्नाल करे काय तस्याश्च कमल शुभम ॥ ५ ॥
दक्षिण यादवश्रष्ठ केयूरप्रान्तसस्थितम । वामऽमृतघट कायस्तथा राज मनोहर ॥ ६ ॥
तयवान्यो करी कार्यौ बिल्वशूलधरौ नप । आवर्जितघट काय तत्पृष्ठ कुञ्जरद्वयम् ॥ ७ ॥
देव्याश्च मस्तके पद्म तथा काय मनोहरम । सौभाग्य तद्विजानीहि शङ्खमृद्धि तथापरम ॥ ८ ॥
बिल्व च सकल लोकमपा सारोमृत तथा । पद्म लक्ष्मीकरे विद्धि विभव द्विजपुङ्गव ॥ ९ ॥
हस्तिद्वय विजानीहि शङ्खपद्मावुभौ निधी । समुत्थिता वा कर्तव्या शङ्खम्बुजकरा तथा ॥१०॥
समुक्षिता महाभागा पद्म पद्मान्तरप्रभा । द्विभुजा चारुसर्वाङ्गी सर्वाभरणभूषिता ॥११॥
द्वौ च मौलीचरौ मूर्ध्नि कार्यौ विद्याधरौ शुभौ । कराभ्या मौलिलग्नाभ्या दक्षिणाभ्या विराजितौ ।
करोभ्या खड्गधारिभ्या देवीवीक्षणतत्परौ ॥१३॥
राजश्री स्वर्गलक्ष्मीश्च ब्राह्मी लक्ष्मीस्तथव च । जयलक्ष्मीश्च कर्तव्या तस्य देव्य समीपगा ॥१४॥
सर्वा सुरूपा कर्तव्यास्तथा च सुविभूषणा ॥१५॥
लक्ष्मी स्थिता सा कमल तु यस्मिस्ता केशव विद्धि महानभाव ।
विना कृता सा मधुसूदनन क्षण न सन्तिष्ठति लोकमाता[1] ॥१६॥

जब य दो भुजा वाली बनायी जाय तो इनके दोनों हाथो में कमल होना चाहिये तथा इन्हें सर्वाभरण भूषिता होना चाहिय[2]। जब इनका चतुर्भज स्वरूप हो तब इनके एक हाथ में कमल दूसरे में अमृत घट तीसरे में शख तथा चौथ में श्रीफल (बिल्वफल) होना चाहिय[3]। इनके पीछे दो हाथी अपनी सूडो में घट पकडे हुए सूड उठाये हुए इन्हें स्नान कराते दिखाना चाहिये तथा इनके मस्तक पर पद्म का छत्र होना चाहिये। इनको इनके चार स्वरूपा के साथ भी दिखान का निर्देश मिलता है जसे राज्य श्री, स्वग लक्ष्मी, ब्राह्म लक्ष्मी तथा जय लक्ष्मी । इस प्रकार का दशन हमें ममल्लीपुरम की लक्ष्मी के मन्दिर म प्राप्त होता है फलक १८ (यहाँ हमें लक्ष्मी के शख इत्यादि का क्या अथ है यह भी मिलता है । 'श्रीफल जगत को सकेत करता है कमल जल के अमत को शख सुख और समद्धि को घट अमत घट को जो समुद्र मन्थन से प्राप्त हुआ था तथा हाथी साम्राज्य को (विष्णु धर्मोत्तर पुराण ३, ८२ ८ १०)[4]। यहा लक्ष्मी का शख से सम्बन्ध मिलन से एसा ज्ञात होता है कि इस काल में भारत का समुद्र द्वारा व्यापार बहुत बढ़ गया था । जसा पहिले लिखा जा चुका है कि इनकी उत्पत्ति भी विविध मन्वन्तरो में जल से बिल्व से तथा कमल से कही गयी है इस कारण भी इनका सम्बन्ध बिल्वफल जल कमल इत्यादि से करना ठीक ही था । इस पुराण में हम लक्ष्मी नारायण की मूर्ति में लक्ष्मी को विष्णु के बाय बनाने का भी विधान मिलता है[5]। जसी लक्ष्मी हमे मौन व्रती खजुराहो के विष्णु के साथ मिलती है जिनका विवरण आग दिया जायगा । शष शायी भगवान् विष्णु की मूर्ति के साथ जो लक्ष्मी बन उनके गोदी में नारायण

---

१ विष्णु धर्मोत्तर पुराण — ३, ८२, १–१६ ।

२ उपयुक्त — ३, ८२, २ ।

३ उपयुक्त — ३, ८२, ६–७ ।

४ उपर्युक्त — ३, ८२, ७ ।

५ स्टेला कामरिश — विष्णु धर्मोत्तर पुराण — प० १०६–१०७, विष्णु धर्मोत्तर पुराण — ३, १०५, ४२, ४३ में भी शख तथा पद्म को निधि कहा है ।

६ वृन्दावन भट्टाचार्या — इण्डियन इमेजेज पृष्ठ १३ फुट नोट १ ।

का एक पद होना चाहिये— देवदेवस्तु कर्तव्यस्तत्र सुप्तश्चतुर्भुज एकपादोऽस्य कर्तव्यो लक्ष्म्युत्सङ्गगत प्रभो [1]। एक दूसरे स्थान म शेष शायी भगवान के साथ लक्ष्मी का स्वरूप या मिलता है 'लक्ष्मीसवाह्यमानाङ्घ्रि कमलद्वयराजित [2]। इसी प्रकार की मूर्ति हम देवगढ़ के शयनायी भगवान् के रूप मे प्राप्त है। इस पुराण म लक्ष्मी को प्रकृति तथा विष्णु को पुरुष भी कहा गया है[3]— प्रकृति सशुभा लक्ष्मी विष्णु पुरुष उच्यते इनको विष्णु के वक्षस्थल पर स्थित कहा है तथा इनका वर्णन पद्माननाम पद्मकराम् शशाङ्कसदृशाम्बराम् किया है तथा इनको सवलोक का हित करनवाली सबकी जननी एव त्रिभुवन की ईश्वरी कहा है— हितस्था सवलोकस्य वरदा कामरूपिणीम् । सवगा सवजननी देवी त्रिभुवनेश्वरीम्[4] । तथा इनको विशालाक्षी भी कहा है[5]। इनका सम्बन्ध विष्णुधर्मोत्तर पुराण मे इन्द्र से स्वग लक्ष्मी शची के रूप मे किया गया है तथा काल की स्त्री के रूप मे भी । इनके व्रत तथा पूजन का विधान चैत्र शुक्ल द्वितीया से चैत्र शुक्ल पचमी तक का प्राप्त होता है[8]।

विष्णुसहस्रनाम म विष्णु को—

श्रीवत्सवक्षा श्रीवास श्रीपति श्रीमतावर ।
श्रीद श्रीश श्रीनिवास श्रीनिधि श्रीविभावन ।
श्रीधर श्रीकर श्रेय श्रीमाँल्लोकत्रयाश्रय ।

कहा है[9] तथा इन्हे लक्ष्मीवान[10] श्रीगर्भ[11], मदिनीपति[12] और महीभर्ता[13] भी कहा है। इस प्रकार इनकी तीन पत्नियाँ यहा मिलती है—श्री लक्ष्मी तथा पृथ्वी । यहाँ श्री और लक्ष्मी का कोई भेद नही दिखाई देता ।

देवीभागवत का उप पुराणो म एक विशिष्ट स्थान है इसके नवम खण्ड में सृष्टि के उत्पत्ति के समय प्रकृति ही दुर्गा राधा सावित्री लक्ष्मी एव सरस्वती के रूप में आविर्भूत होती है—

गणेश जननी दुर्गा राधा लक्ष्मी सरस्वती ।
सावित्री च सृष्टिविधौ प्रकृति पञ्चधा स्मृता ।[14]

---

१ विष्णु धर्मोत्तर पुराण — ३, ८१, ३ ।
२ उपर्युक्त — ३, १०७, ८। जे० एन० बानर्जी — डेवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकोनोग्राफी — प्लेट २२–२ ।
३ उपर्युक्त — १, ४१, १० तथा ३, १२६, २–३ ।
४ उपर्युक्त — ३, १०६, २६।
५ उपर्युक्त — २, १०६, ३० — इनको जगतमाता भी है कहा — ३–८१ ।
६ उपर्युक्त — ३, १०६, ३१ ।
७ स्टेला क्रामरिश — विष्णु धर्मोत्तर पुराण — प० ७४ तथा १०२ ।
८ उपर्युक्त — ३, १५४ १–१५ तथा ३, १२६, २–३, १३० ।
९ विष्णु सहस्रनाम — ७७, ७८ ।
१० उपर्युक्त — ५३ ।
११ उपर्युक्त — ५४।
१२ उपर्युक्त — ७० ।
१३ उपर्युक्त — ३३ ।
१४ देवी भागवत — खण्ड ९, १, १ ।

इस भागवत में लक्ष्मी सरस्वती ब्रह्म श्री तथा गगा तीनो ही हरि की भार्या के रूप में वर्णित है— लक्ष्मी सरस्वती गङ्गा तिस्रो भार्या हरेरपि । सरस्वती न लक्ष्मी को एक बार क्रोध करके श्राप दिया कि शीघ्र वृक्ष तथा सरित स्वरूप धारण करना होगा ।[२] इस श्राप के फलस्वरूप लक्ष्मी को पद्मावती नाम से भारत म सरित रूप ग्रहण करना पडा तथा तुलसी का पेड भी बनना पडा । पीछे चल कर अश रूप से लक्ष्मी को धम-ध्वज राजा के यहा तुलसी नाम्नी कन्या के रूप म उत्पन्न होना पडा और शखचूड नामक असुरेन्द्र से विवाह करना पडा ।[३] राजा धमध्वज की इस तुलसी नाम की कन्या के जन्म तथा उनके विवाह इत्यादि की कथा भी यहाँ प्राप्त होती है इनकी हथली तथा पदतल लाल वण के थ । नाभी गहरी थी इसके ऊपर त्रिवली शोभायमान थी। इनके नितम्ब गोल थ । उनका वण पीत था[४] । शखचूड न तुलसी को वरुण प्रदत्त दो वस्त्र तथा रत्नमाला भेंट की । स्वाहा द्वारा लाए हुए मजीर नूपुर दिये, चन्द्रमा की पत्नी से छीन हुए दो कुण्डल अर्पित किय तथा सूय की पत्नी के केयूर तथा रति की अगूठी इत्यादि रत्न तथा शख दिय[५] जो लक्ष्मी के शरीर पर शोभायमान हुए । यहा चतुभुज नारायण का स्वरूप भी प्राप्त होता है जिसम लक्ष्मी, सरस्वती और गगा उनकी सेवा करती हुई दिखाई देती ह[६] ।

लक्ष्मी की उत्पत्ति की कथा यहाँ यो वर्णित है कि सृष्टि के आदि में कृष्ण के वाम अश से रास मण्डल के समय य देवी प्रकट हुइ— सृष्टरादौ पुरा ब्रह्मकृष्णस्य परमात्मन । देवी वामाश सभूता बभूव रासमण्डले[७] ।। ' ये अति सुन्दरी श्याम आभा मण्डल से आच्छादित द्वादश वष की स्थिर यौवना थी। इनकी आभा श्वेत चम्पक के समान थी । पूर्णिमा के चन्द्र के समान मुख था । आखे शरद् ऋतु के विकसित कमल दल के समान थी । यह सहसा दो रूपो में विभक्त हो गयी—एक चतुभुज तथा दूसरा द्विभुज । चतुर्भुज रूप से लक्ष्मी को और द्विभुज रूप से राधा को कृष्ण ने अपनी प्रिया बनाया । इसी कारण राधाकान्त द्विभुज तथा लक्ष्मीकान्त चतुभुज हुए[८] । चतुभुज भगवान लक्ष्मी सहित वकुण्ठ में गय । लक्ष्मी ने वहाँ योग द्वारा अनक रूप धारण किय । स्वग में स्वगलक्ष्मी इन्द्र की सम्पत्ति स्वरूपिणी, पाताल म नागलक्ष्मी राजाओ के यहाँ राज्यलक्ष्मी साधारणजनो में गृहलक्ष्मी सम्पत्ति स्वरूपा सवमगल को देनवाली ह[९] । य वषभ तथा गायो को उत्पन्न करनवाली ह । यज्ञ म दक्षिणा के रूप म अवतरित हुई तथा क्षीर सिन्धु की कन्या श्रीरूपा पद्मिनी के रूप मे अवतरित हुई और शोभा के रूप म सूय तथा चन्द्र मण्डलो में य पहुची[१०] ।

---

१ देवी भागवत — खण्ड ६, ६, १७ ।
२ उपयुक्त — खण्ड ६, ६, ३३ ।
३ उपयुक्त — खण्ड ६, ६, ४५–४६ ।
४ उपयुक्त — खण्ड ६ १७ ।
५ उपयुक्त — खण्ड ६, १७, १०–१२ ।
६ उपयुक्त — खण्ड ६, १६, १८–२५ ।
७ उपयुक्त — खण्ड ६, १६, ५० ।
८ उपर्युक्त - खण्ड ६, ३६, ४ ।
६ उपयुक्त -- खण्ड ६, ३६, ५–१३ ।
१० उपयुक्त — खण्ड ६, ३६, १४–२० ।

विभूषणो में रत्न में वस्त्रो में जल में प्रतिमा में मगलघर में सस्कृति के स्थानो में माणिक में, मुक्ता की माला में, हीरे मे दुग्ध में चन्दन में नव वक्ष शाखाओ म तथ नय मेघ म इनका वास हो गया। इनकी सवप्रथम पूजा नारायण ने की[1]। ब्राह्मणो को भाद्रपद की अष्टमी के दिन इनका पूजन करना चाहिय तथा चत्र, पौष तथा भाद्रपद मे मगलवार को पूजन करना चाहिये। पौष की सक्रान्ति को भी इनकी पूजा करनी चाहिय।[2]

लक्ष्मी का पृथ्वी पर सागर की कन्या के रूप मे अवतरित होन का कारण यहाँ दुर्वासा का शाप कहा गया है[3] तथा इनकी पुन प्राप्ति क्षीर सागर के मन्थन से हुई[4] यह विवरण प्राप्त है। इनका ध्यान इस प्रकार वर्णित है—

सहस्रदलपद्मस्थकर्णिका वासनीं पराम्। शरत्पावणकोटीन्दुप्रभामुष्टिकरा पराम । प्रतप्तकाञ्चन निभशोभाम् मूर्तिमती सतीम् रत्नभूषणभूषाढया शोभिता पीतवाससा।। ईषद्धास्या प्रसन्नास्या शश्वत्सुस्थिर यौवनाम्[5]।

इनकी पूजा में इनको कमला[6] कमलवासिनी[7] कमलालया[8] पद्मपत्र क्षणाय पद्मस्थाय पद्मासनाय, पवित्र्य तथा वष्णवी[9] के विशषण दिये गये ह। इनको अदिति भी कहा है[1] — अदिति देवमाता च कमला कमलालया[1]। इनको वसुन्धरा भी कहा है[11]। कुबर से भी इनका सम्बन्ध यहाँ मिलता है (देवी भागवत, ६, ४२ ४३)। इनका मन्त्र—'ओ श्री लक्ष्मी कमलवासिन्य स्वाहा सिद्ध होने पर ये रत्न विभूषित विमान पर चढकर वर देने जाती ह जिससे सप्त द्वीपी यह पृथ्वी वसे ही चमक जाती है जसे चन्द्र की किरण चाँदनी से— रत्न द्रसारनिर्माण विमानस्था वरप्रदा। सप्तद्वीपवतीम पथ्वीम् छादयन्ती चन्द्रसमप्रभाम्[2]।

महिषासुर को मारनवाली शुम्भ निशुम्भ को मारनवाली देवताओ के तेज से उत्पन्न देवी को भी यह कहा है कि क्रम से य सरस्वती तथा लक्ष्मी का स्वरूप धारण करती है— काल्याश्चव महालक्ष्म्या सरस्वत्या क्रमेण च[13]।

यहाँ देवी आदिस्वरूपा सवशक्तिमती सबको उत्पन्न करनवाली ह जिनसे अनको लक्ष्मी सरस्वती ब्रह्मा विष्णु उत्पन्न होते हं ये सब को प्रेरित करनवाली कही गयी ह। इन्ही को सष्टि का आदि कारण भी कहा गया है[1]। यह कदाचित वही स्वरूप ह, जिसकी भारत के आदिवासी पूजा करते थ और जो पीछ चलकर आयदेवी में परिणत हुई।

---

१ देवी भागवत — खण्ड ६, ३६, २१–२४।
२ उपर्युक्त — खण्ड ६, ३६, २७–२६।
३ उपर्युक्त — खण्ड ६, ४०, ४१।
४ उपर्युक्त — ६, ४१, ५२, ड५५।
५ उपर्युक्त — ६, ४२, ८–१०।
६ उपर्युक्त — ६, ४२, ३१।
७ उपर्युक्त — ६, ४२, ४२।
८ उपर्युक्त — ६, ४२, ५८।
६ उपर्युक्त — ६, ४२, ५२।
१० उपर्युक्त — ६, ४२, ५८।
११ उपर्युक्त — ६, ४२, ५६।
१२ उपर्युक्त — ६, ४२, ४७।
१३ उपर्युक्त — १०, १२, ८२।
१४ उपर्युक्त — खण्ड ३, ३–१–६७।

हमें महालक्ष्मी व्रत की कथा भविष्योत्तर-पुराण में प्राप्त होती है। इसम चिल्ल देवी तथा चोल देवी की कथा मिलती है। यहा लक्ष्मी के स्वरूप का चदन तथा अगर से बनान की प्रक्रिया प्राप्त होती है। इसमें लक्ष्मी का स्वरूप निम्नांकित है—

शुभ्रवस्त्र परिधानाम मुक्ताभरणभूषिताम। पद्मासनसस्थाना स्मेराननसरोरुहाम् ॥
शारदेन्दुकलाकान्तिस्निग्धनत्रा चतुर्भुजाम। पद्मयुग्मामभयदा वरयग्रकराम्बुजाम् ॥
अभितो गजयुग्मेन सिच्यमाना कराम्बुना[1]।

अहिर्बुध्न्य सहिता के मातका चक्र म लक्ष्मी का ध्यान करन को कहा गया है[2] यह ध्यान इस प्रकार है—

गोक्षीरशङ्खहिमदीधितिदेवसिन्धुकुन्दप्रभा विमलपङ्कज शङ्खहस्ता।
स्मेरप्रसन्नवदना कमलायताक्षी ध्यया स्वचक्रभवनोपरि मातका सा ॥
आलोलशूलदशक त्रियुगाधिक स्वहस्तर्द्विरष्टभिरथो दधती जपामा।
चिन्तामणिस्थितिमती नयनत्रयाढया शक्तिर्हरेरिति मुने मनसा विचिन्त्या ॥
पूर्णेन्दुशीतलरुचिर्धृतबोधमुद्रा बाह्यान्तरस्थनिजबोधनपुस्तकाढ्या।
देवी परा परमपुरुषदिव्य शक्ति चिन्त्या प्रसन्नवदना सरसीरुहाक्षी ॥
पद्मारुणाभयवराङ्कुशपाशहस्ता रक्ताम्बरा विपुलवारिजपत्रनेत्रा।
सूक्ष्मप्रभास्थितपरावरतत्त्वजाता चिन्त्याऽदिशक्तिरपि सा च परावराख्या ॥
बाहुस्थपाशवलिनाखिलजीववर्गा बन्धूकपद्मकुसुमारुणदेहकान्ति।
पीनस्तनी मदविघूर्णितनत्रपद्मा लक्ष्मीशपाश्वनिलयाऽखिलदेवतेयम् ॥
वक्त्राग्रनासि निशिताङ्कुशकीलितेन नम्रेण जीवनिकरेण समीड्यमाना।
दिव्यकुशस्तिमती हरिशक्तिराद्या ध्यया समाधिनिरतेन महाप्रभावा ॥

कालिका-पुराण में श्री' तथा इन्द्र के सम्बन्ध की कथा प्राप्त होती है[3]। अत्रि-सहिता या समूत अचनाधिकरणम् में[4] लक्ष्मी की अचना की विधि का निर्देश करन वाल चार ऋषियो के नाम मिलते ह—अत्रि मरीची, भृगु तथा काश्यप। ये सब ऋषि वदिक काल के ह तथा गोत्र प्रवतक भी माने गय ह। इस कारण एसा अनुमान होता होता है कि इनके गोत्र म उत्पन्न ऋषियो ने इनकी अचना को आर्यों में प्रचलित करने का काम किया होगा। वखानसीय काश्यप ज्ञान खण्ड[5] में हम विष्णु तथा उनकी दो पत्नियो की मूर्तियो के बनान के विषय मे पूरी सामग्री प्राप्त होती है। अत्रि सहिता के अनुसार यदि विष्णु के साथ उनकी पत्नियो की मूर्ति बनाई जाय तो सारे गाव की समृद्धि होती है[6]। यदि विष्णु का विवाह मनाया जाय तो गाव की स्त्रियो का पुत्र तथा पौत्र प्राप्त होग।

१ महालक्ष्मी व्रत कथा — लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस स० १६७२ श्लोक ५९–६१।
२ अहिर्बुध्न्य सहिता — देवशिखा मणिना रामानुजाचार्येण सम्पादिता तथा सशोधिता — शका० १८३९ पूर्वार्धम् अध्याय २४–१४–१९।
३ कालिका पुराण — १, ९, १०४।
४ सम्पादक — पी० रघुनाथ चक्रवर्ती भट्टाचाय 'श्री वेंकटेश्वर ओरियण्टल सीरीज ६ तिरुपति १९४३।
५ काश्यप सहिता सम्पादक — श्री पाथ सारथी भट्टाचाय – तिरुपति – १९४८।
६ अत्रि सहिता — ४, ३३।
७ अत्रि सहिता — ३९, ५५ ऐसी एक मूर्ति काशी में मिली है फलक २०।

अत्रि सहिता में यह लिखा है कि लक्ष्मी का पूजन एक निश्चित तिथि का करन से श्री' की प्राप्ति होती है। यही बात हमें काश्यपसहित मे भी मिलती है[1]। सुख की कामना करन वाल को शुक्रवार को 'श्री की पूजा पुष्प माला सुगन्धित द्रव्य, तुलसी, केशर इत्यादि से करना चाहिये[2] एसा आदेश अत्रि सहिता मे है।

काश्यप सहिता में श्री के दो स्वरूपा को भिन्न भिन्न दिखाने का प्रयत्न किया गया है — एक राज्यश्री तथा दूसरी ब्रह्मश्री। राज्यश्री को धन समृद्धि का द्योतक बताया गया है तथा दूसरी ब्रह्मश्री को ज्ञान का[3]। जो ध्यान यहा श्री' का प्राप्त होता है वह एक सुन्दर स्त्री का है, जिसकी प्रभा पद्म की भाँति है जिसके नत्र पद्म की भाति ह जो पद्म की माला धारण किये हुए है हाथ म पद्म लिये हुए है जो सर्वाभरण भूषिता है जिसके स्तन सुवण कुम्भ की भाँति ह इत्यादि। इनके पव के पूजन के विषय में भी यहाँ प्रचुर मात्रा म सामग्री प्राप्त होती है[4]।

भक्तमाल में लक्ष्मी को कमला कहा गया है तथा वहा इनका निरूपण विष्णु की शक्ति के रूप मे है[5]।

नीलमत पुराण म जिसमें विशष रूप से काश्मीर का विवरण प्राप्त है[6] लक्ष्मी केशव के साथ पूजित होती हुई दिखाई देती है।

आराध्य केशव चापि तथा लक्ष्मीम चोदयत[7]।

इनमें और रमा मे कोई अतर नही है[8]। इनकी प्रायना निम्नाकित रूप मे की गयी है तथा इनकी उत्पत्ति क्षीर सागर से कही गयी है—

"त्वमव परमाशक्तिबहुभिमत्रिभि स्तुता। क्षीरोदकन्ये विरज पवित्र मङ्गलास्पदे ।।३६८।।
त्वमेव देवी कश्मीरा त्वमेवोमा प्रकीर्तिता। त्वमेव सवदवीनाम मूर्तिभिर्देवि सस्थिता
न त्वया सादृशी काचिदिह देवी नमोऽस्तुत ।।३७०।।
प्रसीद मातर्जगदेकलक्ष्मि प्रसीद देवेशि जगन्निवासे। प्रसीद नारायणि शकरेशि प्रसीद पद्म कमलाङ्किते म।।३७१।।
वतस्तमम्भस्तव तायमिश्रम पायूषयुक्तम मधु चास्ति मात।
स्नातस्त्वदम्भस्यपि पापमग्ना सद्योविमुक्ता विमलीभवन्ति ।। ३७२।।

काश्मीर में 'श्री वितस्ता के रूप में बहती है—

नदी भूत्वा च कश्मीरान् गच्छन्ती वाक्यमब्रवीत[9]।

---

१ अत्रि सहिता — ४६, ५८, काश्यप सहिता — परिच्छेद – ३८।
२ उपर्युक्त — ४७, १६।
३ काश्यप सहिता — परिच्छेद ८।
४ उपयुक्त — परिच्छेद — ८–९०।
५ जी० ग्रियसन — जे० आर० ए० एस० १९१० पृ० २७०।
६ नीलमत पुराण— राम लाल कजीलाल तथा प० जगदधार जद्दू—मातीलाल बनारसी दास १९२४। वह ग्रन्थ छठवीं या सातवीं शताब्दी का ज्ञात होता है — प्राकथन — प० ७ बूहलर की रिपोट पृ० ४१।
७ उपर्युक्त —पृष्ठ २६ श्लोक २ ३०७।
८ उपर्युक्त —पृष्ठ ३० – ३६५, ३६६।
९ नीलमत पुराण —पृ० ३१ – ३७४ तथा ३८०।

केशव से अलग हो कर इनको दुःख हुआ —

केशवेनवमक्ता तु लक्ष्मी शोकसमन्विता । ३६६

इस कारण वितस्ता नदी का पानी क्षीरसमुद्र के अमृत से युक्त है —

वतस्तमम्भ सह स धवन यक्तम यया क्षीरमिवामृतेन[1] ।

इनका स्वरूप कसा है —

लावण्यमुक्त च यथव रूप शीलेन युक्त च यथा श्रुत स्यात ।
शौय यथा स्याद्विनयन युक्त धर्मेण यथा स्याद द्रविणन युक्तम ।।
मूर्तियुता वा सजयव राजन कामो यथास्या मनसोपपन्न ।
रत्न यथा स्यात्कनकन युक्तमायथा स्वस्तियुत नवीर ।
सम्मानयुक्तश्च यथव लागस्तथव सा तत्र तदा बभूव[2] ।

लक्ष्मी यहाँ कीर्ति, धृति मेधा इत्यादि के साथ भी मिलती है —

लक्ष्मी कीर्तिधृतिर्मेधा तुष्टि श्रद्धा क्रिया मति[3] ।'

इनकी पूजा और देवी देवताओ के साथ नव वष के आरम्भ में चत्र शुक्ल प्रतिपदा को श्री की प्राप्ति के हेतु करन का विधान यहाँ मिलता है[4] । श्री पचमी को श्री की पूजा का विधान भी मिलता है यह चत्र शुक्ल पचमी को होती है[5] । इसके पूजन से लक्ष्मी का कभी नाश नही होता ।

कार्तिक की अमावस्या को दीपमाला का भी विवरण यहा प्राप्त होता है जिसे आज हम दिवाली अथवा दीपावली का त्योहार मानते ह । परन्तु इसमें लक्ष्मी पूजन का कही विवरण नही है । स्थान स्थान पर दीपक रखन का विधान है। अपने को नय वस्त्र तथा अलकारो से सुसज्जित करन को नीलमुनि कहते ह तथा अच्छे अच्छ भोजन पदार्थों को सेवन करने को कहते ह । इत्यादि[6] । शुक्ल पक्ष की एकादशी के पूजन में एक हरि की प्रतिमा का वणन मिलता है जिसे आषाढ मास म बनाना चाहिय[7] । यह शेषशायी भगवान् की प्रतिमा है जिसमें लक्ष्मी भगवान् का चरण चाप रही ह । यह प्रतिमा ताम्र की बने चाहे अरकूट की अथवा रजत की ।

आषाढमासे प्रतिमा केशवस्य तु कारयत ।
सुप्ता च शषपयङ्के शैलमृद्धमदारुभि ।।५१७।।
ताम्रारकूटरजत चित्र वाऽपि निवशयत् ।
लक्ष्म्युत्सङ्गतौपादौ तस्या तस्य च कारयत्।' ५१८।।[8]

---

१ नीलमत पुराण — पृ० ३२ – ३६० ।
२ उपयुक्त — पृ० ३२ – ३६०–३६२ ।
३ उपयुक्त — प० ५८ – ७०१ ।
४ उपयुक्त –प० ५६–३८५ ।
५ उपर्युक्त — प० ६२–७६६ ।
६ उपयुक्त—पृ० ४२–५०५ से ५१५ ।
७ उपयवत — पृष्ठ ४३–५१७ ।
८ उपर्युक्त — पृष्ठ ४३ ।

एकादशी की रात्रि को जागरण करना चाहिये तथा प्रतिमा का पूजन करना चाहिय । गीत नृत्य वाद्य का आयोजन हो पुराण का पाठ हो । पुष्प, धूप नवद्य इत्यादि से पूजा की जाय दीप दान किया जाय। माल-पूआ शाक अच्छे अच्छे फल इत्यादि नवद्य म रखे जाय। रक्तसूत्र तथा च दन चढाया जाय और दान किया जाय। पच रात्रि पूजन का विधान करके इस प्रतिमा को नदी के तीर पर उत्सग करना चाहिय। इस प्रकार की गुप्त युग की कई प्रतिमाएँ मिली ह् जसा हम आगे देखगे ।

पुराणो में लक्ष्मी तथा श्री में कोई भेद नही ज्ञात होता। इनके स्वग लक्ष्मी गह लक्ष्मी राज्य लक्ष्मी इत्यादि रूप भी प्राप्त होते हैं जसा पहिल लिखा जा चुका है। यहा ये विष्णु पत्नी, नारायण की पत्नी, परम पुरुष की पत्नी के रूप में प्राय मिलती ह। पुराण काल तक इनका यक्षो से सम्ब ध टूट चुका था ऐसा पुराणो के देखने से ज्ञात होता है। यहाँ हमें इनका गज लक्ष्मी का स्वरूप, पद्म हस्ता पद्म वासिनी का स्वरूप, विष्णुप्रिया का स्वरूप शषशायी भगवान के साथ उनके चरण चापते हुए वष्णवी का स्वरूप इत्यादि प्राप्त होता है। इनका सम्ब ध शख से पद्म से जल से, बिल्वफल से कुजरो से अमृतघट से, धन से प्राप्त होता है। इन वस्तुओं का अथ भी यहा प्राप्त होता है ।

लक्ष्मी का वाहन आज उल्लू माना जाता है तथा विष्णु की पत्नी होन के नाते गरुड भी कहा जाता है, परन्तु ये कल्पनायें पीछे के काल की ज्ञात होती ह क्योकि पुराणा म इनका सम्ब ध गरुड अथवा उल्लू से नहीं प्राप्त होता। पीछे की स्तुतियो में इनको गरुडारूढा इत्यादि विष्णु की पत्नी होने के नाते कहा गया है[1]।

१ उपयुक्त — पृष्ठ ४३-५२०-५३३।

प्राचीन सस्कृत-साहित्य में लक्ष्मी का स्वरूप

साहित्य से जीवन का सम्बन्ध बडा गम्भीर है। कवि की कल्पना का आधार भी यही ससार है। चाहे वह कितना भी ऊच उडे उसकी कल्पना वास्तविक जगत से सम्बद्ध अवश्य ही रहती है। साहित्य में स्थान-स्थान पर हमें तत्कालीन जीवन का जो दशन प्राप्त हो जाता है उसका यही कारण है। हमारे महाकाव्यो में रामायण तथा महाभारत सबसे प्राचीन ग्रन्थ माने जाते ह। इनके बहुत से अश तो प्राचीन ह ही, चाहे (यह सम्भव है कि) कुछ भाग पीछे से भी जोड दिये गय हैं। इनमें हमें देवी-देवताओ की प्रतिमाए प्राप्त होती ह तथा लक्ष्मी का स्वरूप भी मिलता है जो आगे वणन किया जायगा। लक्ष्मी का सम्बन्ध यक्षराज कुबर से इन महाकाव्यो म हमें मिलता है। य ग्रथ इतिहास पुराणो की भी कोटि में रख जाते ह तथा महाकाव्यो की भी। इनको यहा महाकाव्यो में ही रखा गया है।

भास तथा कालिदास के ग्रन्था में जो सामग्री मिलती है उससे भी उस काल की लक्ष्मी के स्वरूप का कुछ परिचय मिलता है परन्तु बहुत अधिक सामग्री यहा नही मिलती। इसी प्रकार विशाखदत्त के 'मुद्राराक्षस' में अथवा शिशुपाल वध में भी बहुत ही थोडा मसाला प्राप्त होता है। अश्वघोष के बुद्ध चरित' तथा 'सौन्द रानन्द' की सामग्री बौद्ध और जन साहित्य के अन्तगत रखी गयी है। यहा भी सभी ग्रन्थो को न लेकर केवल थोडे ही से चुने हुए साहित्य का विवचन किया गया है।

वाल्मीकि रामायण में सीता जी को लक्ष्मी की उपमा देते हुए कहा है कि सीता जी राम लक्ष्मण के मध्य में कसी विराजती ह जसी लक्ष्मी विष्णु तथा वासव के बीच में।[२] इससे श्री का इन्द्र तथा विष्णु दोनो से सम्बन्ध ज्ञात होता है। विष्ण को उप+इन्द्र=उपेन्द्र भी कहते ह। युद्ध काण्ड में सीता को लक्ष्मी और राम को विष्णु भी कहा है—

'सीता लक्ष्मीभवान् विष्णु देव कृष्ण प्रजापति" (युद्धकाण्ड १२० २८)

रामायण में कुबेर के पुष्पक विमान पर 'श्री' के विग्रह के चित्र का वाल्मीकि जी ने वणन किया है। यह पद्महस्ता गजलक्ष्मी का स्वरूप है।[३] रामायण में एक और स्थान पर कुबेर से सम्बन्धित दिखाई गयी ह[४]। इसी महाकाव्य में वरुण की भी कथा मिलती है जिससे लक्ष्मी का सम्बन्ध वरुण से ज्ञात होता है[५]।

---

१ केम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया खण्ड १ पृष्ठ २२८–२२९।

२ गोण्डा—एस्पेक्टस आफ विष्णुइज्म–पृष्ठ २२५।

३ रामायण — ५, ७, १४।

४ उपर्युक्त — ७, ७६, ३१, गोण्डा – उपर्युक्त –पृष्ठ २०८।

५ उपयक्त — ७, ५६, १२ तथा आगे, कुमार स्वामी – यक्षाज, खण्ड २ – पृष्ठ ३४ तथा इस्टन आर्ट, खण्ड १, पृष्ठ १७५।

लक्ष्मी समुद्र मन्थन के समय उच्च श्रवा घोड अमृत इत्यादि के साथ उत्पन्न हुई थी तथा विष्णु को प्राप्त हुइ । यह कथा तो महाभारत में भी प्राप्त होती है[1] परन्तु इसके साथ ही इनका सम्बन्ध कुबेर से भी कई स्थानो पर वणन किया गया है । कुबेर के दरबार में ये नलकूबर के साथ उपस्थित दिखाई गयी ह ।[2] पीछ चल कर इन्हें कुबर का स्त्री के रूप में भी हम देखते ह[3] । महाभारत में कुबेर का विष्ण की भाँति श्रीद कहा है। यहा हमें अलक्ष्मी का रूप भी वन पव के ६४ में प्राप्त होता है जिसमें यह कथा मिलती है कि लक्ष्मी के देवताओ के पास चले जाने से और अलक्ष्मी के असुरो के पास जाने से असुर नष्ट हो जाते ह। लक्ष्मी एक स्थान पर यह कहती ह कि 'म ही जय हूँ म ही समृद्धि हूँ म ही विजयी राजाओ के साथ रहती हूँ । महाभारत के एक स्थान पर ये हाथ में मकर लिये हुए वर्णित ह । यह चिन्ह कामदेव का है तथा रुक्मिणी कामदेव की माता होने के कारण इस चिह्न को धारण कर सकती ह । द्वापर में कामदव का जन्म रुक्मिणी के गभ से वर्णित है (महा भारत – ३ २८१ ७) । रुक्मिणी लक्ष्मी का अवतार ह इस कारण लक्ष्मी का भी सम्बन्ध कामदेव से कर दिया गया और मकरध्वज कामदेव का मकर इनके हाथ में भी दिखाया गया । विष्णु को श्रजन तथा श्रेष्ठ भी कहा है[6] जिससे इनका विष्णु से भी सम्बन्ध तो पुष्ट होता ही है। एक स्थान पर विष्णु के आयुधो सहित भी इनको दिखाया गया है तथा इनकी आभा सूय के समान कही गयी है । इन्द्र से भी इनका सम्बन्ध महा भारत में प्राप्त होता है[8] । इन्द्र के पास ये स्वय चली जाती ह तथा इनके पीछे जया, आशा श्रद्धा धृति क्षान्ति, विजिति विनय क्षमा इत्यादि अपने आप खिची हुई पहुच जाती ह[9]। लक्ष्मी के समक्ष अभिमुख गजराज भी हमें महाभारत में प्राप्त होता है[10] तथा कौमुदी महोत्सव का भी चित्र यहाँ हमें दृष्टिगाचर होता है[11]। इनको

---

१ महाभारत -- १, १८, ४४, ५, १०२, १२, गोण्डा – उपर्युक्त, पष्ठ २२३ ।

२ उपयुक्त -- २, १०, १६, गोण्डा – उपयुक्त पृष्ठ २२३ ।

३ उपयुक्त -- ३, १६, १३, ये कुबेर शतपथ ब्राह्मण में राक्षस बताये गयें ह – कुमार स्वामी – यक्षाज -- १६२०पृष्ठ ५, जमिनी ब्राह्मण म कुबेर यक्षों के राजा के रूप में आते ह – जमिनी ब्राह्मण ३, २०३, २७२ । इस प्रकार कुबेर से सम्बन्धित सी थी पर ये यक्षिणी भी कही जा सकती है। यक्षिणी का मन्दिर महाभारत में राजगृह में वर्णित मिलता है। कुमार स्वामी – यक्षाज पृष्ठ ६ ।

४ उपयुक्त -- १२, ८३, ४५ तथा आगे, डा० मोतीचन्द – आवर लडी आफ ब्यूटी इत्यादि नेहरू बथ डे बुक, पष्ठ ५०२ ।

५ उपर्युक्त -- १३, ११, ३, प्रद्युम्न कामदेव के अवतार हैं। इस कारण इनको मकरध्वज कहा है (महाभारत – ३, १७, २ तथा ८, ३, २५) कुमार स्वामी – अर्ली इण्डियन आइको नोग्राफी ईस्टन आट खण्ड १ पष्ठ १७६, यक्षाज खण्ड २ पष्ठ ४७–५२ । वरुण वाहन मकर ।

६ उपर्युक्त -- १३ अ, १४६ । गोण्डा – उपयुक्त -पष्ठ २०८ ।

७ उपर्युक्त -- १२, २२८, १४ । गोण्डा – उपयुक्त पृष्ठ २२० ।

८ उपर्युक्त -- १, १०७, १, गोण्डा – उपर्युक्त पृष्ठ २२५ ।

६ उपयुक्त -- १२, २२८, ८२, १२, २२८, ६०, गोण्डा – उपयुक्त पष्ठ २२३ ।

१० उपर्युक्त -- १, १८६, ६, गोण्डा – उपयुक्त पष्ठ २२५ ।

११ उपर्युक्त -- १, १२१, १, गोण्डा – उपयुक्त, पृष्ठ २२४ ।

हम अपना धम प्रतिपादन करते हुए महाभारत में पाते ह परन्तु इनका धम कठोर पन्थी नही हैं जसे सत्यवादन पर ये बहुत जोर नही देती (महाभारत – १३ ८२ ३) । ये तो भाग्य प्रदाता ह (महाभारत – ५ १५५ ५) । इनको स्थान-स्थान पर पद्मालया और पद्महस्ता कहा गया है जिससे इनका पद्म से भी सम्ब ध स्थापित होता है ।

महाभारत मे यह भी कथा मिलती है कि सावित्री को देखकर लोगो ने उसे देवकन्या या श्री की जीवित प्रतिमा समझा[1] । इस कथन से यह ज्ञात होता है कि श्री की प्रतिमा उस काल में बनने लग गयी थी । महाभारत में दीपावली उत्सव का विवरण भी प्राप्त होता है[2] । जिससे यह स्पष्ट है कि उस काल में लक्ष्मी पूजन प्रारम्भ हो गया था ।

'स्वप्न वासवदत्ता में भास ने लक्ष्मी को पद्मावती कहा है[3] । यहा श्री के दो भेद प्राप्त होते ह, पद्म श्री[4] और ब्रह्मश्री तथा नरेन्द्रश्री अथात् राज्यश्री[5] । एक स्थान पर 'श्री के रूप से उपमा भी दी गयी है – रूपश्रिया[6] ।

भास के 'प्रतिमा नाटक म राज्यश्री शब्द[7] "वल्कलहृतराज्यश्री पदाति सह भार्यया," पद में मिलता है तथा लक्ष्मी शब्द भी इसी भाव में दूसरे पद में मिलता है – 'मम मात प्रिय कतु येन लक्ष्मीर्विसर्जिता।'[8] 'प्रतिज्ञा यौगन्धरायण में भी श्री श द राज्यश्री के अथ में शत्रु की श्री शत्रो श्रिय सुहृदा यशश्च हित्वा प्राप्तो जयश्च नृपतिश्च महाश्च शब्द ,' पद में प्राप्त होता है[9] । कणभार' में राज्यलक्ष्मी को तुरग के समान ही साधन को लिखा है – 'रवितुरगसमा राधनं राज्यलक्ष्म्या[10] अर्थात् रवि के घोड के समान भागती हुई राज्यलक्ष्मी को बड यत्न से रक्खा जा सकता है ।

कालिदास ने रघुवश में 'श्री' को धनसमृद्धि का द्योतक माना है । उन्होने सुरश्री और रिपुश्री की चर्चा की है[11] । 'श्री' को शोभा के अथ में[12] तथा लक्ष्मी को कमल का छत्र हाथ में लिये हुए राज्यलक्ष्मी के रूप में[13] वर्णन किया है ।

---

१ उपयुक्त — ३, २१३, २५ से आगे ।
२ उपर्युक्त — अनुशासन पव, अध्याय ६८, ५१ ।
३ भास — स्वप्न वासवदत्ता – १, १ ।
४ वही — उपयुक्त – ५, १ ।
५ वही — उपयुक्त – ६, ७ ।
६ वही — उपर्युक्त – ५, २ ।
७ वही — प्रतिमा नाटक – अक ३ – २० ।
८ वही — प्रतिमा नाटक – अक ४ – ३ ।
९ वही — प्रतिज्ञा यौगन्धरायण – अक ४ – ६ ।
१० वही — कणभार – प्रथम अक – १९ ।
११ कालिदास — रघुवश – ३–५६, ६–५५ ।
१२ वही — उपर्युक्त – ६–५,
१३ वही — उपर्युक्त – ४–५, १२–१५, १६; कुमार सम्भव – ७–८९, १४–३ ।

कालिदास ने 'श्री और सरस्वती की लडाई का भी सकेत किया है – निसगभिन्नास्पदमेकसस्थम स्मि द्वय श्रीश्च सरस्वती च [1] तथा लक्ष्मी के चचला होन की बात मिलती है। कालिदास कहते ह कि लक्ष्मी को लोग चचला का दोष लगाते ह परन्तु वह दोष उनका धुल गया जब से वे इनके साथ रहने लगी क्योंकि लक्ष्मी उसी पुरुष को छोडकर चचला हो जाती ह जो व्यसनी होते ह येन श्रिय म न्यदोषरूपस्वभावलालत्ययश प्रमृष्टम्। [2] लक्ष्मी नारायण के स्वयम्वर की कथा भी रघुवश म मिलती है (इदुमती ने अज को उसी प्रकार वरण कर लिया जसे लक्ष्मी ने नारायण को कर लिया था)—

पद्मव नारायणमन्यथासौ लभेत कान्त कथमात्मतुल्यम।

इसी प्रकार लक्ष्मी नारायण के स्वयम्वर के नाटक का भी विवरण विक्रमोवशी में है यहा शषशायी भगवान की मूर्ति का भी विवरण मिलता है जो देवगढ के विष्णु की प्रतिमा से बहुत कुछ मिलता है। यहाँ श्री विष्णु के पास[3] कमल पर बठी हुई उनका चरण गोद में रखे हुए पलोटती हुई वर्णित हैं। इनके कमर में मेखला तथा रेशमी वस्त्र ह

भोगिभोगासनासीन ददशुस्त दिवौकस ।
तत्फणामण्डलोदर्चिमणिद्योतितविग्रहम् ।।
श्रिय पद्मनिषण्णाया क्षौमान्तरितमेखले ।
अङ्के निक्षिप्तचरण आस्तीर्णकरपल्लवे ।।[4]

जब रामचन्द्रजी गभ में आये तो दशरथ जी की रानियो को जो स्वप्न हुआ है उसका वणन करते हुए कालिदास जी कहते है—

बिभ्रत्या कौस्तुभन्यास स्तनान्तरविलम्बिनम ।
पयुपास्यन्त लक्ष्म्या च पद्मव्यजनहस्तया[5] ।।

यहाँ लक्ष्मी पखा तथा पद्म हुए लिय दिखाई गयी ह। पखा लिय हुए शुगकालीन कई मृण्मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं जिन्हें इस आधार पर लक्ष्मी समझा जा सकता है[6]।

कालिदास ने उवशी अप्सरा को[7] तथा मालविका को[8] लक्ष्मी रूपी कहा है—

मामियमभ्युत्तिष्ठति विनयादुपस्थिता प्रियया ।
विस्तृतहस्तकमलया नरेन्द्रलक्ष्म्या वसुमतीव ।।

---

१ वही — उपर्युक्त – ६–२६ तथा विक्रमोवशी – पाँचवाँ अक – २४ ।
२ वही — उपर्युक्त – ६–४१, १७, ४६ ।
३ वही — उपयुक्त – ७–१३ – विक्रमोवशी – तीसरी अक – गालव तथा पेलव ।
४ वही — उपयुक्त – १०–७, ८ ।
५ वही — उपयुक्त – १०–६२ ।
६ एस० सी० काला — टेराकोटा फिगुरीस फ्राम कौशाम्बी – प्लेट २३–ए।
७ कालिदास — विक्रमोवशी – प्रथम अक – रम्भा – 'महेन्दस्सपच्चादेसो रूपगव्विदाए सिरि गोरिए अलकारो सगस्स सगस्स साणो पिअसही उव्वसी।'
८ वही — मालविकाग्निमित्र – अक ५ – ६।

शूद्रक के लिखे हुए मृच्छकटिक नाटक में हमें बहुत थोडी सी समग्री प्राप्त होती है। नाटक के चतुर्थ अक में शिवाल्लिक मदनिका से कहता है कि साहसे श्री प्रतिवसति', जिससे यह तात्पय निकलता है कि जो जोखिम में नहा पडना चाहता उसको लक्ष्मी की प्राप्ति नही होती, आज भी यह धारणा प्रचलित है।

शूद्रक ने आग चलकर अपनी नायिका वसन्तसेना की पद्मरहित श्री के साथ तुलना की है 'अपद्मा श्रीरेव अर्थात् वसन्त सेना लक्ष्मी की भाति सुन्दर है। यहा भी श्री से पद्म का सम्बन्ध प्राप्त होता है। एक और लोकोक्ति हमें श्री के विषय में पाचवें अक में प्राप्त होती है जसे जिसे नया धन प्राप्त होता है वह अपना नित्य नवीन स्वरूप बनाता है अर्थात नये रईस की भाति नित्य नय नये वस्त्र इत्यादि पहिनता है, जिसमें उसे लोग धनवान समझें—

उन्नमति नमति वर्षति गर्जति मघ करोति तिमिरौघम।
प्रथमश्रीरिव पुरुष करोति रूपाण्यनेकानि[१]।'

दूसरी लोकोक्ति जो मिलती है वह यह है कि श्री' उसको छोड देती है जो शरणागत को छोड देता है। 'त्यजति किल त जयश्रीजहति च मित्राणि बन्धुवगश्च। भवति च सदोपहास्यो य खलु शरणागत त्यजति[२]।' य शब्द गोप बालक आयक चन्दक से कहते हु और चन्दक इनको बचा भी देता है (यहा हमें जयश्री शब्द भी प्राप्त होता है[३])।

विशाखदत्त के मुद्राराक्षस' में जो प्राय छठवी शताब्दी का ग्रथ माना जाता है[४] कौमुदी महोत्सव का विशद वणन प्राप्त होता है[५]। यहा उस काल में इस महोत्सव की तयारी इस प्रकार होती थी कि श्री को प्रसन्न करने के हेतु खम्भो पर मालाएँ लटकायी जाती थी तथा धूप की सुगन्धि चारो ओर दी जाती थी और पृथ्वी को चन्दन के जल से सीचा जाता था[६]। विटो (छलो) के साथ वेश्याएँ धीरे धीरे राजमाग पर चलती थी[७] तथा नृत्य और गीत द्वारा पुरुषो का मन लुभाती थी। यह महोत्सव वर्षा के अवसान पर शरत्पूर्णिमा को मनाया जाता था[८]।

लक्ष्मी का स्वभाव भी विशाखदत्त न इन शब्दो म वणन किया है—

तीक्ष्णादुद्विजते मृदौ परिभवत्रासान्न सन्तिष्ठते
मूर्खान द्वेष्टि न गच्छति प्रणयितामत्यन्तविद्वत्स्वपि।
शूरेभ्योऽप्यधिक बिभेत्युपहसत्य कान्तभीरूनपि
श्रील धप्रसरेव वशवनिता दु खोपचर्या भृशम्॥ २ अक ३ ५

अर्थात् लक्ष्मी अत्यन्त उग्र राजा से अलग हो जाती है शत्रुकृत पराभव के भय से सहनशील राजा के पास भी नही ठहरती और मूख राजाओ से द्वेष रखती है। अत्यन्त विद्वान् राजाओ से भी यह प्रेम नही करती तथा पराक्रमी

१ मृच्छकटिक—अंक ५–१२।
२ उपर्युक्त—अक ५–२६।
३ उपर्युक्त—अक ६–१८।
४ बलदेव उपाध्याय—सस्कृत साहित्य का इतिहास–(१९४८) पृष्ठ २३४।
५ विशाखदत्त—मुद्राराक्षस–३ अक।
६ वही—उपर्युक्त–३, २।
७ वही—उपर्युक्त–३, १०।
८ वही—उपर्युक्त–३, ९।

राजाओ से बहुत डरती है । डरपोक राजाओ का तो उपहास ही करती रहती है। लक्ष्मी का प्रेम वारागना की भांति बहुत ही कष्ट से प्राप्त होता है । लक्ष्मी की एक और स्थान पर पुश्चली स्त्री से उपमा दी गई है[1] था यह कहा गया है—

'पति त्यक्त्वा देव भुवनपतिमुच्चरभिजन, गताच्छिद्रण श्रीव षलमविनीतेव वषली ।

स्थिरीभूता चास्मिन् किमिह करवाम स्थिरमपि प्रयत्न नो यथा विफलयति दव द्विषदिव ।।

हे लक्ष्मी तू दुश्चरित्र स्त्री के समान उच्चकुल में उत्पन्न नन्दरूप पति को छोड कर छल से चन्द्रगुप्त के पास चली गयी । केवल चली ही नही गयी परन्तु वहा जाकर स्थिर हो गयी ।

मौर्य लक्ष्मी नन्दलक्ष्मी इत्यादि कई प्रकार की लक्ष्मी का वर्णन किया गया है । राज्यलक्ष्मी की हस्तिनी से[1] तथा आलिंगन करनवाली माला से भी विशाखदत्त ने उपमा दी है ।

माघकृत शिशुपाल वधम काव्य में वासुदेव को श्रिय पति कहा है[1] । इस विश्वास में विष्णु पुराण की छाया मिलती है – राघवत्वे भवत्सीता रुक्मिणी कृष्णजन्मनि । माघ ने 'श्री को चचला भी बताया है[6] । इनको मृग के समान द्रुत गति वाला कहा है[7] तथा चपला के साथ उपमा भी दी है[8] । इन्हे विष्णुकी उर स्थिता कहा है तथा आनन्ददायिनी बताया है[9] । श्री' शब्द का माघ न सौन्दय के अथ में भी प्रयोग किया है । माघ ने एक स्थान पर लक्ष्मी को निलय भी कहा है[11] । इससे यह ज्ञात होता है कि उस समय तक यह धारणा बन चुकी थी कि नीलम को पहिनने मे श्री की प्राप्ति होती है (यहाँ निलय का दो अथ प्रतीत होता है एक तो विष्णु तथा दूसरा नीलम) । इसी श्लोक में लक्ष्मी की जल से उत्पत्ति भी वर्णित है — यदेव जलजन्मतया ।

माघ न स्त्री की सुन्दरता को लक्ष्मी से उपमा देते हुए कहा है[1] —

प्रकटमलिनलक्ष्मी भ्रष्टपत्राङ्गुलीकरधिगतरतशोभ प्रत्युष प्रषितश्री ।

(रति के पश्चात् स्त्री की शोभा कसी हो जाती है यहाँ इसी का वर्णन है ।)

एक श्लोक में 'श्री को विष्णु की पत्नी स्पष्ट रूप से कहा है द्विजेन्द्रकान्त श्रितवक्षस श्रिया यहाँ द्विजेन्द्र का अथ गरुड से किया गया तथा उसके कान्त विष्णु तो ह ही ।[13] माघ के एक दूसरे श्लोक में पद्म तथा गज से भी श्री का सम्बन्ध दृष्टिगोचर होता है[14] ।

---

१ वही — उपयुक्त – ६, ५ ।
२ वही — उपर्युक्त – ६, ६ ।
३ वही — उपयुक्त – २, ३ ।
४ वही — उपयुक्त – २, २१ ।
५ माघ — शिशुपालवधम – १, १ ।
६ वही — उपयुक्त – १, ४४ ।
७ वही — उपर्युक्त – १२, ४२ ।
८ वही — उपयुक्त – ६, १६ ।
९ वही — उपयुक्त – ३, १३ ।
१० वही — उपयुक्त – ३, ५८, ३, ७१, ७, १ ।
११ वही — उपर्युक्त – ९, १६ ।
१२ वही — उपयुक्त – ११, ३० ।
१३ वही — उपयुक्त – १५, ३ ।
१४ वही — उपयुक्त – १२, ६१ ।

भवभूति के मालती माधव' में सूर्य से प्रार्थना करते हुए यह कहा गया है कि 'सकल सौख्य सम्पादन समर्थां लक्ष्मी धेहि[१]।' यहा एक स्थान पर कपोलो की तुलना हिमाशु लक्ष्मी के रग से की गयी है जो निष्कलक है। चन्द्रमा से समानता न देने का कारण यह बताया गया है कि चन्द्रमा में कलक है[२]। परन्तु यहा 'श्री' के स्तन कनक-कुम्भ के समान कहे गय ह[३]। इस प्रकार एक ओर इनका वर्णन श्वेत और दूसरी ओर पीत बताया गया है। लक्ष्मी को मगलदायक भी बताया है — समग्र-सौभाग्यलक्ष्मीपरिग्रहैकमङ्गलम्[४]।'

हर्षचरित में लक्ष्मी का जो स्वरूप मिलता है उसी आकार से मिलती हुई मूर्तियाँ मथुरा में मिली ह इससे इस विवरण का मूर्त स्वरूप हमें मिल जाता है।[५] यहा जो लक्ष्मी का स्वरूप मिलता है वह यो है—एक हाथ में कमल नूपुर गुल्फ तक चढे हुए, नीचे के शरीर के भाग में घनी कटकावली, शरीर पर श्वेत अशुकी वस्त्र जिसमें तरह तरह के पुष्प तथा पक्षी बने हुए हैं—'बहुविधशकुनिशतशोभितात् पवतचलिततनुतरङ्गात् अतिस्वच्छादशुकात[७]' तथा राजहसमिथुन लक्ष्मणी सदृश दुकूल। हृदय पर हार कान में दन्तपत्र कुण्डल कान पर अशोक किसलय का अवतश मस्तक पर एक टिकुली गले की एक माला धरती छूती हुई परो में नूपुर प्रचलित लक्ष्मी नूपुर प्रसाद प्रतिमा[८]। इसी ढग की मूर्ति जो मथुरा से प्राप्त हुई है वह भी इसी प्रकार के वस्त्राभूषणो से सुसज्जित है[९]। लक्ष्मी का शख से सम्बन्ध हमें हर्षचरित के प्रथम तथा तृतीय उच्छवास में प्राप्त होता है— विविधरत्न खण्डखचितेन शङ्खक्षीरफेनपाण्डुरेण क्षीरोदेनेव स्वय लक्ष्मी ददातु' तथा कमल लक्ष्मी प्रबोधमङ्गल शङ्खे ष्विव।' ललाट पट्ट में 'श्री' का निवास समझा जाता था। उसकी भी झलक प्रथम उच्छवास में मिलती है— 'सहजलक्ष्मीसमालिङ्गितस्य ललाटपट्ट।" विष्णु को लक्ष्मीनिवास भी अष्टम उच्छवास में कहा है—'अय लक्ष्मीनिवासो जनादन'। राज्यलक्ष्मी के स्वरूप में लक्ष्मी हम को चौथे उच्छवास में मिलती है—'मालवलक्ष्मी लतापरशु प्रभाकरवधनो नाम राजाधिराज'। रणश्री का वणन भी हमें हर्षचरित में मिलता है—'वीर गोष्ठीषु अनुरागसन्देशम् इव रणश्रिय श्रीवन्तम्[१०]।' यहाँ हमें उस 'श्री पवत का नाम भी मिलता है जो आन्ध्र प्रदेश मे है[११]।

---

१ भवभूति — मालती माधव – १, ५।
२ वही — उपर्युक्त – १, २५।
३ वही — उपयुक्त – ४, १०।
४ वही — उपयुक्त – ६, ८।
५ डा० वासुदेव शरण अग्रवाल — हर्ष चरित – पृष्ठ ६१।
६ हर्षचरित – ११४।　　डा० वासुदेव शरण अग्रवाल — उपयुक्त चित्र ३२।
७ उपयुक्त – सातवाँ उच्छवास, पृष्ठ – २०२। 'धरणितलचुम्बिनीभि कठकुसुममालाभि'
८ उपयुक्त — षष्ठ उच्छवास – पृष्ठ २००।
९ डा० वासुदेव शरण अग्रवाल – कटलाग आफ कर्जन म्युजियम आफ आर्कआलाजी मथुरा फलक ६ – न० ३१, ३२। मथुरा से गज लक्ष्मी की मूर्ति भी प्राप्त हुई है, जो शुगकालीन है। फलक ९९।
१० डा० वासुदेव शरण अग्रवाल, पृष्ठ १३।
११ वही — उपर्युक्त – पृष्ठ ८।

श्री हर्ष द्वारा विरचित नैषध महाकाव्य में नल को अट्ठारह द्वीपों की जयश्री की प्राप्ति का वर्णन यहाँ मिलता है। यहाँ हमें नरेन्द्र श्री का भी दर्शन होता है[1]। यहाँ 'श्री' की छटा से नल के मुख की छटा को इस कवि ने समानता दी है[2] तथा 'श्री' शब्द को कान्ति के अर्थ में कई प्रकार से प्रयोग किया है[3] जैसे मन्मथश्रिया तनुश्रिया स्फुटश्री मुखश्री रूपश्रिया देहश्रिया भुवश्री, युवतीश्रिया इत्यादि[4]। शोभा के अर्थ में श्री शब्द का प्रयोग इस महाकाव्य में श्रीहर्ष ने किया है तथा धन के अर्थ में भी[5]। दमयन्ती के गुणों की समुद्र से उत्पन्न 'श्री' के साथ बड़े सुन्दर ढंग से समानता दर्शायी गयी है

श्रियमेव परं धराधिपाद् गुणसिन्धोरुदितामवेहि ताम्[6]।

दमयन्ती को अन्यत्र लक्ष्मी के समान रूपवती भी कहा है[7]। श्रीहर्ष ने श्री को विष्णु की पत्नी कई स्थानों पर कहा है[8]। नल को विष्णु का अवतार मानते हुए दमयन्ती का लक्ष्मी स्वरूपा कह कर विवाह के पूर्व नल को आलिंगन करने पर भी उसके व्रत को अखण्ड मानने का वर्णन भी बड़ा रोचक है[9]—

श्रियस्तदालिङ्गनभूर्नभूता व्रतक्षतिः कापि पतिव्रतायाः।
समस्तभूतात्मतया न भूतं तद्भर्तुरीर्ष्याकलुषाणुनाऽपि।

नैषध में हमें समुद्र मन्थन से श्री का जन्म प्रादुर्भाव के पश्चात् इनका चरण कुश द्वीप की पवित्र शिला पर पड़ना[10] तथा समुद्र का पुरुषोत्तम को लक्ष्मी का प्रदान करना[11] और विष्णु का इनको पत्नी के रूप में पाना प्राप्त होता है। विष्णु को इन्द्र का भाई कहा है (यह भी विष्णु का एक नाम उपेन्द्र विष्णुसहस्रनाम में मिलता है)। इस प्रकार यह संकेत किया गया है इन्द्र को विवाह करने पर लक्ष्मी जो विष्णु पत्नी हैं वे दमयन्ती की सम्बन्धिनी हो जायगी[12]। विष्णु को श्रीप्रिय तथा श्रीवत्स चिह्न धारण किये हुए वर्णन किया गया है[13]। आगे चलकर तो लक्ष्मी को विष्णु के वक्षस्थल पर स्थित वर्णन किया गया है—

---

१ श्री हर्ष — नैषध महाकाव्यम, चौखम्बा संस्कृत सीरीज, वाराणसी स० २०१०, पूर्व १–५ तथा पू० ३–३६।
२ वही — उपर्युक्त – पू० १–२४।
३ वही — उपर्युक्त – पू० १–२६, ३१, ३८, ५६।
४ वही — उपर्युक्त – पू० २–१८, १–११५, ३–३२, ६–५४, उत्तर १५–८७, १७–१२३, १८–३२।
५ वही — उपर्युक्त – पू० १–१२७ तथा पू० १०–१ 'श्रीजित यक्षराज'
६ वही — उपर्युक्त – पू० २–१६।
७ वही — उपर्युक्त – पू० २–१०७, १०–११५, ७–५५।
८ वही — उपर्युक्त – पू० ६–५६।
९ वही — उपर्युक्त – पू० ३–३१।
१० वही — उपर्युक्त – पू० ६–८०।
११ वही — उपर्युक्त – पू० ११–६०।
१२ वही — उपर्युक्त – उत्तर १६–१२ 'ययाववस्म पुरुषोत्तमाय तां स साधु लक्ष्मीम बहुवाहिनीश्वर।'
१३ वही — उपर्युक्त – पू० ६–८३।
१४ वही — उपर्युक्त – उत्तर २१–८०।

तावकोरसि लसद्वनमाले श्रीफलद्विफलशाखिकयव ।
स्थीयते कमलयात्वदजस्रस्पशकण्टकितयोत्कुचया च ।।[1]

यहा हमे क्षीर समुद्र में सोते हुए विष्णु और उनके चरणो को धीरे धीरे दबाती हुई लक्ष्मी के चित्र का भी दशन होता है—

त्वद्रूपसम्पदवलोकनजातशङ्कपादाब्जयोरिह कराङ्गुलिलालनन ।
भूयाश्चिराय कमलाकलितावधाना निद्रानुबन्धमनुरोधयित् धवस्य ।।[2]

लक्ष्मी का सम्बन्ध कमल से कई स्थानो पर यहाँ प्राप्त होता है। इन्हें पद्मा[3], कमला[4] इत्यादि कहा गया है। सरस्वती तथा लक्ष्मी दोनो ही विष्णु पत्नी के रूप में हमें यहा मिलती ह[5] यह धारणा पुराणो की कथा पर स्थित है जसा पहिल कहा जा चुका है।

इस महाकाव्य में लक्ष्मी शब्द हमें उसके मूल अथ लक्षण के रूप में भी मिलता है। यहा चन्द्रमा को लक्ष्मीक्रियते सुधांशु' कहा है—

'अन्त सलक्ष्मीक्रियते सुधाशो रूपेण पश्ये हरिणेन पश्य।'[6]

श्रीहर्षदेव कृत नागानन्द नाटक में एक युक्ति में यह वर्णन मिलता है कि क्या विष्णु कभी अपने वक्ष स्थल से लक्ष्मी को अलग कर सकते ह अर्थात लक्ष्मी विष्णु के वक्षस्थल पर सदव बनी रहती हं। यहाँ हमें दिवाली के उत्सव का प्रकरण प्राप्त होता है तथा इस पव पर लोग जामाता तथा कन्या को उपहार भी देते थे यह प्रथा भी मिलती है[8]। जलहस्ति के वणन से ऐसा ज्ञात होता है कि उस समय तक ऐसी धारणा थी कि एक प्रकार का हाथी जल में भी रहता है जिसका पूवज ऐरावत था—'कवलितलवङ्गपल्लवकरिमकरोद्गारि सुरभिणा पयसा।'[9] इस नाटक में हर्ष ने जीमूतकेतु की रानी की उपमा श्री से दी है तथा उन्हें 'सुसुह श्रीम्' कहा है। राजा की रानी राज्यलक्ष्मी की द्योतक होने के कारण श्री से उनको सम्बन्धित करना ठीक ही था, परन्तु श्री की सुन्दरता भी यहाँ वर्णित है।

चक्रवर्ती राजा को अभिषेक के समय रत्नजटित सुवण के कुम्भो से स्नान कराया जाता था। इस क्रिया से उसको चक्रवर्ती पद पर प्रतिष्ठित समझते थे। इस क्रिया का प्रकरण यहाँ प्राप्त होता है।[1]

---

१ वही — उपर्युक्त – उत्तर २१–८५, पृ० ११–५७।
२ वही — उपर्युक्त – पृ० ११–४२।
३ वही — उपयुक्त – पृ० ४६, ११–५७।
४ वही — उपयुक्त – ११–४२।
५ वही — उपयुक्त – पृ० ७–४६।
६ वही — उपयुक्त – उत्तर २२–१३२।
७ वही — नागानन्द द्वितीय अक – चेती – कि मधुमहणीं मधुमहणी वच्छस्थलेण लच्छिम अणुव्व हंतोणिव्वुदो भोदि।
८ हष — नागानन्द – चतुथ अक – प्रतिहार – "आविष्टोऽस्मि महाराज विश्वावसुना, यथा 'भो सुनन्द। गच्छ, मित्रावसु ब्रूहि, अस्मिन्दीप प्रतिपदुत्सवे मलयवत्या यत किंचित प्रदीयते ।
९ वही — उपर्युक्त – चतुथ अक – ४।
१० वही — उपयुक्त – पंचम अक – ३७।

गजलक्ष्मी की मूर्तियो मे गज हेमकुम्भो से जो लक्ष्मी को स्नान कराते ह वह भी राज्याभिषेक ही है जसा यहाँ देवी करती ह ।

नारायण भट्टकृत वेणीसहार में राज्यश्री के अर्थ में लक्ष्मी श द का प्रयोग हुआ है । यहाँ कुरु लोगो की राज्य लक्ष्मी के सम्ब ध में कहा गया है कि यह चार। समुद्रो की सीमा तक फली हुई है [1]

लक्ष्मीरार्ये निषक्ता चतुरुदधिपय सीमया साधमुर्व्या ।

इसी नाटक में लक्ष्मी श द जयलक्ष्मी के अथ में भी प्रयुक्त हुआ है ।[2]

दण्डिकृत दशकुमार चरितम् में जयलक्ष्मी श द प्रयुक्त हुआ है—

मालवनाथो जयलक्ष्मीसनाथो मगधराज्यम् प्राज्य समाक्रम्य पुष्पपुरमध्यतिष्ठत्।

यहा जयलक्ष्मी जीती हुई राज्यलक्ष्मी के अथ में आया है[3] । राज्यलक्ष्मी भी एक दूसरे स्थान पर मिलता है कालिन्दी कहती है कुमार से कि लोकस्यास्य राजलक्ष्मीमङ्गीकृत्य मा सपत्नीम् करोति भवान[4] । पूव पीठिका के चतुथ उच्छवास में बालच द्रिका तो लक्ष्मी को मूर्ति कहा है[5] जिससे ऐसा ज्ञात होता है कि उस काल में लक्ष्मी के म दिर बनते थे । 'बालच द्रिका नाम तरुणीरत्न वणिक्मन्दिरलक्ष्मीम मूर्तमिवावलोक्य'। श्री शब्द यहाँ भी शोभा अथवा कान्ति के अथ में प्रयुक्त हुआ है यथा वपु श्री , तस्य दुहिता प्रत्यादेश इव श्रिय देहिन श्रिय ।[6] लक्ष्मी के हेतु कमला श द भी प्रयुक्त हुआ । तथा लक्ष्मी को कमल धारिणी भी कहा है, चित्रीयाविष्टचित्तश्चाचिन्तय किमिय लक्ष्मी । नहि नहि तस्या किल हस्ते वि यस्त कमलम्[7] लक्ष्मी को दण्डी ने अम्बुजा भी कहा है, अम्बुजासनास्तनतटोपभुक्तमुर स्थलमिदमालिङ्गयितुम्' ।[8]

भर्त हरि के नीतिशतक में लक्ष्मी शब्द धन का द्योतक है ।[9] विजयश्री की प्राप्ति वीरों को तलवार से होती है, यह भी विवरण यहा मिलता है, विजयश्रीर्वीराणाम् 'युत्पन्नप्रौढवनितेव ।[11] सौभाग्य लक्ष्मी भी शृगारशतक में प्राप्त होती है– तन्वी नेत्रचकोरपारणविधौ सौभाग्यलक्ष्मी निधौ, धन्य कोऽपि न विक्रिया कलयति प्राप्ते नवे यौवने [12] यहा लक्ष्मी को श्वेतातपत्रोज्ज्वला भी कहा है । शुभ्र सद्म सविभ्रमा युवतय

१ नारायण भट्ट – वेणी सहार – अंक ६–३६ ।

२ वही — उपर्युक्त – पचम अक, २१, पष्ठ ३१–३६ ।

३ दण्डिकृत दशकुमार चरितम्—निणय सागर प्रस शाके १८३५ पूव पीठिका प्रथम उच्छवास पृष्ठ ६ ।

४ दण्डि — उपयुक्त पूव पीठिका द्वितीय उच्छ्वास – पष्ठ २६, राजलक्ष्मी – उत्तर – चतुथ उच्छवास, पृष्ठ १८४ ।

५ वही — उपर्युक्त – पूव पीठिका चतुथ उच्छवास, पष्ठ ३८ ।

६ वही — उपर्युक्त – उत्तर, तृतीय उच्छवास, पृष्ठ १४४, पचमोच्छवास, पष्ठ २०० सप्तमोच्छवास, पष्ठ २४४ ।

७ वही — उपर्युक्त – उत्तर तृतीय उच्छ्वास, पृष्ठ १६१ ।

८ दण्डि — उपर्युक्त – उत्तर षष्ठ उच्छवास, पृष्ठ २०८ ।

९ वही — उपर्युक्त – उत्तर – प्रथम उच्छवास – पृष्ठ ५७–५८ ।

१० भत हरि — नीतिशतक – १५, ६४, ८४, वराग्य शतक – ९६ ।

११ वही — उपर्युक्त – १२६ ।

१२ वही — शृगार शतक – ७१ ।

ध्वतातपत्रोज्ज्वला लक्ष्मीरित्यनभयते स्थिरमिव म्फीते शभ कमणि ।'[1] लक्ष्मी को माता लक्ष्मी कह कर भी सम्बोधन किया है[2] तथा श्री को सकल काम की देनवाली कहा है—'प्राप्ता श्रिय सकलकामदुघास्तत किं ।[3] लक्ष्मी को चचला कहा है[4] और कहा है कि यह वेश्या के सदृश राजा की भृकुटी के विलास पर काम करती है 'चेतश्चिन्तय मा रमा सक्कदिमामस्थायिनीमास्थया भूपालभृकुटी विहरण यापारपण्याङ्गनाम् ।

श्री मरारी कवि के अनघ राघव में प्रारम्भ में ही कमला अर्थात लक्ष्मी को पुरुषोत्तम प्रिया विष्णु की स्त्री कहा है ।[5] यहाँ ब्रह्मश्री को भी लक्ष्मी कहा है । कदाचित् इस काल तक ब्रह्मश्री और लक्ष्मी में भद नही रह गया था । विश्वामित्र जी की श्री को देखकर रामच द्र जी कहते ह—तपस्तेजोमयी लक्ष्मीमद्य पुष्णाति में गरु ।'[6] रामचन्द्र जी के किये हुए पुण्यो की जो श्री अथवा का ति उनके मुख पर विराज रही है उसको भी लक्ष्मी कहा है (पुण्य लक्ष्मीकयो) । रावण के प्रताप का वणन करते हुए यहा मुरारी ने कहा है कि इसके प्रामाद में चौदह लोका की लक्ष्मी सुस्थित है । तथा त्रिभुवन की श्री भी इसके पास है ।[8] धनुष यज्ञ के प्रकरण मे सीता जी को त्रिभुवन विजय-श्री की सपत्नी कहा है । लक्ष्मी से गज का भी सम्ब ध यहाँ प्राप्त होता है ।[1] राज्यलक्ष्मी का भी हमें यहाँ दशन होता है ।[11] तथा राक्षस लक्ष्मी का भी ।[12] लक्ष्मी से सागर का सम्ब ध भी यहा प्राप्त होता है[13] (भगवान् अम्बुराशि कसे ह लक्ष्मीरस्य हि याद कृष्णोर स्थापि सुभटभुजवसति) । तथा लक्ष्मी अमृत इत्यादि की उत्पत्ति समुद्र से है इसकी कथा भी यहा प्राप्त होती है ।[1]

ग्यारहवी शताब्दी के भोजकृत समरागण सूत्रधार में वास्तुशास्त्र के विविध विषयो के विवेचन के साथ हमें पुरनिवेश नाम के दसवें अध्याय में लक्ष्मी तथा वश्रवण को द्वार पर बनान का आदेश मिलता है।[15] यह लक्ष्मी सौम्य मुखी होनी चाहिये । 'द्वारे द्वारे सौम्यमुखौ लक्ष्मीवश्रवणौ शुभौ । इस काल तक गणेश की मूर्ति

---

१ वही — शृगार शतक – ६५ ।
२ वही — वराग्य शतक – ६० ।
३ वही — उपर्युक्त – ६७ ।
४ वही — उपयुक्त – ११६ ।
५ मुरारी — अनघराघव – सूत्रधार १–१ ।
६ वही — उपर्युक्त – २, ३८ ।
७ वही — उपयुक्त – २, ३४ ।
८ वही — उपयुक्त – ३, शोष्कल – ३८ के ऊपर तथा ६–३ ।
९ वही — उपर्युक्त – ३, ५८ ।
१० वही — उपयुक्त – ४–२० ।
११ वही — उपयुक्त – ४–६६ ।
१२ वही — उपयुक्त – ६–१६ के ऊपर – मल्यवान ।
१३ वही — उपर्युक्त – ७–१२ ।
१४ वही — उपयुक्त – ७, १३ ।
१५ समरांगणसूत्रधार — एडिटेड बाई महामहोपाध्याय टी० गनपत शास्त्री, बड़ौदा सेण्ट्रल लाइब्रेरी – १९२४, पृष्ठ ४७, श्लोक १०४, खड १ ।

द्विपदा बाह्यभित्ति स्याच्छुभा कार्या चतुर्दिशम् ।
कर्णेषु शङ्गमेकक द्व द्व शृङ्ग तु मध्यग ।।
द्वयगानि तानि विस्ताराद् दशशृङ्गाणि दिक्त्रये ।
षट शालाश्च विधातव्या शुभा दिक्ष तिसष्वपि ।।
याम्यन च चतुर्भागा भागद्वितयनिगता ।
तलच्छ दोऽयमुद्दिष्टो मण्डप पुरतो भवेत ।।
विस्ताराद् द्विगुणासास प्रासादस्यास्य चोच्छय ।
स्यात् त्रयोदशभागोऽत्र प्रमाणेन तुलोदय ।।
उध्व च विंशतिपद वेदीबन्ध पदत्रयम् ।
उत्सेधात षटपदा जङ्घा भागन भरण भवेत् ।।
भागस्त्रिभिर्मेखले द्व शृङ्ग च कलश त्रिभि ।
उच्छयेण विधातव्य सिंहकणश्चतुष्पद ।।
दश शृङ्गाणि कुर्वीत घण्टा पक्व च दिक्त्रय ।
चतुदशांशविस्तारा पञ्चगा मूलमञ्जरी ।।
ऊर्ध्वं सप्तदशांशा च ग्रीवोच्छाय पदद्वयम् ।
अण्डक द्विपद कायम् भागनकेन कपरम् ।।
कलश त्रिपदम् मूर्ध्नि वतयत् सुमनोरमम् ।
लक्ष्मीधराख्यम् प्रासाद य कुर्याद् वसुधातल ।।
अक्षये स पदे तत्त्वे लीयते नात्र सशय ।[1]

और देवताओ के प्रासादों के साथ हमें "श्री' का भी गृह यहा मिलता है –

शम्भोर्हरेर्विरिञ्चस्य ग्रहाणामधिपस्य च ।
चण्डिकाया गणेशस्य श्रिया सवदिवौकसाम ।।[2]

इनके विमान का विवरण इस प्रकार है –

श्रीवत्समथ वक्ष्यामो दशधा त विभाजयत ।
भागत्रयण कुर्वीत शाला तत्र विचक्षण ।।
साधभागप्रविस्तारौ रथकौ वामदक्षिणौ ।
मूलकर्णा भवन्त्यत्र भागद्वितयविस्तृता ।।
प्रासादतस्मात्राभि प्रत्यकम् भद्रनिगम ।।
द्वयङ्गुल त्र्यङ्गुल वाऽपि चतुरङ्गुलमेव वा ।।
भलीमध्ये तु मञ्जय कार्या पदमदलोपमा ।
सवत परिकम स्याद् रथिका कणसश्रया ।।
आमलिश्चन्द्रशालाभि स्कन्धान्तम परिपूरयेत ।
खुरपिण्डा च जङ्घा च कुम्भाग्र शिखरादि च ।।

---

१ उपर्युक्त — पृष्ठ ६८–६९, खण्ड २ ।
२ उपर्युक्त — पृष्ठ १२८–१४३ से १४८ तक, खण्ड २ ।

यत्किंचित तत् प्रमाणेन वधमानसमम भवेत ।[१]

श्रीवत्स प्रासाद के लक्षण भी यहाँ हमें मिलते हैं[२] । यहा भीत पर चित्र बनाने का भी निर्देश मिलता है ।[३]

मूर्ति बनाने के प्रसग म हमें – 'लक्ष्मास्मिन कमलाका लिङ्ग कमलज मनि मिलता है ।[४] विष्ण की मूर्ति श्री के साथ बनाने का निर्देश मिलता है[५] तथा उनका वस्त्र पीत कहा गया है विष्णवद्वयसकारा पीतवासा श्रिया कृत ।[६] श्री की प्रतिमा के विषय में निम्नाकित श्लाक यहाँ मिलते ह –

पूर्णचन्द्रमुखा शुभ्रा बिम्बोष्ठी चारुहासिनी ।
श्वेतवस्त्रधरा कान्ता दि यालकारभूषिता ।।
कटिदेशनिविष्टेन वामहस्तेन शोभना ।
सपद्मेन वान्तेन दक्षिणेन शुचिस्मिता ।।
कतव्या श्री प्रसन्नास्या प्रथमे यौवन स्थिता ।[७]

प्रतिमा के चित्र बनान के हेतु नाप इत्यादि भी इस ग्रथ मे प्राप्त होते ह ।[८] रस दष्टि लक्षण नामक अध्याय मे चित्र लिखित प्रतिमा से रस की अनुभूति कराने का विवरण प्राप्त होता है ।[९] इन मूर्तियो द्वारा नौवो रसो का प्रतिपादन किस प्रकार होता है यहाँ नीचे लिखा है –

शृङ्गारहास्यकरुणरौद्रप्रयोभयानका ।
वीरप्रत्ययाक्षौ च बीभत्स वादभुतस्तथा ।
शान्तश्चक्रादशत्युक्ता रसाश्चित्रविशारद ।।[१]

इन रसो का विशष रूप से प्रत्यक्षीकरण दृष्टि तथा भ्रू के द्वारा कराया जाता है ।

मानसार में[११] विष्णु के मन्दिर में विष्णु के परिवार का वणन करते हुए वायव्य कोण में लक्ष्मी को स्थापित करने का निर्देश प्राप्त होता है [१२] वायव्य च महालक्ष्मी चशान्य च सुदशनम ।' मानसार के गृह प्रवेशविधान में भी लक्ष्मी की स्तुति करन का विधान है यह इस प्रकार है –

लक्ष्मी तता नमस्कृत्य याचयदिष्टमानकम् ।
हे लक्ष्मि गृहकर्तारम् पुत्रपौत्रधनादिभि ।।

---

१ उपर्युक्त — पष्ठ १८०–१८६, १५ से
२ उपयुक्त — पृष्ठ ११५, खण्ड २ ।
३ उपर्युक्त — पृष्ठ १८३–४७ ।
४ उपर्युक्त — पृष्ठ २४५–७० ।
५ उपयुक्त — पृष्ठ २७४ ।
६ उपर्युक्त — पृष्ठ २७४–३६ ।
७ उपयुक्त — पृष्ठ २७४–५०, ५१, ५२ खण्ड २ ।
८ उपर्युक्त — पृष्ठ २७६–२८५, १५–८८ खण्ड २ ।
९ उपर्युक्त — पष्ठ २९८–३०१ खण्ड २ ।
१० उपर्युक्त — पृष्ठ २९८–२, ३ ।
११ पी० के० आचार्या – मानसार आन आर्किटेक्चर एण्ड स्कल्पचर – दी आक्सफोड युनिवर्सिटी प्रेस, लन्दन ।
१२ वही – उपर्युक्त – पष्ठ १९७ परिवार विधानम अध्याय ३२ ७२ ।

सम्पूण कुरु चायुष्यम् प्राथयामि नमोऽस्तु ते ।[१]

मूर्तिया के बनान की सामग्री म हम यहा पाषाण के अतिरिक्त हिरण्य रजत ताम्र लकडी तथा मतिका भी प्राप्त होती है।[२] विष्ण मूर्ति के साथ यहा श्री और भूमि की मूर्ति बनान का विधान है – श्रीभूमि दक्षिण वामे स्थावरे जङ्गमेऽपि वा ।[३]

मानसार मे लक्ष्मी और महालक्ष्मी की मूर्ति के दो भद किय गय ह । महालक्ष्मी की मूर्ति का भी भद है एक चतुभुजी और दूसरी दो भुजावाली । चतुभुजी मूर्त्ति का विवरण निम्नाकित है –

रक्ताम्बुजम पीठतश्चोर्ध्वे दवी पदमासना भवेत् ।
चतुभुज त्रिनत्र च मुकुट कुतलम् भवेत ।।
पीताम्बरधरा रक्ताशकोपेताम् (भरणीम) ।
विशालाक्षमायत कुर्यादपाङ्गकोण स्मितानमाम ।।
दक्षिण त्वभयम् पूर्वे डिण्डिम वामहस्तके ।
अपरे दक्षिण पदम चादामालामथापि वा ।।
वामे नीलोत्पल वापि रक्तपदमोद्धत तु वा ।
पीनोन्नस्तनतटाम् भाल भ्रमरकान्विताम् ।।
अथवा रत्नपट्ट स्यात्स्वणताटङ्क कणयो ।
मकर कुण्डल वापि कणयो स्वणदामयुक् ।।
हारोपग्रीवसयुक्ता ससूत्रश्च सुमङ्गलीम ।
कुचतटश्च केकश्च हेमपट्टविभूषिणीम् ।।
रत्नानि चन्द्रवीर स्यात् स्वणरत्नोत्तरीययुक ।
केयूरेकटकस्वणरत्नपूरिमसयुताम् ।।
प्रकाष्ठवलय रत्न कटकम् मणिबन्धक ।
रत्नन कटिसूत्र स्याद्रत्नक्षामादिभूषिणीम् ।।
रत्नहेम च वस्त्रण कुर्यान्नीवयम् च लम्बयत ।
नलकान्त त्रिलम्ब स्यात्सवरत्नानि शोभिताम् ।।
भुजङ्गाङ्गवलयम् पादौ चोर्ध्वाधो रत्नबन्धनम ।
पादनूपुरसयुक्ताङ्गुली रत्नाङ्गुलीयकाम् ।।
बाहुमूलादि सभूष्य सर्वाभरणभूषिणीम ।[४]

द्विभुजा वाली मूर्ति का विवरण अधोलिखित है—

अथवा द्विभुज चव वामहस्ते च सन्धिमत ।३०।
दक्षिण रत्नपवन स्याच्छ्रण प्रागुक्तवन्नयेत् ।
एवम् प्रोक्ताम् महालक्ष्मीं स्थापयत्सवहम्यके ।

---

१ पी० के० आचार्या — उपयुक्त—पष्ठ २६३, गह प्रवेश विधानम्, अध्याय ३७–३३, ३४, ३५ ।

२ वही — उपयुक्त – पृष्ठ ३३४, त्रिमूर्ति लक्षणम – अध्याय ५१–१, २, ३, ४ ।

३ वही — उपर्युक्त – पष्ठ ३३६, त्रिमूर्ति लक्षणम् – अध्याय ५१–३२ ।

४ वही — उपर्युक्त – पृष्ठ ३५६, ३५७ अध्याय ५४–१९–३१ ।

सामान्य लक्ष्मी को दो भुजा वाली बनाना है[1]।

सामान्य लक्ष्मी कुर्याद द्विभुजा च द्विनत्रकाम ।
रक्तपद्मोद्धतौ हस्तौ सर्वाभरणभूषिणीम् ।।
शेष तु पूर्ववम् कुर्याद देवीपार्श्वे विशेषत ।
ऐरावतद्वयोश्चैव कुर्यादाराधयत्सुधी ।।
सर्वेषामालय द्वारे मध्याङ्ग तु पूजयत् ।
अथवा विष्णुपार्श्वे तु लक्ष्मीलक्षणमुच्यते ।।

विष्णु के बगल में लक्ष्मी कैसी हो—

द्विभुजा च द्विनत्रा च करण्डमकुटान्विताम ।
अथवा केशबन्ध स्याद्वामहस्तोद्धताब्जकम ।।
दक्षिण हस्त वरद च अथवालम्बनम भवत ।
स्थानक आसन वापि स्थापयेद विष्णुदक्षिण ।।
कुर्यात्त सवलक्ष्मीनाम् मध्यम दशतालके ।
सर्वाभरणसयुक्ता हेमवर्णाङ्गशोभिताम ।।[2]

इस प्रकार इस ग्रथ में कुछ सामग्री लक्ष्मी की मूर्ति के विषय मे मिलती है। इनकी मूर्ति दस ताल के बनान का सकेत यहा प्राप्त होता है। उत्तम तथा मध्यम दस ताल के विधान पसठव और छाछठवें अध्याया मे मिलते ह।

मानसोल्लास में अथवा अभिलषिताथ चिन्तामणि म जिसे कदाचित राजा सामश्वर भूलोकमल्ल ने प्राय ११३१ ईसवी में लिखवाया था[3] या लिखा था। इस ग्रथ मे पाँच प्रकरण ह। प्रत्येक प्रकरण में २० अध्याय ह। इसके प्रथम प्रकरण में देवता भक्ति के सिलसिल म हमे धातु की मूर्ति बनान की विधि प्राप्त होती है। इसी प्रकार कदाचित हमारे कासे की बोगरा की श्री की मूर्ति तथा दीप लक्ष्मी की मूर्तिया बनी होंगी और इसी प्रकार नवाड़ी कलाकारो न काँसे की नपाली लक्ष्मी की मूर्तिया बनाई होगी।[4] यह विवरण इस प्रकार है—

नवतालप्रमाणन लक्षणन समन्विता ।
प्रतिमा कारयत पूवमुदितेन विचक्षण ।।
सर्वावयवसम्पूर्णा किंचित्पीनादशो प्रिया ।
यथोक्तरायुधयुंक्ता बाहुभिश्च यथोदित ।।
तत्पृष्ठे स्कन्धदेश वा कृकाटयाम् मुकुटऽथवा ।
कासपुष्पनिभ दीर्घं नालकम् मदनोदभवम् ।।
स्थापयित्वा ततश्चार्चा लिम्पेत् सस्कृतया मदा ।
मषी तुषमयी घष्टवा कार्पास शतश क्षतम् ।।

---

१ वही — उपर्युक्त – पृष्ठ ३५७–३०, ३१।

२ वही — उपर्युक्त – पृष्ठ ३५७, ३२–३७।

३ यह मानसोल्लास के निम्नाकित श्लोक से अनुमान होता है जिसमें राजा सोमेश्वर को लेकर उपमा दी गयी है। प्राय लेखक स्वयम अपना उदाहरण नहीं उपस्थित करता। ये राजा पश्चिमी चालुक्यो के कल्याणी वंश के थे।

पक्षच्छेदभयायातभूभदरक्षाविधायिन ।
उपमाम वहत साक्षात सोमेश्वरमहीभुज ।।

४ इनकी तिथि निश्चित् न होने से इन्हें इस अध्ययन में सम्मिलित नहीं किया गया है।

लवण चूर्णित श्लक्ष्ण स्वल्प सयोजयन मृदा ।
पेषयत स त्रमेवत्र सुश्लक्ष्ण च शिलातल ।।
वारत्रय तदावर्त्यं तेन लिम्पेत समन्तत ।
अच्छ स्यात् प्रथमो लप छायाया कृतशोषण ।।
दिनद्वय व्यतीते तु द्वितीय स्यात्तत पुन ।
तस्मिछ्छ्के ततीयस्तु निविडो लप इष्यते ।।
नालकस्य मुख त्यक्तवा स वमालपय मृदा ।
शोषयत्तत् प्रयत्नन युक्तिभिबुद्धिमान् नर ।।
सिकथक तालयदादावर्च्चालिग्न विचक्षण ।
रीत्या ताम्रण रौप्यण हेम्ना वा कारयत्तु ताम ।।
सिक्थादक्षुण्ण ताम्र रीतिद्र य च कल्पयत् ।
रजत द्वादशगण हेम स्यात् षोडशोत्तरम् ।।
मदा सवेष्टयद् द्र यम् यदिष्ट कनकादिकम् ।
नालिकेराकृति मूषा पूर्ववत परिशोषयत ।।
वह्नौ प्रतापितामर्चां सिक्थ नि सारयत्तत ।
मूषाम् प्रतापयेत पश्चात् पावकोच्छिष्टवह्निना ।।
रीतिस्ताम्र च रसता नवाङ्गारव्रजद् ध्रुवम् ।
तप्ताङ्गारविनिक्षिप्त रजत रसता व्रजेत् ।।
सुवर्णं रसता याति पञ्चकृत्व प्रदीपित ।
मूषामूद्धनि निम्मयि र ध्र लौहशलाकया ।।
सन्दशन दृढ धत्वा तप्तम मूषा समुद्धरेत् ।
तप्तार्चानालकस्यास्य वर्तिम् प्रज्वलिता न्यसेत् ।।
सन्दशन धृता मूषा तापयित्वा प्रयत्नत ।
रस तु नालकस्यास्ये क्षिपेदच्छिन्नधारया ।।
नालकाननपयन्त सम्पूय विरमेत्तत ।
स्फोटयत्तत्समीपस्थम पावक तापशान्तय ।।
शीतलत्व च यातायाम् प्रतिमाया स्वभावत ।
स्फोटय मृत्तिका दग्धा विदग्धो लघुहस्तक ।।
ततो द्रव्यमयी सार्च्चा यथा मदननिमिता ।
जायते तादृशी साक्षादङ्गोपाङ्गोपशोभिता ।।
यत्र क्वाप्यधिकम् पश्यच्चारणस्तत प्रशान्तये (त्) ।
नालक छेदयेच्चापि पश्चादुज्ज्वलता नयत ।।
अनन विधिना सम्यग् विधायार्चा शुभ तिथौ ।
विधिवत्ताम् प्रतिष्ठाप्य पूजयत् प्रत्यह नृप ।।[१]

श्री की मूर्ति का स्वरूप इस ग्रथ मे इस प्रकार मिलता है—

श्रियं देवीम् प्रवक्ष्यामि नवयौवनशालिनीम् ।

सुलोचना चारुवक्त्रा गौराङ्गीमरुणाधराम ।।
सीमन्तम् बिभ्रती शीर्षे मणिकुण्डलधारिणीम ।
श्रीफल दक्षिण पाणौ वामे पद्म तु बिभ्रतीम् ।।
श्वेतपद्मासनासीना श्वेतवस्त्रविभूषिताम् ।
कञ्चुकाबद्धगात्री च मुक्ताहारविभूषिताम ।।
चामरर्वीज्यमाना च योषिद्भ्याम पार्श्वयोर्द्वयो ।
सामजै स्नाप्यमाना च शृङ्गारसलिलोत्कर ।।[1]

इस ग्रथ में मातकाओ में वैष्णवी अलग से मिलती है—

मातणाम् लक्षण वक्ष्य ब्रह्माणी वष्णवी तथा ।।
माहेश्वरी च कौमारी वाराही वासवी तथा ।
सप्तमी नारसिंही च तत्तद्रूपायुध समा ।
तत्तद्वाहनसयुक्ता कर्त्तव्या मातरो बुधै ।।
वीरेश्वरो विधातव्यो मातृणामग्रतस्तथा ।।
वीणात्रिशूलहस्तश्च वृषारूढो जटाधर ।[3]

यहाँ हमें लक्ष्मी की उत्पत्ति ऐरावत सुधा इत्यादि के साथ समुद्र से मिलती है तथा इस धारणा का भी सकेत मिलता है कि अच्छे सुवण को कोश मे रखन से आयु तथा लक्ष्मी की प्राप्ति होती है ।[5]

सोलहवी शताब्दी के श्रीकुमार के शिल्परत्न में श्री की मूर्ति का ध्यान इस प्रकार मिलता है—

अरुणकमलसस्था तद्रज पुञ्जवर्णा,
करकमलधृतेष्टाभीतियुग्माम्बुजा च ।
मणिमुकुटविचित्राऽलङ्कृता कल्पजाल
भवतु भुवनमाता सन्तत श्री श्रिय व ।।[6]

इस प्रकार हम संस्कृत के साहित्य के ग्रथो में लक्ष्मी के सम्बन्ध में बहुत सी बाते मिलती ह जो उन ग्रंथकारो के समय जनता में प्रचलित थी ।

इस प्रकार हम देखते ह कि हमारे सस्कृत साहित्य मे लक्ष्मी तथा श्री शब्द प्राय पर्य्यायवाची ह । लक्ष्मी के स्वरूप की कल्पना एक अति सुन्दर स्त्री के रूप में की गयी है । य धन तथा राज्य की देवी मानी गयी हैं । इनकी मूर्ति की कल्पना विष्णु की मूर्ति के साथ तथा गजलक्ष्मी के रूप में और कमल पर स्थित कमल धारण किये हुए यहा मिलती है । इनके विषय में प्रचलित पौराणिक गाथाओ का सकेत मिलता है ।

१ सोमेश्वर दत्त —मानसोल्लास–प्रथम प्रकरण ७७–९७ सरसी कुमार सरस्वती–एन एनशण्ट टेक्स्ट आन दी कास्टिंग ऑफ मेटल इमेजेज–जे० इ० एस० ओ० ए० ख० ४–२–१९३६, पष्ठ १३९–१४३ ।

२ वही —मानसोल्लास द्वितीय भाग, गायकवाड ओरियण्टल सीरीज, बडौदा १९३९, पृष्ठ ७०, ७९९–८०३, अभिलषिताथ चिन्तामणि – सोमेश्वर देव – मसूर १९२६, पृष्ठ २७० ।

३ सोमदेव —मानसोल्लास – द्वितीय भाग – उपयुक्त – पृष्ठ ६९–७१६–७१९ ।

४ वही —मानसोल्लास – प्रथम भाग – अभिलषिताथ चिन्तामणि प० ७७–३७४ ।

५ वही —उपयुक्त, पृष्ठ ८०–४०१ ।

६ श्रीकुमार —शिल्परत्न – सम्पादक के साम्बशिव शास्त्री, ट्रिवाण्डरम सस्कृत सीरीज न० ९८ श्री सेतु लक्ष्मी प्रसाद माला न० १०, १९२९, खण्ड २०, अध्याय २४, श्लोक ६३, पष्ठ १४३, ४४ ।

भारतीय मुद्राओं और मोहरों पर तथा अभिलेखों में लक्ष्मी तथा श्री

एसा अनमान होता है कि ईसा पूव द्वितीय शता दी तक जन साधारण म यह धारणा पूण रूप से घर कर गयी थी कि लक्ष्मी ही सौभाग्य प्रदात्री देवी है और इस कारण इनकी पूजा होना स्वाभाविक था। एसा भी प्रतीत होता है कि इनको राजा क एश्वय का प्रतीक भी इस काल तक मानन लग थ इसी कारण इस काल के आसपास के सिक्का पर इनकी मूर्ति भी बनन लग गयी थी। एसा विश्वास होता है कि राजा अपने सिक्को पर इनकी मूर्ति इस कारण अंकित कराता था कि उसकी राज्यलक्ष्मी उसके राज्यकोष म सुरक्षित रहे, क्योंकि जन विश्वास के अनुसार लक्ष्मी स्वभाव म चचला थी।

इस प्रकार के सबसे प्राचीन सिक्के जिन पर लक्ष्मी की मूर्ति अंकित है वह उज्जन के ह। इन पर एक ओर सूय अंकित वजा लिय हुए पुरुष अंकित है और दूसरी ओर गजलक्ष्मी की पद्म पर खडी मूर्तिया ह। इनके एक हाथ म पद्म है। यह ताम्र के ढाल हुए सिक्के प्राय ईसा पूव पहिली अथवा द्वितीय शता दी के ह।[1] कौशाम्बी से भी एक एसा ही सिक्का मिला है जिस पर किसी राजा का नाम नही अंकित है, उसके पीछे गजलक्ष्मी की खडी मूर्ति है।[2] इसी से मिलती जुलती मुद्रा पाचाल राजा अग्निमित्र तथा भद्रघोष की है जो प्राय ईसा पूव पहिली या द्वितीय शताब्दी की है, इस पर भी लक्ष्मी की मूर्ति अंकित है।[3] पाचाल राज्य के फाल्गुनी मित्र के ताम्बे के सिक्के पर भी एक ओर लक्ष्मी देवी की मूर्ति अंकित है। य कमल के विकसित पुष्प पर खडी ह। एक हाथ इनका कटि पर है, दूसरा ऊपर उठा हुआ है। उठ हुए दक्षिण कर म कमल है। इनके मस्तक पर पखो का एक मुकुट है। कानो में गोल बाली है। उत्तरीय कधो पर से होता हुआ परो तक लटक रहा है दूसरे वस्त्र स्पष्ट नही ह। इनके दक्षिण ओर वज्र के आकार का एक चिह्न है।[4] इनके मुकुट में लगा पख सम्भवत यह सकेत करता है कि इस देवी का सम्पक जनजातिया से भी था। यह सिक्का भी प्राय पहिली या द्वितीय शता दी ईसा पूव का है (फलक २५ क)। अयोध्या के विशाखदेश शिवदत्त तथा वासुदेव के सिक्को पर भी हमें गज लक्ष्मी की मूर्ति प्राप्त होती है। य सिक्के भी प्राय ईसा पूव पहिली या दूसरी शता दी के ह।[5]

भारतीय यूनानी राजाओ न जो सिक्के भारत म चलाय उनम पण्टालिआन तथा अगाथाक्लीज के सिक्को पर जो नाचती हुई स्त्री बताइ जाती है उसे कुमार स्वामी न लक्ष्मी माना है[6] (फलक २५ ख, ग)। इस

१ डा० मोतीचन्द्र — आवर लेडी आफ ब्यूटी एण्ड अबन्डेन्स – पद्मश्री नेहरू अभिनन्दन ग्रन्थ – पृष्ठ ५०५, विंशेण्ट स्मिथ – कटलाग आफ दी क्वायन्स इन दी इण्डियन म्यूजियम – खण्ड १ पृष्ठ १५३, प्लेट १६, स० २०।

२ जे० एन० बनर्जी — डेवलपमेण्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी – पृष्ठ ११०।

३ डा० मोतीचन्द्र — उपर्युक्त – पृष्ठ ५०५, कटलाग आफ दी क्वायन्स इन दी इण्डियन म्यूजियम, पृष्ठ १८६–१८७।

४ सी० जे० ब्राउन — दी क्वायन्स आफ इण्डिया – दी हेरिटेज आफ इण्डिया सीरीज – प्लेट १०, सख्या ४।

५ विंशेण्ट स्मिथ — कटलाग ऑफ दी क्वायन्स इन दी इण्डियन म्युजियम – पृ० १४८ १४९।

६ डॉ० मोती चन्द्र — उपर्युक्त-पृष्ठ ५०५।

मूर्ति की वषभूषा यूनानी है जिससे एसा ज्ञात होता है कि इस मूर्ति की कल्पना यूनानी कारीगरो न की थी।[१] शक या इण्डो परथियन राजाओ के अजज के सिक्के पर भी लक्ष्मी की मूर्ति हम प्राप्त हाती है। यहाँ भी लक्ष्मी एक हाथ मे कमल लिय खडी दिखाई गई ह (फलक घ)।[२] इसी प्रकार गजलक्ष्मी की मूर्ति हम अभिलिषर (अजिलिसेज) की मुद्रा पर प्राप्त होती है।[३] इसन दस प्रकार के चादी के सिक्के निकाल थ इनमें छठव प्रकार के सिक्के पर एक ओर घोड पर सवार राजा की मूर्ति है दूसरी ओर लक्ष्मी की खडी मूर्ति है। यहा देवी सामन मुख कर के विकसित कमल के फूल पर खडी दिखाई गयी है। इनका एक हाथ वक्षस्थल पर है दूसरा बाई ओर लटक रहा है। मस्तक पर मुकुट है काना म कुण्डल है। नीचे के अग में धोती है जिसकी दो छोर दोना ओर लटक रही ह। पर म नूपुर ह और वस्त्राभूषण के चिह्न स्पष्ट नही ह क्याकि यह सिक्का घिस गया है। कमल के फूल के पास से दो कमल की डडिया निकलती हुई दिखाई गयी ह। इनम दो कमल लग ह जिन पर दो हाथी खड होकर इनको लम्ब ग्रीवावाल बतना से अभिषक कर रहे ह (फलक ६ ख तथा फलक २५ ड)। इसी प्रकार कुणिन्दु महाराजा अमोघभूति के सिक्के पर हम लक्ष्मी की खडी मूर्ति प्राप्त होती है। इसम लक्ष्मी एक हाथ में पद्म लिय खडी ह इनके दाहिनी ओर एक हिरन बना है। इस सिक्के पर खराष्टी अक्षरा म 'अमघ भुतस महरजस कुणदस' लिखा है। (फलक २५ च)। इसम लक्ष्मी के पर और उनके उत्तरीय स्पष्ट दिखाई देते ह।[४] इसी प्रकार के एक दूसरे सिक्के पर लक्ष्मी दोहरे कड पहिन कमल पर स्थित ह (छ)। राजन्य जनपद के सिक्के पर भी हमें लक्ष्मी की मूर्ति मिलती है (ज)।[५]

मथुरा से प्राप्त सूयमित्र विष्णुमित्र पुरुषदत्त उत्तमदत्त बलभूति रामदत्त तथा कामदत्त के सिक्का पर भी हम लक्ष्मी की मूर्ति मिलती है।

इसी प्रकार मथुरा से प्राप्त राजवुल के पुत्र सोडास के ताम्र क एक सिक्के पर गजलक्ष्मी की मूर्ति अकित मिलती है।[८] यह प्राय ११० ई० पू० की है। एक ओर देवी की मूर्ति है दूसरी ओर गजलक्ष्मी की खडी मूर्ति है। इसमें देवी का दक्षिण हाथ ऊपर उठा हुआ है और बाँया हाथ बगल म लटका है दाना ओर हाथी कमल के फूलो पर खड इन्हे स्नान करा रहे ह। लक्ष्मी एक प्रकार का छाटा लहगा पहिन हुए ह। कान म कुण्डल है। दूसरे आभूषण तथा वस्त्र घिस जाने के कारण दिखाई नही देते। यह सिक्का ताब का है। देवी दोनो परो की एडी मिलाये हुए पर फला कर खडी ह। (फलक २५ झ)

यौधेय राजा स्वामी ब्रह्मण्यदेव के सिक्का पर पीछ की ओर एक लक्ष्मी की सामन की ओर मुख किये खडी मूर्ति मिलती है। य सिक्के प्राय ईसा की पहिली शताब्दी के मान जाते ह। यह मूर्ति पद्म पर स्थित है

---

१ आर० बी० ह्वाइट हेड — कटलाग आफ क्वायन्स इन दी पजाब म्यूजियम, लाहौर, खण्ड १ पष्ठ १६ प्लेट २ सख्या ३५ तथा विंसेण्ट स्मिथ — क्वायन्स इन दी इण्डियन म्युजियम — प्लेट २, २।

२ आर० बी० ह्वाइट हेड — उपयुक्त — पृष्ठ १२० प्लेट १२ सख्या ३०८।

३ वही — उपयुक्त — खण्ड १ पष्ठ ३३२-३३३ प्लट १३ सख्या ३३२-३३३।

४ राखाल दास बनर्जी — प्राचीन मुद्रा — नागरी प्रचारिणी सभा — सवत १९८१ पृष्ठ ९० ९१।

५ विंसेण्ट स्मिथ — उपर्युक्त — प्लेट २० सख्या ११, १२।

६ वही — उपयुक्त — प्लेट २१ सख्या ११।

७ डॉ० मोतीचन्द्र — उपर्युक्त — पृष्ठ ५०५।

८ विंसेण्ट स्मिथ — कटलाग ऑफ क्वायन्स इन दी इण्डियन म्युजियम, कलकत्ता — पष्ठ १९६-१९७, प्लेट २२, सख्या १३।

एक हाथ ऊपर उठा हुआ है। बाये हाथ म कमल है जो कटि पर है। इनके बायी ओर कल्पतरु है और दाहिनी ओर मेरु पवत है। इनके काना के गोल कुण्डल तथा परा क नूपुर स्पष्ट ह और आभूषण दिखाई नही देत। मस्तक पर परा का मुकुट है।[1] (फलक २५ ञ) इसी प्रकार के कुछ्क सिक्के और मिल ह इनम यौधेय लिखा है।[2] इसम एक आर राजा की ध्वजाधारी मूर्ति अकित है और दूसरी ओर दक्षिण मुख किय लक्ष्मी की मूर्ति अकित हे। इनके सामन पूण घट है और पीछ श्रीवत्स का चिह्न है (फलक २५ ट)।

सिहल क राजाआ न एक प्रकार के सिक्के इसी काल म बनवाय। इन पर एक ओर लक्ष्मी की मूर्ति है। यह लक्ष्मी खडी ह दाना आर दा हाथी इनका स्नान करा रह ह।[3] आन्ध्र राज्य कुल के गौतमीपुत्र राजा यज्ञ श्रीशातकर्णी के एक प्रकार के जस्ते के सिक्के पर एक ओर हाथी की खडी मूर्ति प्राप्त होती है और दूसरी ओर लक्ष्मी की खडी मूर्ति (फलक २५ ठ)। इस देवी के दोनो ओर कठघरे बन ह। इनके दोनो हाथ में कमलनाल है जिसके पुष्प पर दो हाथी स्थित ह। कठघरो से एसा ज्ञात होता है कि यह मन्दिर में प्रतिष्ठित देवी को यहा अकित करन का प्रयत्न है। यह सिक्का प्राय ईसा की दूसरी शताब्दी का है।[4]

कुशाण काल के कनिष्क और हुविष्क के सिक्को के दूसरी ओर आरडोक्षसो की खडी मूर्ति मिलती है परन्तु वसु या वसुदेव के सिक्को पर सिंहासन पर बठी हुई आरडोक्षसो की मूर्ति प्राप्त होती है। इस बठी हुई मूर्ति के दक्षिण हाथ में पाश है और बायें में अनाज की बाल सहित जुठठा है। एसा अनुमान होता है कि वसुदेव के काल तक यह आरडोक्षो या आरडोक्षसो देवी का भारतीयकरण हो गया था तथा इन्हें लक्ष्मी का स्वरूप दे दिया गया था। वसुदेव के सिक्का पर य अधोभाग म धाती पहिन हुए ह ऊपर के अग मे इनके चोली है और मस्तक पर केश विन्यास भी भारतीय ही है। एक ओर जूडा है और उसको एक बन्दी से लपेटा गया है। गल और हाथ में आभूषण भी दिखाई देते ह।[5] केदार कुषाण के एक प्रकार के सिक्को पर जो लक्ष्मी की मूर्ति दिखाई देती है उसम देवी के हाथ में कमल का फूल है और वह सिंहासन पर स्थित ह। कुछ विद्वानो का मत है कि इसी आरडोक्षसो की मूर्ति का रूपान्तर लक्ष्मी के रूप म हम गुप्त काल के सिक्को पर देखते ह।[6] यो गुप्त-साम्राज्य के मुख्य तीन ध्यय थ। यथा – राजाआ पर विजय और साम्राज्य का सगठन व्यापार द्वारा धन का उपाजन तथा सौन्दय की पूजा है। इन तीनो ध्ययो की प्राप्ति देवी लक्ष्मी से ही सम्भव थी। इस कारण विशष रूप से इनका मुद्राआ पर अकन इस काल में स्वाभाविक था। चन्द्रगुप्त प्रथम के सिक्के पर जिसमें एक ओर चन्द्रगुप्त और कुमार देवी की मूर्ति बनी हुई है और दूसरी आर सिंह पर लक्ष्मी की बठी हुई मूर्ति दिखाई देती है। इनके एक हाय म पाश तया दूसरे म नाल सहित कमलगट्टा का छत्ता है जसा वसुदेव के सिक्को पर

---

१ वही — उपयुक्त – पष्ठ १८१ प्लेट २१ सख्या १५।
२ वही — उपयुक्त – प्लेट २१, सख्या १८–२०।
३ ए० कुमार स्वामी — अर्ली इण्डियन आइकोनोग्राफी – श्रीलक्ष्मी – ईस्टन आट, खण्ड १, प्लेट २०
४ विंशेण्ट स्मिथ — उपयुक्त – पष्ठ २१२, प्लेट २३ सख्या २१।
५ आर० वी० ह्वाइट हेड — कटलाग आफ क्वाय स इन दी पजाब म्युजियम, लाहौर, ऑक्सफोड प्रेस १९१४ – प्लट १९ सख्या २३६, २३७।
६ जे० आलन – कटलाग आफ दी क्वाय स आफ दी गुप्त डाइनेस्टीज एण्ड आफ ससाक, किंग आफ गौड – ब्रिटिश म्युजियम – १९१४ – पृष्ठ २८ प्रस्तावना, अल्तेकर – कारपस आफ इण्डियन क्वायन्स – दी क्वायनेज आफ दी गुप्ता इम्पायर – पृष्ठ १५।
७ राखाल दास बनर्जी – प्राचीन मुद्रा – पष्ठ १५३, आलन – उपर्युक्त – प्लेट ३, सख्या ६।

बनी लक्ष्मी के हाथ म है ।[1] य क वा पर उत्तरीय आ- हू नीचे के अग म धाती और ऊपर के अग म चाली पहिने हुए ह गल म मोतिया की माला हाथ में ककण पर म नूपुर और काना म कुण्डल ह (फलक २६ ड) । इनका पर कमल के पुष्प पर है ।[2] इसी प्रकार की मूर्ति कनिष्का के सिक्का पर एक देवी की दिखाई देती ह ।[3]

समुद्रगुप्त के पराक्रम से सम्बन्धित सिक्का के पीछ लक्ष्मी सिहासन पर पर नीच लटका कर बठी ह ।[3] इनके एक हाथ म पाश और दूसरे में नाल सहित कमलगट्टा है। इनके दाना पर कमल के विकसित फूल पर स्थित ह । इनके ऊपर के अग म चाली कधा पर उत्तरीय और नीचे के अग म धाती है । कुषाणो की आरडाक्षो देवी से य यो भिन्न ह कि इनके पर कमल पर स्थित ह गल म एकावली है काना मे कुण्डल और हाथ म वलय है । कमर की करधनी स्पष्ट नही दिखाइ देती । परा म नूपुर ह । मस्तक पर बिन्दी देकर माती की बन्दी दिखाई गयी है । इनका बाया हाथ कमर पर दाहिना कुछ उठा हुआ है, जा हाथ कमर पर है उसी में य कमलगट्टा नाल सहित पकड हुए ह (ढ) । समुद्रगुप्त के वीणा बजाते हुए सिक्का के पीछ लक्ष्मी एक माढ पर तिक्ख बठी हुई मिलती ह । वस्त्राभूषण उपर्युक्त ह (ण) । समुद्रगुप्त के काचा ग्राम वाल सिक्का पर लक्ष्मी की खडी मूर्ति है (फलक २६ त) । इनके बाय हाथ मे कमलगट्टा और दाहिन हाथ म फूल है ।[4] य भी पद्म पर खडी ह । और सिक्को पर प्राय जहाँ लक्ष्मी अकित की गयी ह वे बैठी हुई ह । चन्द्रगुप्त द्वितीय के प्राचीनतम धनुर्धारी सिक्को पर लक्ष्मी उसी भाति अकित ह जसे समुद्रगुप्त के ध्वजाधारी सिक्का पर, परन्तु चन्द्रगुप्त द्वितीय के सिंहासनारूढ सिक्का के पीछे बनी हुई लक्ष्मी की मूर्ति में तथा समुद्रगुप्त के सिक्कावाली लक्ष्मी में केवल इतना अन्तर है कि इनके दोनो हाथ ऊपर उठ हुए ह (थ) ।[5] इसी प्रकार का एक धनुषधारी सिक्का भी है (द) । पीछे के चन्द्रगुप्त द्वितीय के धनुर्धारी सिक्को पर ये सामन मुख कर के सिंहासन के स्थान पर योगासन मे पद्म पर स्थित दिखाई गयी ह इनके दोनो बाहू फल हुए ह । एक हाथ में कमल और दूसरे में पाश है । इस पाश का क्या अभिप्राय था यह कहना कठिन है । इनके मस्तक पर बन्दी काना मे कुण्डल बाहू पर अगद मणिबधा पर वलय गले मे एकावली कमर म करधनी है तथा परो में नूपुर ह वक्षस्थल पर चोली कन्धो पर उत्तरीय है तथा नीचे के अग मे धोती है । इस प्रकार के सिक्को पर पुराणो में वर्णित लक्ष्मी का रूप मिलन लगता है (फलक २४ तथा फलक २५ घ) । इनके बठन का ढग भी भारतीय हो जाता है । इसी प्रकार के और धनुषधारी सिक्को पर बायाँ हाथ जघ पर स्थित दिखाया गया है परन्तु दक्षिण हाथ फला हुआ है ।[8] दाहिने हाथ में पाश है और बायें में कमलनाल जिसमें से फूल निकल रहा है । कमल जिस पर लक्ष्मी स्थित ह वह प्राय सप्तदल का है ।

छत्रधारी चन्द्रगुप्त द्वितीय के सिक्का के पीछे खडी लक्ष्मी का रूप व्यक्त किया गया है । इसमें कुछ में लक्ष्मी सामने मुख करके खडी ह और कुछ म य तिक्ख खडी ह (न) वस्त्राभूषण दोनो प्रकार की मूर्तिया में समान है, परन्तु सामन मुख किये खडी लक्ष्मी के मस्तक पर एक मुकुट दिखाई देता है । चन्द्रगुप्त द्वितीय के सिंह वध

---

१ ह्वाइट हेड — उपयुक्त – प्लेट १९ सख्या २३६ ।

२ आलतेकर — कारपस – प्लेट १ सख्या ७ ।

३ राखाल दास बनर्जी — उपयुक्त – पष्ठ १५८, आलेन – केटलाग – प्लेट २ स० ३ ।

४ आलेन — कटलॉग – प्लेट ५–६ ।

५ आलेन — कटलाग – प्लेट २–९ ।

६ जे० आलन — उपयुक्त – प्लेट ६ सख्या ८, ९ ।

७ वही — उपर्युक्त – प्लेट ६ सख्या १०, १२ १६ इत्यादि ।

८ वही — उपयुक्त – प्लेट ७ सख्या १४, ६ १९ ।

की मुद्राओं में लक्ष्मी का सिंह पर आरूढ़ दिखाया गया है (फलक २६ प)।[१] इस प्रकार की मुद्राओं म कहीं इनको सुख आसन म सिंह पर बैठी दिखाया गया है[२] तो कहीं य।गासन म।[३] किसी किसी सिक्के म य दोनों पर नीचे किये हुए सिंह पर बैठी हुई दिखाई गयी ह[४] और किसी म सिंह पर घोड़े की भाँति सवार ह। इन मूर्तियों म इनके मस्तक पर एक जूड़ा है। अश्वारोही चन्द्रगुप्त द्वितीय के सिक्कों के पीछे लक्ष्मी एक मोढे पर स्थित दिखाई गई ह वस्त्राभूषण पूर्वोक्त हैं (फलक २७ फ)। च द्रगुप्त के चक्र विक्रम पर लक्ष्मी एक विकसित कमल के ऊपर सामने मुह करके खड़ी ह।[५] इस विग्रह म इनके बाय हाथ म कमल है और दायाँ हाथ दान मुद्रा में उठा हुआ है। दाहिने हाथ के नीचे शख बना है। कानों मे कुण्डल हाथ मे वलय दिखाई देते ह। ऊपर का उत्तरीय कन्धों पर से होता हुआ पैरों तक लटक रहा है। ऊपर के अग में चोली और नीचे धोती है (ब)।

कुमारगुप्त प्रथम के धनुषधारी सिक्कों पर य सात पखड़ी वाले कमल के फूल पर स्थित ह, बायें हाथ म पाश है जो उठा हुआ है। दक्षिण कर कटि पर है, जिसमें कमल के फूल की नाल है। इस प्रकार के कुमारगुप्त के सिक्कों पर लक्ष्मी का वही स्वरूप मिलता है जो चन्द्रगुप्त के सिक्कों पर। यहाँ य सुखासन मे बैठी ह[६]। इसी प्रकार के कुछ सिक्कों में देवी का कमलवाला बायाँ हाथ भी उठा हुआ है। अश्वारोही सिक्कों के पीछे लक्ष्मी एक मोढे पर बैठी हुई एक मोर को कुछ खिलाती हुई दिखाई गयी ह (फलक २६ भ)। इनके बायें हाथ में कमल है।[७] सिंह के आखेट वाले सिक्कों पर य सिंह के ऊपर स्थित दिखाई गयी ह। इन सिक्कों में जिनमें सिंह राजा के बाई ओर दिखाया गया है उनके पीछे लक्ष्मी सिंह के ऊपर अर्ध-पर्यंक आसन मे बैठी ह। इनम कुछ के ऊपर लक्ष्मी के दक्षिण कर म पाश है और कुछ मे य दाहिने हाथ से मुद्राएँ गिरा रही ह। य मुद्राएँ गोल ह और कदाचित गुप्त स्वर्ण सिक्कों के प्रतिरूप हैं[८], परन्तु सिंह आखेट वाले उन सिक्कों पर, जिसम सिंह राजा के दाहिनी ओर है, य मोर को खिलाती हुई दिखाई गयी ह (फलक २७ म)। प्रताप अथवा अप्रतिघ सिक्कों पर इनके दक्षिण कर म पद्म है और य एक पद्म के फूल पर स्थित ह बायाँ कर कटि पर है (फलक २७ य)। यहाँ भी इनके मस्तक पर एक जूड़ा है।[९] गज आरोही मुद्रा के पीछे की लक्ष्मी कमल पर खड़ी दिखाई गयी ह, इनके दक्षिण कर में कमल-नाल है जो नीचे के तालाब म से निकल रहा है और बाय हाथ के नीचे भी कमल है। इनकी बाई ओर कल्पवृक्ष है (फलक २७ र)।[१०] कुमारगुप्त के राजा रानी सिक्के के पीछे लक्ष्मी सिंह पर अर्ध पर्यंक आसन पर बैठी

---

१ वही — उपर्युक्त – प्लेट ८ सख्या ५ तथा ६।
२ वही — उपर्युक्त – प्लेट ६, सख्या ५, ८, ६।
३ वही — उपर्युक्त – प्लेट ८ सख्या १४, १५।
४ जे० आलन — उपर्युक्त – प्लेट ६, सख्या १३।
५ आल्तेकर — कारपस – प्लेट ६, सख्या ६, विष्णु धर्मोत्तर पुराण में शख का सम्बन्ध लक्ष्मी से मिलता है।
६ जे० आलन — उपर्युक्त – प्लेट १२, सख्या १, ३।
७ वही — उपर्युक्त – प्लेट १२, सख्या ११, १२।
८ वही — उपर्युक्त – प्लेट १३, सख्या १३, १४।
९ वही — उपर्युक्त – प्लेट १४ सख्या १०, ११।
१० वही — उपर्युक्त – प्लेट १५, सख्या १५।
११ जे० आलन — उपर्युक्त – प्लेट १५, सख्या १६।

ह बाय हाथ म कमल है और दक्षिण कर म पाश है ।[1] वीणा बजात हुए कुमार गुप्त के सिक्के पर लक्ष्मी सिंहासन पर तिक्खी बठी ह । एक पर पर दूसरा पर है बाया हाथ सिहासन पर है और दक्षिण कर म कमल है । नत्र कमल की ओर है । वस्त्राभूपण पूववत है ।[2] कुमारगुप्त क छत्रधारी प्रकार व सिक्क। क पीछ लक्ष्मी दक्षिण हाथ म पाश और बायें म कमल लिय दाहिन मु ह किय खडी दिखायी गयी ह । इनके कान मे गोल बाली, गले में एकावली बाहू पर केयूर मणिबन्धो म कडा और परा मे भी कड ह । जूडा पीछ की ओर लटक रहा है । मस्तक पर बन्दी तथा माग मे मोती की लडी दिखाई देती हे । ऊपर का उत्तरीय नीचे तक लटक रहा है ।[3] एक ओर विचित्र सिक्के म कुमारगुप्त एक गण्ड को तलवार से मारत दिखाय गय ह । इस मुद्रा के पीछ जो लक्ष्मी की मूर्ति है वह अद्वितीय है । यहा देवी पर एक यक्ष छत्र लगाये खडा है और दवी का एक हाथी के सूड वाला मगर अपनी सूँड से कमल अर्पित कर रहा है । (इस देवी को कुछ विद्वाना ने गगा कहा है परन्तु कमल से सम्बन्धित होन से इन्हे लक्ष्मी कहना अधिक उपयुक्त होगा) ।[4]

स्कन्दगुप्त के धनुषधारी सिक्क। म लक्ष्मी कमल पर स्थित ह । बाय हाथ म कमल और दक्षिण कर मे पाश है । आभूषण इत्यादि पहिल के चन्द्रगुप्त द्वितीय के धनपधारी सिक्क। के पीछ की लक्ष्मी की भाति है (फलक २७ ल)। एक विशषता यह अवश्य मिलती है कि कमल की पखडिया मे एक पक्ति के नीच दूसरी पक्ति भी कमल की पखडिया की दिखायी गयी ह।[5] स्कन्दगुप्त के राजा रानी वाल या लक्ष्मी राजा वाल[6] सिक्के के पीछ की लक्ष्मी में धनुर्धारी सिक्का से काई विशेष अन्तर नही दिखाइ दता । केवल इनके बाहू म बहुत सी चूडियाँ दिखाई देती ह (फलक २७ व) । छत्रधारी सिक्का के पीछ की लक्ष्मी दक्षिण मु ह कर खडी दिखाई गई ह ।[7] इनके एक हाथ में पाश है और दूसरे म कमल है बायाँ हाथ नीचे की आर लटका हुआ हे । गल मे एकावली, कानो में बाली बाहु पर केयूर तथा मणिबन्ध पर कड ह परा म नूपुर भी दिखाइ दते ह और वस्त्र पूववत है । मस्तक के पीछे के जूड में मोती लग ह । स्कन्दगुप्त के अश्वारोही सिक्के के पीछ की लक्ष्मी माढ़ पर बठी दिखाई गई ह ।[8] इनके दक्षिण कर म पाश और बाये मे कमल है । इनके आभूषणों में गल की एकावली के साथ एक तौक दिखाई देता है तथा यह एक विशेषता है कि नीचे का मोढ़ा भी नाव के आकार का है । घटोत्कच्छ का एक सिक्का मिला है[9] इसमें राजा धनुर्धारी के रूप म खड ह पीछ लक्ष्मी की मूर्ति कमल पर स्थित है । इनके गल में भी एक एकावली के साथ तौक दिखाई देता है । बाहु पर केयूर है[10] कानो क कुण्डल लम्बे दिखाई देते है और वस्त्राभूषण यथावत् ह । इस प्रकार का अभी तक एक ही सिक्का मिला है जो इस समय लनिनग्राड के सग्रहालय में सुरक्षित है ।[11]

---

१ आल्तेकर —— कारपस – प्लेट १४–४ ।
२ वही —— उपर्युक्त – प्लेट १४–५ ।
३ वही —— उपयुक्त – प्लेट १३–१५ ।
४ वही —— उपयुक्त – प्लेट १३–४५ पृष्ठ १९८ ।
५ वही —— उपयुक्त – प्लेट १४–८, ९, १० ।
६ वही —— उपयुक्त – प्लेट १४–१२, १३ पृष्ठ २४४, २४५ ।
७ वही —— उपर्युक्त – प्लेट १४–१४ पष्ठ २४८ ।
८ वही —— उपयुक्त – प्लेट १४–१५, पष्ठ २४९ ।
९ वही —— उपयुक्न – पृष्ठ २४८ ।
१० वही —— उपयुक्त – प्लेट १४–१६ ।
११ वही —— उपयुक्त – पृष्ठ २४८ ।

स्कन्दगुप्त के उत्तराधिकारियो के सिक्को के पीछे बनी लक्ष्मी की मूर्ति प्राय एक ही प्रकार की है। नरसिंहगुप्त, कुमारगुप्त द्वितीय, बुद्धगुप्त, विष्णुगुप्त विनयगुप्त प्रकाशादित्य इत्यादि की मुद्राओ पर लक्ष्मी कमल पर स्थित बायें हाथ में कमल तथा दक्षिण हाथ में पाश है। ससाक के सिक्को पर लक्ष्मी का एक पर दूसरे के ऊपर है (श)।[१] कुछ सिक्को में जो और पीछे चलकर गुप्तो के साम्राज्य नष्ट होने पर निकले, उनमें अष्ट भुजा लक्ष्मी खडी दिखाई गयी है।[२] (फलक २७ ष)। यह विशेषता इसके पहिले के काल की लक्ष्मी मूर्ति पर नही दिखाई देती।

छठवी शताब्दी के काश्मीर के राजा तोरमान के सिक्को के पीछे लक्ष्मी की बैठी हुई मूर्ति है। यहाँ देवी पर मोड कर तिरछी बैठी है। इनके बायें हाथ में कमल की नाल है फूल कन्धे के पास है। इनके सामने की ओर एक घट है। कानो मे कुण्डल हाथ मे मोती के वलय तथा पैरो मे नूपुर दिखाई देते है। ये एक प्रकार का छोटा लहगा पहिने हुए है जिसमे से फुन्ने लटक रहे है।[३] तोरमान के एक और सिक्के पर लक्ष्मी एक पर लटकाये और एक कुछ मोड अर्ध परियक आसन में सामने मुख किये हुए सिंहासन पर स्थित है। बाया हाथ जंघे पर तथा दक्षिण उठा हुआ है। प्राय यह गुप्त सिक्को की भाँति की प्रतिमा लगती है।[४]

प्रतापादित्य द्वितीय यशोवर्मन विनयादित्य (जयापीड) विग्रह इत्यादि के सिक्को पर एक ओर लक्ष्मी की सिंहासन पर बैठी मूर्त्ति है। इन सिक्को में प्राय मूर्त्ति का मस्तक नही अकित हो पाया है। यो ये सिक्के बहुत भद्दे बने हुए है।[५] जैसे इस काल तक मुद्राओ पर मूर्तियाँ अकित करने की कला ही नष्टप्राय हो गयी थी।

प्राय ११ वी शताब्दी के गागेय देव के स्वर्ण के सिक्को के पीछे लक्ष्मी की बैठी हुई मूर्ति मिलती है (फलक २८ ह)। इनके चार हाथ है। ये सुखासन में बैठी है। इनके मस्तक पर मुकुट, कानो में कुण्डल, हाथो में वलय, कटि में करधनी और परो में कडे है।[६] इसी से मिलती-जुलती मूर्ति बुन्देलखण्ड के चदेल राजा वीर वर्मा देव के सिक्को पर (फलक २८ अ) तथा गहडवार राजा गोविन्द चन्द्र के सिक्कों पर भी मिलती है।[७]

काश्मीर के पार्थ, क्षेमेन्द्रगुप्त (इ), अभिमन्युगुप्त नन्दीगुप्त, त्रिभुवन गुप्त, भीमगुप्त, दीद्दा रानी की मुद्राओ पर, जिनका राज्यकाल प्राय ९०६ ई० से १००३ तक चला, हमें लक्ष्मी की मूर्ति प्राप्त होती है (पार्थ फलक २८ या क्षेमेन्द्र गुप्त २८ इ)। रानी दिद्दा की मुद्राओ पर तो एक ओर श्री भी लिखा मिलता है (९८० १००३)।[८] इन सिक्को पर लक्ष्मी की मूर्त्ति प्राय बैठी हुई दिखाई गयी है तथा गज दोनो ओर से स्नान करा रहे है। इनमें क्षमेन्द्र गुप्त की मुद्राओं पर जो लक्ष्मी बनी है उनके चार हाथ दिखाये गये है। इनके मुकुट के ऊपर तीन कलगी हैं, कानो में कुण्डल गले मे चुहादती तौक नीचे के अग में झालरदार लहँगा है।[९] इनको दो गज

---

१ जे० आलन — कटलाग – प्लेट २३ सख्या १४, १५, १६।
२ वही — कटलॉग – प्लेट २४, सख्या १७, १८, १९।
३ वही — उपयुक्त – पृष्ठ २५२ प्लेट २६ सख्या ७।
४ वही — उपयुक्त – प्लेट २७–४।
५ वही — उपयुक्त – पृष्ठ २७, सख्या ५, ६, ७, ८।
६ वही — उपयुक्त – पृष्ठ २७, सख्या २, ३।
७ वही — उपर्युक्त – पृष्ठ २६ सख्या ९ तथा १९।
८ वही — उपयुक्त – पृष्ठ २७०–२७१ प्लेट २७ सख्या ९, १०, ११, १२, १३ – कल्हण की राज तरगिणी।
९ विसेण्ट स्मिथ — कटलाग – प्लेट २७, संख्या १० – कल्हण की राजतरगिणी।

दोनो ओर से स्नान करा रहे ह । प्राय इमी वष भूषा में और दूसरी मुद्राआ पर भी इनका दशन होता है । इसी से मिलती-जलती मद्रा प्रथम लाहार घगन के राजा सग्राम अनन्त कलश तथा हष न भी प्रसारित की (सग्राम फलक २८ ई) । इन राजाआ का राज्यकाल प्राय १००३ ११०१ ई० तक माना जाता है । इन मुद्राओ पर भी एक ओर गज लक्ष्मी की बठी हुई मूर्त्ति अकित है । दूसरे लाहार राजघरान क सुस्सल, जयसिंह देव नागदेव के सिक्कों पर जिनका राज्यकाल १११० १२१४ ई० तक माना जाता हे लक्ष्मी सिंहासन पर स्थित नीचे योरापीय ढग से पर लटकाय हुए दिखाई गयी ह । इनम जागदव के सिक्के पर यह भाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है । इनके मुकुट पर एक कलगी है गने म चूहादन्ती वाला ताक पहिन ह । तथा इन्हे दोनो आर से दो गज स्नान करा रहे ह[1] ।

लका के पराक्रम बाहु (११५३ ८६ ई०) से लकर भुवनक बाहु (१२९६ ई०) तक के सिक्के चोल राजा राजराज के ढग के ह । इनम एक आर राजा की खडी मूर्त्ति और दूसरी ओर लक्ष्मी की मूर्त्ति है ।[1] इनके बाय हाथ मे कमल है । य मूर्त्तियाँ बहुत भाग्नी बनी हुइ ह ।

कान्यकुब्ज के जयचन्द का परास्त करन के पश्चात् जा सिक्के माहम्मद बिन साम ने भारत के मध्यदेश में चलाये वे गहडवाल राजाआ के सिक्को के ही ढग के थ । ये स्वण के ह, इन पर एक ओर मोहम्मद बिन साम नागरी अक्षरो में लिखा है और दूसरी ओर लक्ष्मी देवी की (ऊ) चार हाथ वाली मूर्त्ति बनी है[2] (फलक २८ ऊ)।

नेपाल के प्राचीन सिक्के यौधय जाति के सिक्का के समानान्तर ही दिखाई देते ह । कदाचित इन्हें कुषाण वश के राजाओ न सिक्को के आधार पर ही बनाया गया इस कारण भी यह समानता दष्टिगोचर होती है ।[3] मानाक गुणाक वश्रवण अशुवर्मा जिष्णुगुप्त पशुपति की प्राचीन मुद्राय नपाल से हमें प्राप्त हुई है । इनमें मानाक या मानदेव के सिक्को पर एक ओर पद्मासना लक्ष्मी की मूर्त्ति है आर श्री भोगनी लिखा है और दूसरी ओर सिंह की मूर्त्ति है तथा मानाक लिखा है ।[4] गुणाक के सिक्का पर एक ओर पद्मासना लक्ष्मी की मूर्त्ति है और दूसरी ओर हाथी की मूर्ति है । लक्ष्मी की मूर्त्ति के बगल म श्री गुणाक लिखा है ।[5] गुणाक का नाम नपाल की राजवशावली में गुण कामदेव मिलता है ।[6]

इस प्रकार हम देखते ह कि भारतीय मुद्राआ पर लक्ष्मी के विविध रूप हमें प्राप्त होते ह । जैसे पद्महस्ता स्वरूप पद्मवासनी स्वरूप गज लक्ष्मी का स्वरूप इत्यादि । लक्ष्मी का चतुभुज रूप तो केवल ९वी शताब्दी से मिलन लगता है । सम्भवत यह रूप पीछ चलकर भारत मे अपनाया गया था भुजाआ की सख्या बढा कर दिखाने का कारण कदाचित् यह था कि इन्हे विष्णु की पत्नी के रूप मे लाग भजन लगे थे और वष्णवी के रूप में इनको चार भुजाआ वाली दिखान का आदेश विष्णु धर्मोत्तर पुराण मे मिलता है । या ऐसा विश्वास भी हो गया

---

१ वही — कटलाग – पृष्ठ २७२, २७३ – प्लेट २७ – १७ कल्हण की राजतरंगिणी ।

२ राखालदास बनर्जी — प्राचीन मुद्रा – पृष्ठ २२६ । इण्डियन म्याजियम कटलाग – खण्ड २, प्लेट १, संख्या १ ।

३ वही — प्राचीन मुद्रा – पृष्ठ २६५, क्वायन्स आफ मिडिवल इडिया – पृष्ठ ८६, सख्या १२ ।

४ विंसेण्ट स्मिथ — कटलॉग ऑफ क्वायन्स इन दी इंडियन म्युजियम, पृष्ठ २८३ ।

५ राखालदास बनर्जी — प्राचीन मुद्रा – पृष्ठ २६६ २६७, रापसन – क्वायन्स आफ एनशण्ट इण्डिया – पृष्ठ ११६, प्लेट १३, सख्या २ ।

६ हरप्रसाद शास्त्री — कटलाग ऑफ पाम लीफ एड सेलेक्टेड पेपर मानुस्क्रप्ट्स दरबार लाइब्रेरी, नेपाल – इण्ट्रोडक्शन बाई प्रो० सी० बेण्डाल – पृष्ठ २१ ।

था कि देवताओ की अधिक भुजाय उनके महान् शक्ति की द्योतक ह और मनुष्यो की मूर्त्ति से पथक करन के हेतु इनकी यह विशषता मूर्ति मे दिखाना आवश्यक है।

मोहरा पर लक्ष्मी की सवप्रथम मूर्त्ति ज। सिधु घाटी की सभ्यता के पश्चात प्राप्त हाती है वह है बसाढ़ से प्राप्त एक महर पर की कुपाणकालीन खडी मति ।[1] इस विग्रह म लक्ष्मी दाया हाथ उठाय हुए ह और बायें म कमलनाल पकड हुए ह तथा सामन की आर मु ह करक खडी ह। दक्षिण कर से मुद्रा गिर रही है। इनके कान के कुण्डल तथा गल का तौर स्पष्ट दिखाई देत ह। ऊपर के अग म ब्लाउज की भाति की कुर्ती है और नीचे के अग में धाती है। इनके दाना आर कमल के फूल दिखाय गय ह। पर के नीचे लख है जा स्पष्ट न होने के कारण पढा नही जाता। कदाचित यह लख खराष्टी म है। इसी प्रकार की एक मोहर पुरक्षजभस्य है[2] (फलक २९ क)। इसमें भी लक्ष्मी मुद्राएँ अपन दक्षिण कर से गिरा रही ह। एक और मोहर पर भी लक्ष्मी की खडी मूर्त्ति है जिसमें बाय हाथ म नाल सहित कमल का पुष्प है।[3] यह भी बसाढ से प्राप्त हुई है। एक और लक्ष्मी की मूर्त्ति बसाढ से प्राप्त एक आर माहर पर दिखाई देती है। इसम लक्ष्मी का एक नाव पर खडा दिखाया गया है। इस नाव मे दोना आर दा दा खम्ब दिखाई देत ह जो कदाचित मस्तूल के प्रतीक ह बीच में एक पाये दार चौकी है, उस पर देवी एक हाथ म कमल लिय हुए और दूसरा कटि पर रख खडी ह। य नीचे के अग में धोती पहिन हुए ह। बाया ओर एक शख है उसके पश्चात कदाचित गरुड है[4]। दूसरी ओर कुछ और नही अकित है (फलक २ग)। गुप्तकाल के पहिल से ही भारतीयो की यह धारणा थी कि व्यापारे वसते लक्ष्मी और उस काल म और उसके बहुत पूव से भी भारतीय व्यापारी दूर दूर तक समद्र यात्रा करते थ जिसके प्रमाण मिल चुके ह[5]। इस कारण लक्ष्मी को नाव पर समुद्र माग से लान की कल्पना कुछ अद्भुत नही रही हागी[6]। इसी के पास इसी गहराई से एक मोहर हस्ति देव की प्राप्त हुई है, जिस पर लिखा हुआ लख कुषाणकालीन है। यह मोहर लक्ष्मी वाली मोहर का भी कुषाणकालीन होन का सकेत करती है। या कुछ विद्वाना न इसे गुप्तकालीन माना है।

गजलक्ष्मी की मर्ति अकित मोहरें गुप्तकाल के स्तरो से कई प्राचीन स्थानो से खादाई मे प्राप्त हुई ह। मुजफ्फरपुर के बसाढ (वशाली) से १९०३ ०४ की खादई म इस प्रकार की सौ से ऊपर मोहरे प्राप्त हुई ह। इस खोदाई में बसाढ की एक मोहर पर एक खडी लक्ष्मी की मूर्ति भी प्राप्त हुई है। यहाँ गज नही दिखाय गय ह।[8] इसमें भी ये सामने मुख किये हुए कमला के बीच खडी ह, इनका बाया हाथ कमर पर है और दाहिना हाथ दान

---

१ डी० बी० स्पूनर — एक्सकवेशन्स एट बसाढ़ – ए० एस० आई० आर०, १९१३ १४ प्लेट ४७ सख्या ३१२ तथा प्लेट ४८ सख्या ४४२।

२ उपयुक्त — प्लेट ४९ सख्या ६०३।

३ उपर्युक्त — प्लेट ५० सख्या ७७९।

४ उपयुक्त — पष्ठ १३०, पर कहते ह कि कदाचित यह वृषभ या पख सहित सिंह है।
कोवेल जातक ख ३, पृ० १२६ १२७।

५ बावेरू जातक, सुप्पारक जातक न० । कोवेल – जातक ख ४, पृ० १३० १४२।

६ उपर्युक्त — प्लेट ४६ सख्या ९३।

७ उपयुक्त — पष्ठ १३० सख्या ९४, दोनो ही १५।। फुट की निचाई के आसपास प्राप्त हुई ह।

८ टी० ब्लाच – एक्सकवेशन्स एट बसाढ़ – आर्केआलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया रिपोट १९०३ ०४ – प्लेट ४२, सख्या ५६।

मुद्रा म। इनमें एक प्रकार की मोहरो पर लक्ष्मी का पेडो के बीच खडा दिखाया गया है। इनके दोनो ओर दो हाथी इन्हें घटो से स्नान करा रहे ह तथा इनके दोना ओर दो खड यक्ष घट में से मुद्रा गिराते हुए दिखाय गये ह। लक्ष्मी सम भाव से खडी ह इनके बाये हाथ म नाल सहित कमल का फूल है। कानो के कुण्डल गल की एकावली कमर की करधनी तथा परो के कड स्पष्ट दिखाई देते ह। कध पर उत्तरीय है जो हाथो पर से होता हुआ नीचे लटक रहा है। शरीर के अधोभाग म धाती है। ऊपर के अग म चोली दिखाई देती है। लक्ष्मी के पर के नीचे एक रेखा खिंची हुई है उसके नीचे कुमारामात्याधिकरणस्य लिखा हुआ है।[1] इसी प्रकार की एक और मुहर पर कुमारामात्याधिकरणस्य के साथ श्रष्ठी साथवाह कुलिक निगम[2] लिखा है। दूसरे प्रकार की मोहरो पर केवल गजलक्ष्मी की मूर्त्ति बनी है उसम यक्ष नही दिखाय गय ह। इसम लक्ष्मी के दोनो ओर कमल के फून और कलियाँ ह। लक्ष्मी का बाया हाथ कमर पर है और उसी म नाल सहित कमल है। इसके नीचे युवराजभादीय कुमारामात्याधिकणस्य[3] लिखा है। (फलक २९ ख) इसी प्रकार की एक और मुहर पर श्री पर (मभट्टारक) पादीय कुमारामात्याधिकरणस्य लिखा है (फलक २९ ग)। एक दूसरी प्रकार की मोहरो में खडी गजलक्ष्मी की मूर्त्ति के साथ बठ हुए यक्ष दिखाय गय ह। इसम लक्ष्मी का बाया हाथ उठा हुआ है और उसमें छ पखडियो वाला कमल है दक्षिण कर दान मद्रा मे है। लक्ष्मी के मस्तक पर मकुट है कानो म कुण्डल है कटि में करधनी है। नीचे की धोती स्पष्ट है ऊपर के वस्त्रा का पता नही लगता। इसमें गज स्पष्ट रूप से कमल के फूलो पर खड दिखाये गय ह। यक्षो के समक्ष चौकी पर पात्र रख ह जिनमें से गोल सिक्के नीचे गिर रहे ह। नीचे 'श्री युवराज भट्टारक पादीय कुमारामात्याधिकणस्य' लिखा है।[4] यक्षो का बायाँ हाथ उठा हुआ है दक्षिण जघ पर स्थित है आधी पल्थी लगाए ह एक पर उठा है इनके मस्तक पर जटाजूट है (फलक २९ य)। एक ओर गजलक्ष्मी अकित मोहर पर श्रीरणभाडागार अधिकणस्य लिखा है।[5] इसमें यक्ष खड ह और एक हाथ म पात्र को पकड कर दूसरे से मुद्रायें गिरा रहे ह (फलक २९ ङ तथा फलक ८ क)। दूसरी इसी प्रकार यक्षो सहित लक्ष्मी की मूर्ति एक ओर मोहर पर अकित है इसमें लक्ष्मी का दोना हाथ नीचे की ओर है तथा बाय म कमल का फूल है। यक्ष पीछ की ओर झुके हुए खड ह। इनका एक पर आग और एक पीछ है (फलक २९ च)। इस मोहर पर 'तीरभक्तौविनयस्थितिस्थाप (का) धिकण (स्य)।[6] इसी प्रकार की एक दूसरी मोहर भी यही से मिली है जिस पर लक्ष्मी के हाथ में आठ पखडियो वाला कमल है। इस पर तीरभुत्तय उपरिकाधिकरणस्य लिखा है। एक ओर मोहर पर लक्ष्मी की मूर्ति मिलती है जिसमें युवराज पादीय कुमारामात्याधिकरणस्य लिखा है। इसमें लक्ष्मी के दक्षिण कर में कमल है और वे एक चौकी पर स्थित ह। इनके दोनो ओर के हाथी नही दिखाई देते (फलक २९ छ)। यक्ष अवश्य घट से रुपय गिरा रहे ह।[8] सन

---

१ एक्सकवेशस एट बसाढ़—आर्कआलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया आनुवल रिपोट १००३-०४, पृष्ठ १०७।

२ वही——उपयुक्त—प्लेट पष्ठ १०७ (५)।

३ वही——उपक्युत—प्लेट ४० सख्या १०।

४ वही——उपर्युक्त—प्लेट पृष्ठ १०८ (८)।

५ एक्सकवेशस एट बसाढ——प्लेट ४० सख्या ११, पष्ठ १०७।

६ वही——प्लेट ४० सख्या ७।

७ वही——प्लेट ४० सख्या १३।

८ वही——प्लेट ४० सख्या ४।

सन १९१३ १४ की खोदाई म श्री स्पूनर को बसाढ स एक गजलक्ष्मी की अकित मुहर प्राप्त हुई थी, उसमें लक्ष्मी समपाद भाव म सामन मुख करके एक चौकी पर खडी दिखाई गयी ह। अपन बाँय हाथ मे य पुष्प सहित एक कमल नाल पकड ह पर तु इनके दाहिन हाथ म कुछ नही है। दा गज इन्हे स्नान करा रहे ह। इनके मस्तक पर ललाटिका है कानो म कुण्डल गल म स्तनमित्र हार बाहू पर केयूर तथा कटि में करधनी है। ऊपर के अग में उत्तरीय तथा नीचे के अग में धाती है। इनके बाई ओर शख[1] नही है। यह कल्पवक्ष ज्ञात होता है और दाहिनी ओर पूण घट है[2] नीचे वशाली नामकुण्ड कुमारामात्याधिकरण(स्य) लिखा है।

इलाहाबाद के भीटा से जिसका प्राचीन नाम विच्छी या विच्छीग्राम था सर जान माशल का कई मोहरें एसी प्राप्त हुई ह जिन पर गजलक्ष्मी की मूर्ति अकित है। इनम एक माहर पर जो गजलक्ष्मी बनी है। वे अपना मस्तक दाहिनी ओर झुकाय हुए दाहिना पर आग और बाया पीछ किय हुए खडी ह। कमल के फूल और कलियाँ, इनके दोना ओर बनी ह। हाथी कमल पर स्थित इन्ह स्नान करा रहे ह। इनका बायाँ हाथ एक पक्षी के मस्तक पर है। दक्षिण कर उठा हुआ अभय मुद्रा म है। काना के कर्णाभरण गल का स्तनमित्र हार बाहू के केयूर, कटि की मेखला पैरो के नूपुर स्पष्ट दिखाई देते ह। इसी प्रकार उत्तरीय तथा दोनो परा से लिपटी हुई धोती भी बडी सुन्दरता से अकित की गयी है। इनकी बाई ओर गरुड अकित ह (फलक २९ ज)। नीचे की पक्ति मे 'महाश्वपति – महादण्डनायकविष्णुरक्षितपदानुगृहीतकुमारामात्याधिकरणस्य अकित है। इस मोहर का व्यास १½ इच का है।[3]

भीटा से प्राप्त एक दूसरी मोहर पर भी गजलक्ष्मी की मूर्ति अकित है। इसमें देवी कमल के फूल पर समपद भाव में खडी ह। इनके दक्षिण कर मे कमल है और बाये से य मुद्रायें गिरा रही ह। इनके दोनो ओर दो यक्ष हाथ जोडे उकडू कमल पर बठ ह। गज गोल घड से लक्ष्मी को स्नान करा रहे ह। इस मोहर पर भी गज लक्ष्मी की मूर्ति कुछ बसाढ की उन मोहरो पर की लक्ष्मी से मिलती हुई है जिनमें यक्ष इनके दोनो ओर दिखाये गय है। अन्तर केवल इतना है कि यहा यक्ष कमल पर उकडू बठे ह और लक्ष्मी भी कमल पर स्थित ह। बसाढ की माहरो पर यक्ष कमल पर स्थित नही दिखाय गय ह। नीचे की पक्ति म (कु) भागमात्याधिकरणस्य' लिखा है। लक्ष्मी पूववत् वस्त्राभूषणो से सुशोभित ह (फलक २९ झ)। एसा ज्ञात होता है कि इस मूर्ति को किसी मन्दिर में स्थित दिखाया गया है।[4] एक और मूर्ति पर गजलक्ष्मी अकित ह पर तु उसमें यक्ष नही दिखाये गय ह। लक्ष्मी कमल पर सामन मुख करके खडी ह और कमल उसी स्थान पर निकल रहे ह। इनके दोनो हाथ कोहनी पर से उठ हुए ह। दक्षिण कर म शख तथा बाँयें में गरुड दिखायी देता है। इनके मस्तक पर मुकुट और कानो मे कुण्डल स्पष्ट दिखाई देते ह। नीचे का वस्त्र घटनो तक ही दिखाया गया है। (फलक २९ ञ) नीचे की पक्ति में सामाहसविशयाधिकरणस्य लिखा है।[5] तेरसे जो महाराष्ट्र का एक नगर था एक गुप्तकाल की मोहर प्राप्त हुई है जिस पर एक गजलक्ष्मी की खडी मूर्ति दिखाई देती है।[6]

---

१ डॉ० स्पूनर — एक्सकवेशन्स एट बसाढ – ए० एस० आर० १९१३ १४, पृष्ठ १३४ सख्या २००।
२ उपयुक्त — प्लेट ४७ सख्या २००।
३ सर जान माशल — एक्सकवेशन्स एट भीटा – ए० एस० आर० – १९१२ १२ पष्ठ ५२, प्लेट १० सख्या ३२।
४ एक्सकवेशन्स एट भीटा – प्लेट १९ सख्या ३५।
५ वही — प्लेट १९, सख्या ४२, पृष्ठ ५४।
६ वही — प्लेट १९, सख्या १३।

अहिच्छत्र से भी एक एसी ही माहर प्राप्त हुइ है जिस पर गजलक्ष्मी की मूर्त्ति है। यहाँ इनके दोनो हाथ नीचे की ओर दिखाय गय ह। बाय हाथ म कमल का पुष्प है आर दाहिन से मुद्राए गिरा रही ह। इनके दोना ओर दो हाथी इन्ह अभिषक कर रहे ह। दाना आर दा यक्ष टढ खड ह जसे य हम बसाढ की एक माहर पर दिखाई देते ह।[1] अन्तर इन दोना म इतना है कि यहा य दाना हाथ मम्तक के ऊपर ल जाकर नमस्कार कर रहे ह और वहाँ य घट का सरक्षण कर रह ह। लक्ष्मी जिस कमल पर स्थित है उसके भी दाना ओर कमल बन ह। देवी का वस्त्राभूषण पूववत ही दिखाया गया है (फलक २६ त)।

इसी प्रकार की एक गजलक्ष्मी की अकित मोहर नालदा से भी मिली है।[2] इस पर दो गज जा कमल पुष्पो पर दिखाय गय ह उनक हाथ मनुष्या जस प्रतीत हाते ह। लक्ष्मी के दाना आर दो घट ह। बाय हाथ से देवी एक कमल के पुष्प की नाल पकड हैं और इनका दाहिना हाथ घट के ऊपर दिखाया गया है। देवी के मस्तक के चारो ओर प्रभा मण्डल है। गल म एक तौक दिखाई देता है तथा मस्तक के ऊपर एक जूडा दिखाई देता है। कटि में इनके करधनी का आभास मिलता है परन्तु और वस्त्राभूषण स्पष्ट नहीं ह। नीचे के लेख से यह उत्तर गुप्त काल की मोहर प्रतीत होती है (फलक २६ थ)। इसी के आसपास के काल की एक मोहर पूर्वी बगाल की रियासत टिपरा में मिली थी।[3] यह माहर एक ताम्रपत्र के साथ लगी थी। ताम्रपत्र प्राय नवी या दसवी शतादी की लिखावट म है, परतु यह मुहर उससे कुछ ही पहिल की है। इस पर भी कुमारा मात्याधिकणस्य लिखा है। परन्तु इसकी लिपि मे और बसाढ की मोहरो की लिपि मे अन्तर है। इसमें लक्ष्मी कमल पर खडी है। इनके हाथ में बिल्वफल है दाहिना हाथ दान मुद्रा म है। दानो ओर कमल के फूल और कमल की कलियाँ ह। इनके मस्तक पर मुकुट कानो म कुण्डल, गल मे चूहादन्ती हार मणिबधा पर वलय तथा कटि म करधनी है। दाना ओर दो उपासक मुकुट कुण्डल और हँसली पहिन बैठ ह। इनके हाथा में पात्र है जिसमें से कुछ मुद्राय स्वयम् बाहर निकल रही ह (फलक २६ द)।

इन मोहरो के अध्ययन से हम इस निष्कष पर पहुँचते ह कि कुषाण काल से ही आर्यो म लक्ष्मी की पूजा राज्यलक्ष्मी के रूप मे होन लगी थी। मोहरो पर इनका पहिल पद्महस्ता स्वरूप अकित होता था तथा पीछ चलकर गज अभिषक स्वरूप अकित होन लगा।

(क) फाल्गुनी मित्र
(ख) पण्टालियोन
(ग) अगथाक्लीज
(घ) अजज
(ङ) अजिलिसेज
(च) अमोघभूति
(छ) अमोघभूति
(ज) राजन्य

---

१ हैण्ड बुक टू दी सेटेनरी एक्जिबिशन – आर्के आर्केआलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया – दिसम्बर १९६१, प्लेट १४, सख्या ६।

२ उपयुक्त — प्लेट १४ सख्या २।

३ टी० ब्लाच – आर्केआलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया – एनुअल रिपोट – १९०३ ०४, पृष्ठ १२१, फिगर १६।

(झ) सोगस
(ञ) ब्रह्मण्यदेव
(ट) यौधय
(ठ) यज्ञ श्री
(ड) चन्द्रगुप्त प्रथम
(ढ) समुद्रगुप्त पराक्रम
(ण) वीणा
(त) काचा
(थ) चन्द्रगुप्त द्वितीय सिंहासनारूढ़
(द) „ धनुषधारी
(ध) „ , ,
(न) , „ छत्रप
(प) सिंह वध
(फ) अश्वारोही
(ब) चक्र विक्रम
(भ) कुमारगुप्त अश्वारोही
(म) , सिंह वध
(य) प्रताप
(र) गजारोही
(ल) स्कन्ध गुप्त धनुषधारी
(व) , राजा रानी
(श) ससाक – वषभ पर स्थित
(ष) पीछे के काल के गुप्त राजा
(ह) गागय देव
(अ) वीर वम देव
(आ) पार्थ
(इ) क्षमेन्द्र गुप्त
(ई) सग्राम
(उ) जागदेव
(ऊ) मोहम्मद बिन साम

भारतीय अभिलेखों में लक्ष्मी

भारतीय अभिलेख जो मोहनजोदडो इत्यादि सिन्धु घाटी की सभ्यता के प्राचीन स्थाना से प्राप्त हुए हैं, वे अभी तक समुचित रूप से पढ़ नही गय, न उनका पढन की काई कुजी प्राप्त हुई है जसी मिश्र के अभिलखो को पढन की मिल गयी है। इस कारण यह कहना कठिन है कि उनम लक्ष्मी शब्द है या नही।

अशोक के लख जो पढ गये ह उनम लक्ष्मी शब्द का अभाव ही है। मौय काल के (ईसा पूव तीसरी शताब्दी) महास्थान (बगाल) के एक लख मे पाषाण क एक टुकड पर अकित सुलखिते (सुलक्ष्मीत) शब्द प्राप्त होता है। इसका अथ यहाँ ऋद्धिमत ' करना समीचीन ज्ञात होता है। इस प्रकार इस काल तक तो एसा ज्ञात होता है कि यह शब्द किसी देवी का द्योतक नही था। सोह गोरा के ताम्र पत्र के लख म सि [f] ल माते अथवा श्रीमते (या श्रीमान)[१] शब्द मिलता है, जो धनवान का द्योतक ज्ञात होता है। कुषाण काल में कुछ स्त्रियो के एसे नाम मिलते ह जिनसे यह ज्ञात होता है कि श्री शब्द का अथ समृद्धि के रूप म प्रयोग होन लगा था जसे—धान्य श्री[२] (धान्य की देवी) यह लख प्राय १२६ ईसवी का माना जाता है। पश्चिम भारत के नाना घाट के शातकर्णी प्रथम के अभिलेखो म श्री शब्द नाम के साथ प्रयुक्त होन लगा था। एक कुमार का नाम भी यहा शक्तिश्री मिलता है तथा यही के दूसरे लेख म एक दूसरे कुमार का नाम स्कन्धश्रिय मिलता है।[३] नासिकवाली विजय प्रशस्ति में श्री शातकर्णी को श्री अधिष्ठान कहा है। सिरियअधिठानस तथा कुल विपुलसिरिकास भी कहा है। इनकी माता का नाम बाल श्री मिलता है[४]। लक्ष्मी शब्द हाथी गुम्फा की गुफा के लेख मे मिलता है[५]। यह शब्द जठर लक्ष्मील गोपुरणि सम्बन्ध म मिलता है (यह लेख ईसा पूव पहिली शताब्दी का माना जाता है)। यहा एसा ज्ञात होता है कि लक्ष्मी गोपुर में बनी हुई थी। नागाजुन कोण्ड के लखो में विविध स्त्रियों के नाम प्राप्त होते ह। उनमें हर्म्य श्री (खिडकी की शोभा) वप्पी श्री (वापी की शोभा) स्कन्ध श्री इत्यादि नाम प्राप्त होते ह[८]। य लख प्राय ईसवी तीसरी शताब्दी के ह। यहाँ श्री पवत का नाम भी मिलता है, जो पुराणो की सामग्री के साथ वणन होगा।[९]

---

१ दिनश चन्द्र सरकार — सेलेक्ट इन्सक्रिपशन्स बेअरिग आन इण्डियन हिस्ट्री एण्ड सिविलिजेशन, युनिवर्सिटी ऑफ कालकाटा – १९४२, पृष्ठ ८३।

२ वही — उपर्युक्त – पृष्ठ ८६।

३ वही — उपर्युक्त – पृष्ठ १५१–१५२।

४ वही — उपर्युक्त – पृष्ठ १८५।

५ वही — उपर्युक्त – पष्ठ १८९।

६ श्री कृष्ण दत्त वाजपेयी – गौतमी पुत्र श्री शातकर्णी की विजय प्रशस्ति नागरी प्रचारिणी पत्रिका विक्रमाक वशाख – माघ-पष्ठ १३४–१३६।

७ सरकार — उपर्युक्त – पृष्ठ २०९, २१२।

८ जसे मुगल काल में नूर महल, नूरेजहाँ इत्यादि मिलते ह।

९ सरकार — उपयुक्त – पृष्ठ २१९–२२५।

गुप्त कालीन लेखो में श्री और लक्ष्मी श द स्थान स्थान पर प्राप्त होते ह जसे—रुद्र दमन प्रथम के जूनागढ के अभिलख में राज लक्ष्मी के रूप में[१] अथवा शोभा के अथ म तथा च द्र राजा के महरौली लौह् स्तूप के लख म[२] इत्यादि। स्कन्द गुप्त के लखो म लक्ष्मी का विशिष्ट रूप प्राप्त होता है। जूनागढ के लेख में (४५७ ४५८ ई०) स्कन्दगुप्त को 'श्रियम् अभिभृतभोग्याम् (जिसन लक्ष्मी का पूण भोग किया है)[३] कहा है तथा पृथु श्री' भी कहा है। यहाँ लक्ष्मी के ध्यान का वणन तथा उनका विष्णु से सम्बन्ध भी प्राप्त होता है –

कमल निलयनाय शाश्वत धाम लक्ष्म्य
स जयति विजितार्तिर्विष्णुरत्य तजिष्णु ।
तदनु जयति शश्वत परिक्षिप्तवक्षा,
स्वभुजजनित वीर्यो राजाधिराज ।[४]

लक्ष्मी श द यहा सम्पत्ति के अथ म भी प्रयुक्त हुआ है, 'यपेत्य स र्वान मनुजे द्रपुत्रान ल्लक्ष्मी स्वयम् य वरयाचकार। भिनरी के अभिलख म कुल लक्ष्मी मिलती है (विचलित कुल लक्ष्मी स्तम्भनायोद्यतेन) तथा वश लक्ष्मी भी।[५] सागर के ईरान के प्रस्तर खम्भ पर उत्कीण बुद्ध गुप्त के (ई० ४८४) श्री श द काति के अथ म और लक्ष्मी श द राज्यलक्ष्मी के अथ में प्रयुक्त हुए ह। लक्ष्मी से समुद्र के सम्ब ध का भी सकेत किया गया है (स्वयभवरयव राजलक्ष्म्याधिगतन चतु समुद्रपयन्तप्रथितयशसा)[६] श्रीवत्स चिह्न विष्णु के वक्ष स्थल पर अकित है, यह धारणा हम मानदेव के छागु नारायण के प्रस्तर स्तम्भ के लख मे मिलती है (ई० ४६४) (श्री वत्साकित दीप्त चारु विपुल प्रोद – वक्षस्थल)[७]। इसी लख मे मानदेव की स्त्री को श्री की भाँति कहा है (श्रीरेवानुगता)। मध्य प्रदेश के सागर स्थित ईरान के तोरमाण के लख में भी बुद्ध गुप्त के लख की भाति स्वयम् वरयव राजलक्ष्म्याधिगतस्य चतु समुद्र पय त प्रथित यशस ' श द प्राप्त होते ह।[८]

श्री मिहिर कुल के ग्वालियर के प्रस्तर लख में[९] श्री को वहाँ के गिरि पर स्थित कहा है –

यावन्नोरसि नीलनीरवनिभे विष्णुर्बिभत्युज्ज्वलाम।
श्रीमस्तावद्गिरि – मूर्ध्नि तिष्ठति शिला प्रासाद मुरयोरमे ।।[९]

पूना के प्रभावती गुप्ता के ताम्र पत्र,के अभिलख में जो पाचवी शताब्दी का है 'नृपश्रिय ' श द प्राप्त होते ह। यह भी लेख पाचवी शता दी का है।[१] इसी प्रकार नपश्रिय शब्द प्रवरसेन प्रभावती गुप्त के पुत्र के इलीचपुर के लेख में भी मिलते ह।[११]

---

१ वही — उपयक्त पृष्ठ – १७०।
२ जयच द्र विद्यालकार — उत्कीण लेखाजली – २०, पष्ठ २८।
३ दिनेशचन्द्र सरकार — उपर्युक्त – पृष्ठ ३००।
४ वही — उपयुक्त, – पृष्ठ ३०१।
५ वही — उपर्युक्त, – पष्ठ ३१४।
६ वही — उपयुक्त, – पृष्ठ ३२७।
७ वही — उपर्युक्त – पृष्ठ ३६७।
८ वही — उपयुक्त, – पष्ठ ३६७।
९ वही — उपर्युक्त, – पृष्ठ ४०२।
१० वही — उपयुक्त, – पृष्ठ ४११।
११ वही — उपयुक्त, – पृष्ठ ४१८।

अजन्ता के हरिषेण के लेख में हमें निर्जित्य श्री मिलता है जिसका अर्थ है कि उस राजा की राज्यश्री कभी जीती नहीं गयी थी।[1] इसी लेख में हमें विष्णु का नाम श्रीपति भी मिलता है, श्रीपतिना शरा निकुंज।[1] यह लेख ईसा पश्चात् चतुर्थ शताब्दी का है। ताल गुण्डा के प्रस्तर स्तम्भ के श्री शान्ति वर्मा के लेख में श्री पर्वत का विवरण प्राप्त होता है।[2] इस लेख में पृथु श्री तथा लक्ष्मी शब्द सुन्दरता के अर्थ में मिलते हैं — लक्ष्म्यङ्गना धृतिमति।[3] यह लेख प्राय ईसा पश्चात पांचवीं शताब्दी का है। दिल्ली के कोटला फिरोज शाह के बीसलदेव के लेख में समुद्र से उत्पन्न लक्ष्मी का विवरण मिलता है। यह लेख प्राय ईसा पश्चात १२२० का है।[4] यह विवरण पुराणों के विवरण से बहुत कुछ मिलता है।

इस प्रकार लक्ष्मी का स्वरूप, जो अभिलेख में मिलता है, वह यहाँ दिया गया है। यह रूप पुराणों से बहुत भिन्न नहीं है और प्राय उन्हीं पर आधारित प्रतीत होता है।

---

१ वही — उपर्युक्त — पृष्ठ ४२७।

२ वही — उपर्युक्त — पृष्ठ ४३०।

३ वही — उपर्युक्त — पृष्ठ ४५२ — यह नलमल्लूर पहाड़ियों की शृंखला में है।

४ जयचन्द्र विद्यालंकार — उत्कीर्ण लेखांजलि २, पृष्ठ ५८।

६

कतिपय तन्त्र-ग्रन्थो में देवी लक्ष्मी का स्वरूप

अनादि काल से मनुष्य की यह प्रवत्ति रही है कि शीघ्रातिशीघ्र उसका मनवाछित फल प्राप्त हो जाय। इसी इच्छा के फलस्वरूप विविध देशों म जादू टोना इत्यादि का आविष्कार हुआ। भारत म आज भी सत्तर फी सदी ऐसे लोग है जि ह इस प्रकार की क्रियाओ म विश्वास है। उन लोगो की सख्या बहुत थोडी है जो किसी न-किसी रूप म चमत्कार से न प्रभावित होते हो। बाहर के देशो म भी इस प्रकार की धारणाए ह चाहे उनका परिष्कृत रूप ही हमारे सामने आता हो। तावीज और गण्ड आज भी योरप मे दिय जाते ह तथा स्वग में सीधे जाने के परवाने आज भी शव के साथ दफनाये जाते ह। ऐसा अनुमान होता है कि भारत म आदिवासियो म इस प्रकार के जादू-टोने का विशेष रूप से प्रचार था। आय जब यहाँ के आदिवासियो के सम्पर्क म आये, तो उन्हे यहा के देवी देवताओ को अपनाना पडा और उनकी पूजा पद्धति का अपने धम म समन्वय करना पडा, जिसका स्वरूप हम अथववेद मे दिखाई देता है। फिर भी आर्यों ने इस प्रकार के तन्त्र इत्यादि को विशेष महत्त्व नही प्रदान किया। अनार्यों के पुरोहित जो झाड फूक इत्यादि करते थे वे अपना कार्य करते ही रहे। बौद्ध धम, जो ज्ञानमूलक था और जैन धम, जो त्यागमूलक था इन्हें भी बाध्य होकर इस जादू टोने को अपनाना ही पडा। बौद्ध धम में तो तन्त्र का इतना प्रचार बढा कि वज्रयान इत्यादि धम की अलग अलग शाखाएँ ही बन गयी। हिन्दुओ ने जब इस जादू टोने का सस्कार किया, तो उसे अपने उपनिषदो की विचारधारा से मिला कर एक स्वतन्त्र रूप दे दिया और इन ग्रथो को आगम का नाम दिया।

इसका स्वरूप इस प्रकार खडा किया गया कि शिव ने द्रवीभूत होकर मनुष्यो के कल्याण के निमित्त कुछ उपदेश दिये जो यामल, डामर, शिव सूत्र तथा तन्त्रो मे सग्रहीत किये गये। तन्त्र विशेष रूप से देवता तथा शक्ति के सवाद के रूप म पाये जाते ह।[१] गायत्री तन्त्र में ऐसी कथा मिलती है कि सवप्रथम देव योनि को गणेश ने कैलाश पर तन्त्र का उपदेश किया।[२] महानिर्वाण तन्त्र के अनुसार पार्वती के प्रश्न पर सवप्रथम शिव ने तन्त्र का उपदेश किया। शिव भारत के आदिवासियो के देवता थे[३], जिनका आदि रूप हमे मोहनजुदाडो की मुहरो पर प्राप्त होता है।[४] इनका सम्बन्ध आर्यों के देवता रुद्र से बहुत बाद म हुआ, क्योंकि ऋग्वेद में तो शिश्न पूजकों को आर्यों के अग्नि देवता से दूर ही रखने को कहा गया है।[५] गणेश का अलग एक पथ था जैसा मलिन्द पन्ह को देखने से ज्ञात होता है।[६] ये भी पहिले यक्ष के रूप मे पूजित होते थे और जापान में जहाँ इनकी अब भी पूजा होती है, इनको मदिरा भोग लगाई जाती है।[७] इससे ऐसा अनुमान होता है कि गणेश को गणपति

---

१ सर जॉन उडरफ — इन्ट्रोडक्शन टू तन्त्रशास्त्र, पष्ठ २, ३।

२ गायत्री तन्त्र — अध्याय १०।

३ ड ला वाले पसा — इण्डो योरोपियाँ ए इण्डो आरिया, ल आण्ड जुस्क वेर ऱ्वा सा अवी जीजू क्री (पारी १९२४) पष्ठ ३०४, ३१५, ३१६, ३२० इत्यादि।

४ मार्के — फरदर एक्सकवेशस एट मोहनजोदाडो — प्लेट १००, न० एक।

५ कुमार स्वामी — यक्षाज — ख० १, पृष्ठ ३।

६ वही — यक्षाज — ख० २, प० ११ अणज मलिन्द पन्ह — १९१।

७ वही — यक्षाज — ख० २, पृ० ४।

के रूप में परिवर्तित करन की क्रिया बाद म हुई । तन्त्र के यामल डामर नाम भी तो यही बताते ह कि यह अनार्यों की विद्या है ।

शिव का निवास त त्र म सहस्रदल कमल पर कहा गया है[1] । पद्म भारत के आदिवासियों का चिह्न रहा है और यह हड पा तथा मोहनजुदाडो म विविध रूपो म प्राप्त होता है ।[2] इससे शिव का सम्बन्ध यदि हम बाद के ग्रथो मे प्रा त होता है तो यह प्राचीन विचारधारा की ओर सकेत करता है जो किसी न किसी रूप म इस उवरा भूमि में जीवित चली आयी ।

आर्यों द्वारा त त्र को अपनाय जाने का फल यह हुआ कि उपनिषदों के एक ब्रह्म द्वितीय नास्ति के सिद्धान्त को त त्र म भी स्थान दिया गया और ब्रह्म का परम निर्वाण शक्ति कहा गया । (यह नाम बौद्धो से सम्बन्धित ज्ञात होता है) । इस शक्ति की इच्छा हुई – 'अहम बहुस्याम प्रजायय । इसी से नाद की उत्पत्ति हुई और नाद से बिन्दु की । कही कही यह भी कहा गया है कि शिव तथा शक्ति का सगम पराङ्ग बिन्दु है । यह बिन्दु एक वत्त द्वारा व्यक्त किया जाता है जिसके बीच म ब्रह्म पाद है, जो प्रकृति-पुरुष का द्योतक है । इस वत्त की बाहरी रेखा को माया कहा है— मायावन्धनाच्छादितप्रकृतिपुरुषपराङ्गबिन्दु ।' इसे शब्द ब्रह्म भी कहा है ।[3] शब्द ब्रह्म द्वारा ज्ञान शक्ति इच्छा शक्ति और क्रिया शक्ति का प्रादुर्भाव होता है जो तामस सत्व तथा राजस गुणो की द्योतक हैं । यही देवी का स्वरूप है । देवी को इच्छा शक्ति ज्ञान शक्ति तथा क्रिया शक्ति स्वरूपिणी कहा है ।[4] जब यन्त्रो का निर्माण इस आधार पर होता है उस समय बीच का बिन्दु पुरुष का द्योतक तथा त्रिकोण देवी का तथा त्रिकोण के चारो ओर का वत्त माया का द्योतक होता है । शब्द ब्रह्म से शक्ति की उत्पत्ति होती है, इस कारण चक्र में अक्षर भी लिख जाते ह (जसे श्री चक्र में फलक २१) । यदि उपनिषदो की विचारधारा के आवरण को हटा कर देखा जाय, तो यह लिंग तथा योनि की उपासना ही का परिष्कृत स्वरूप प्रतीत होगा ।

कुब्जिका तन्त्र में ब्रह्मा, विष्ण तथा रुद्र को कर्ता नही माना है (जो पुरुषप्रधान आय धम के बिलकुल विपरीत है) । इनके स्थान पर ब्राह्मी वष्णवी तथा रुद्राणी को सृष्टिकर्ता पालनकर्ता तथा सहारकर्ता माना है । ब्रह्मा, विष्णु और शिव को इनकी शक्तियो के सामन शव के समान माना है ।[5]

देवी के तीन रूप कहे गय ह एक परा दूसरा सूक्ष्म तथा तीसरा स्थूल । विष्णु यामल के अनुसार परा रूप को कोई नही जानता[6]— मातस्तावत पर रूप तन्न जानाति कश्चन । सूक्ष्म स्वरूप मन्त्र है परन्तु इन निर्विकार स्वरूप पर मन स्थिर नही हो सकता इस कारण इनके स्थूल स्वरूप का निमाण होता है । देवी का स्वरूप माता के रूप में प्रादुर्भूत होता है । यह सब यन्त्र तथा तन्त्र की देवी ह इन्ह ललिता सहस्र नाम म सव-

---

१ भास्कर राय ने ललिता सहस्र नाम की टीका में त्रिपुरासार का हवाला देते हुए यह विवेचन किया है – श्लोक १७ ।

२ वत्स — एक्सकवेशन्स एट हडप्पा प्लेट १३९ ७, मार्के – फरदर एक्सकवेशन्स इत्यादि प्लेट १०६–३४ ।

३ शारदा तिलक — अध्याय १ ।

४ माया का रूप देवी पुराण के चौदहवें अध्याय में इसी भाँति दिया है ।

५ कुब्जिका तन्त्र — अध्याय १, कपूरादि स्तोत्रम् – प्रकाशक अरबर अविलोन, १९२२, पृष्ठ १९, श्लोक १२ ।

६ उद्धरण — इण्ट्रोडक्शन टू तन्त्र शास्त्र, पृष्ठ १४ ।

तन्त्र रूपा सर्व यन्त्रात्मिका' कहा है।[1] इनका स्वरूप एक परम सुन्दर स्त्री के रूप में कल्पित किया जाता है। इनको 'कृशोदरी पीनोन्नतपयोधराम् नितम्बजितभूधराम्' इत्यादि कहा है। शाक्तानन्द तरंगिणी के अनुसार महादेवी के अनेक रूप हैं जैसे सरस्वती, लक्ष्मी गायत्री, दुर्गा त्रिपुरा, सुन्दरी, अन्नपूर्णा इत्यादि। इस प्रकार लक्ष्मी महादेवी एक विशिष्ट शक्ति के रूप में हमें यहाँ प्राप्त होती है।[2]

लक्ष्मी के पाँच स्वरूपों का विश्लेषण हमें दक्षिण मूर्ति संहिता में प्राप्त होता है—

श्री विद्या च तथा लक्ष्मीमहालक्ष्मीस्तथैव च।
त्रिशक्ति सर्वसाम्राज्यलक्ष्मी पञ्च कीर्तिता।[3]

इनका ध्यान यहाँ इस प्रकार दिया है—

ध्यायेत्तत श्रिय रम्याम् सर्वदेवनमस्कृताम्।
तप्तकान्तस्वराभासा दिव्यरत्नविभूषिताम॥
आसिच्यमानाममृतैमुक्तारत्नगजवरैपि।
शुभ्राभ्रामेयुग्मेन मुहुर्मुहुरपि प्रिय॥
रत्नौघमूद्धमुकुटा शुद्धक्षौमाङ्गरागिणीम।
पद्माक्षीम पद्मनाभेन हृदि चिन्त्या स्मरेद बुध॥
एवं ध्यात्वाऽचयद्देवीम पद्मपुष्पधरा सदा।
वरदाभयशोभाढ्या चतुर्बाहु सुलोचनाम्॥[4]

अर्थात् इनका ध्यान एक परम सुन्दरी स्त्री के रूप में करना चाहिए, जिनके शरीर की आभा तप्त सोने के भाँति है तथा जो दिव्य रत्नों से विभूषित हैं, जिनके मस्तक पर रत्न जटित मुकुट है जिनकी आँखें पद्म दल के आकार की हैं, जिनके हाथ में पद्म का पुष्प है, जिनका एक कर वरद मुद्रा में है जो चतुर्बाहु हैं जो दो हाथियों द्वारा अमृत से स्नान कराई जा रही हैं, इत्यादि।

इनकी पूजा, गन्ध, पुष्प इत्यादि से करनी चाहिए[5] तथा इनको योनि मुद्रा, सुरभी मुद्रा इत्यादि से आवाहन करना चाहिए[6], ऐसे निर्देश प्राप्त होते हैं। इनका यहाँ और एक ध्यान मिलता है जो महालक्ष्मी का स्वरूप है—

अङ्गानि पूर्ववद्देवि न्यसेन्मन्त्री समाहित।
रत्नोद्यतसुपात्रन्तु पद्मयुग्म च हेमजम्।
अग्ररत्ना वलीराजदादर्शं दधतीम् परम्॥
चतुर्भुजाम स्फुरद्रत्ननूपुराम मुकुटोज्ज्वलाम्।
ग्रवेयाङ्गदहाराढ्या कंकती रत्न कुण्डलाम्॥

---

१ ललिता सहस्रनाम — श्लोक ५८।
२ शाक्तानन्द तरंगिणी — अध्याय ३।
३ दक्षिण मूर्ति संहिता — पटल १, ७।
४ उपर्युक्त — पटल १, १५ १८।
५ उपर्युक्त — पटल १, १४ १५।
६ उपर्युक्त — पटल १

पद्मासनसमासीना दूतीभिमण्डिता सदा ।
शुक्लाङ्गरागवसनाम् महादिग्याङ्गनानताम ।।
एव ध्यात्वाऽचयद्देवीम् पूवयन्त्र च पूववत ।[1]

अर्थात अंग इनका पूर्व में जसा कहा गया है वसा ही होना चाहिए । पात्र रत्नो से जटित होना चाहिए तथा हाथी पद्मो पर खड हो । य चतुभुज हो मुकुट मस्तक पर हो गल मे एकावली रत्नो की हो ग्रवेयक अर्थात तौक तथा हार भी गले मे हो रत्नो के कुण्डल कान मे हो रत्न जटित नूपुर हो । सफद अगराग ह। और सफद वस्त्र हो तथा पद्म के आसन पर बठी हो, इत्यादि । इनके मन्दिर में महागज तथा घोडो की आकृतिया बनानी चाहिए तथा साधक या उपासक को स्वयम भी सुवण तथा रत्नो के आभूषण धारण करके इनकी पूजा करनी चाहिए ।[2] यही श्री यन्त्र बनान की भी विधि प्राप्त होती है तथा उसकी पूजा करन का प्रयोग भी मिलता है ।[3]

त्रिपुरा रहस्य में शषशायी नारायण का ध्यान प्राप्त होता है जिसम भगवान् क्षीर समुद्र मे शष के ऊपर शयन कर रहे ह और लक्ष्मी जी उनका चरण दबा रही ह—'श्रिया लालितपदा जयगलातिविरजित ।"[4] इसमें एक लक्ष्मी की प्राथना भी मिलती है जिसम उनका स्वरूप स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है—

अथ ते पुरुहूताद्यास्तुहिनाद्रितटे स्थिता ।
स्वर्धुनीसविध पद्मा तुष्टवुहरिवल्लभाम ।।
नमो लक्ष्म्य महादेव्य पद्माय सतत नम ।
नमो विष्णुविलासिन्य पद्मस्थाय नमोनम ।।
त्व साक्षाद्धरिवक्षस्था सुरज्यष्ठा वरोदभवा ।
पद्माक्षी पद्मसस्थाना पद्महस्ता परामयी ।।
सम्राज्या सवसुखदा निधिनाथा निधिप्रदा ।
निधीशपूज्या निगमस्तुता नित्यमहोन्नति ।।
अनन्त कोटितडिताम पुञ्जीभूतसमप्रभा ।
दलद्रक्तोत्पलामाङ्गी तप्तहेमाम्बराऽन्विता ।।
करपद्मलसच्छूनदलपद्मचतुष्टया ।
हेमकुम्भप्रभाक्षपतुङ्गवक्षोजशोभिता ।।
पक्वविद्रुमग्यक्कारिमदुद तच्छदान्विता ।
मुखामोदसमाहूतभृङ्गी सकारमध्यगा ।।
इन्दीवरसुसौभाग्यवदना कणलोचना ।
कस्तूरीतिलकाख्यातमुखराग दुलाञ्छना ।।
अनर्घ्यरत्नप्रत्युप्तभूषणौघविभूषिता ।
एवविधा रमा दृष्ट्वा दण्डवत्प्रणता सुरा ।।[5]

---

१ उपर्युक्त — पटल २, ६ १० ।
२ दक्षिणामूर्ति सहिता — पटल २, १५ ।
३ उपर्युक्त — पटल ३, १ ६ ।
४ त्रिपुरा रहस्य माहात्म्य खण्ड — अध्याय ७–१५ ।
५ उपर्युक्त — माहात्म्य खण्ड — अध्याय १२, १ १२ ।

इस ग्रथ में लक्ष्मी के युद्ध का विवरण भी प्राप्त हाता है[1] और इनकी देवताओ पर विजय होन के पश्चात ब्रह्मा इत्यादि देवताओ को इनकी स्तुति करते भी हम यहा पाते ह—

जय लक्ष्मि महादेवि जय सम्पदधीश्वरि।
ज‹ पद्मालय मातजय नारायणप्रिय जय। इत्यादि
पंद्मास्य पद्मनिलय पद्मकिञ्जल्कवर्णिनि।
पद्मप्रिय पद्मपदे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥

लक्ष्मी के पद्मा नदी के रूप म सरस्वती के शाप के कारण अवतरित होने की कथा भी यहाँ मिलती है[3] और इनके आवाहन का म त्र भी।[4] तारक के द्वारा लक्ष्मी की प्राप्ति के प्रयत्न की तथा लक्ष्मी और तारक के युद्ध की कथाएँ यहा मिलती ह[5]।

सौन्दयलहरी म श्री विद्या का विवरण प्राप्त होता है। यह स्वरूप महात्रिपुर सुदरी का है। श्री विद्या को च द्रकला विद्या भी कहते ह क्योकि च द्रमा म सोलह कलाए ह उसी प्रकार इनम भी सालह नित्य कलाएँ ह तथा सोलह अक्षर ह। यहाँ य त्र और जप की विधि मिलती है।[6] श्रीविद्या के दो स्वरूप कहे गये ह, हादि और कादि। हादि विद्या मोक्षदायिका है और कादि विद्या भाग या सम्पदा प्रदायिनी है। कादि विद्या सपर्या-पद्धति, श्री चक्र पूजन न्यास बहिरनुष्ठान जप और होम इत्यादि से सयुक्त है। हादि को केवल म त्र और जप की आवश्यकता है। मत्र के द्वारा कुण्डलिनी शक्ति का जागरण होता है और शक्ति के जागरण से आत्म ज्ञान का उदय होता है। इस कारण म त्र योग को महायोग कहते ह, इत्यादि। कादि विद्या का श्लोक यह है—

स्मर योनिं लक्ष्मी त्रितयमिदमादौ तव तनो
र्निधायाङ्क नित्य निरवधिमहाभोगरसिका।
भजन्ति त्वा चि तामणिगुणनिबद्धाक्षवलया
शिवाग्नौ जुह्व त सुरभिघतधाराहुतिशत ॥

सौ दयलहरी में श्रीचक्र बनान की विधि भी दी है। यह यो है—

चतुर्भि श्रीकण्ठ शिवयुवतिभि पञ्चभिरपि
प्रभिन्नाभि शभोनवभिरपि मूलप्रकृतिभि।
चतुश्चत्वारिंशद्वसुदलकलाभिस्त्रिवलय—
त्रिरेखाभि साध तव शरणकोणा परिणता ॥[7]

अर्थात् चार श्रीकण्ठ और पाँच शिवयुवतियाँ, इन नौ मूल प्रकृतियो के रहन से ततालीस त्रिकोण बनते ह। एक शम्भु का बिन्दु स्थान होता है तथा तीन वत्तो से युक्त तथा दो रेखाओ पर आठ और सोलह कमल बनते ह (फलक २२)। यह सोलह की सख्या लक्ष्मी से विशेष रूप से सम्बधित ज्ञात हाती है।

---

१ उपयुक्त — अध्याय २१।
२ उपयुक्त — अध्याय २१, ७८ ८२।
३ उपर्युक्त — अध्याय २२, ११ १४।
४ उपर्युक्त — अध्याय २४, ५० ५३।
५ उपयु क्त — अध्याय २७–२५–४६।
६ सौ दर्य लहरी — श्लोक ३२, ३३।
७ उपर्युक्त — श्लोक ११।

विष्णु यामल लक्ष्मी यामल तथा लक्ष्मी मत में उपयुक्त लक्ष्मी के स्वरूपो से कोई भिन्न स्वरूप नही मिलता ।

इन त त्रो को देखन से ऐसा ज्ञात होता है कि श्री शंकराचाय न बौद्धो के वज्रयान इत्यादि पर जनता की श्रद्धा देखकर उनका परिष्कार करके अपन हिन्दू धम के अनुरूप बनाया और उसकी एक विचारधारा बनायी । प्राचीन जादू टोना जिसका कुछ स्वरूप हमे अथववेद में मिलता है उसे वही छोड दिया । इस कारण इस आठवी शता दी वाल त त्र तथा प्राचीन आदिवासियो में प्रचलित क्रियाओ म विशेष सामजस्य दृष्टिगोचर नही होता । यो यक्षिणी त त्र वीनाख्या में मिलता है तथा कुल चूडामणि मे मारण, उच्चाटन इत्यादि की भी प्रक्रिया प्राप्त होती है जिसका सम्बन्ध जन-साधारण में प्रचलित झाडन फू कने से और वीर और यक्ष पूजा से है ।

ब्रह्म यामल तथा पिंगल मत म, जिसकी हस्तलिखित प्रतिया नपाल दरबार के पुस्तकालय मे सुरक्षित ह[1], देवी देवताओ की प्रतिमाओ की मान्यताए प्राप्त होती ह । इनमें देवियो की मूर्तिया में महालक्ष्मी की भी मूर्ति प्राप्त होती है[2] । इनकी मूर्ति अष्ट ताल की बनान का विधान है । इन ग्रंथो म एक ताल की नाप बारह अगुल निर्धारित है । इस प्रकार आठ ताल का अथ हुआ ९६ अगुल । इस आधार पर दि य नारियो की मूर्तियो के शरीर का प्रमाण इस प्रकार मिलता है दोनो चरणो की लम्बाई एडी से अगूठे तक ग्यारह अगुल बतायी गयी है (६ कला), चरणो की मोटाई चार अगुल (२ कला) अगूठ की लम्बाई छब्बीस यव (ढढ कला म दो यव कम), मोटाई ६ यव (½ कला में दो यव कम), अगूठे की बगल की उँगली की लम्बाई छब्बीस यव अर्थात् वह अँगूठे से बाहर निकली रहनी चाहिये । यह सामुद्रिक लक्षण सौभाग्यशालिनी के लक्षणा म एक माना जाता है । इस अगुली की मोटाई ६ यव उसके बगल की दूसरी अगुली चौदह यव लम्बी और चौथी बारह यव । इनके दोनो अँगुलियो की मोटाई ६ यव होनी चाहिए ।[3] इन अँगुलियो के जोड प्रत्यक दो यव चौड होने चाहिए इन्हें कलापिका कहते ह । नितम्ब चौतीस अंगुल (१७ कला) तथा कटि चौदह अगुल अर्थात सात कला तथा नाभि प्रदेश दो अगुल (१ कला), नाभि के ऊपर की त्रिवली का पहिला भाग दो अगुल (१ कला), दूसरा चौदह यव (एक कला में दो यव कम) तथा तीसरा दो अगुल (१कला) होना चाहिए । स्तनो की चौडाई १३ अगुल (साढ छ कला) तथा स्तनो से गल तक के भाग के बीच का अतर दस अगुल (५ कला) रखना चाहिए । छाती की बाहुओ को लिय हुए चौडाई बाईस अगुल होनी चाहिए (११ कला) । बाहुओं की चौडाई ४ अगुल तथा ग्रीवा की ५ अगुल होनी चाहिए । इन देवस्त्रियो के ऊपरी भाग कदाचित् देवताओं की भांति बनान का निर्देश है । देवताओ के चेहरे की नाप ठुडडी से मस्तक तक चौदह अगुल बनायी जाती थी तथा कान से कान तक चौडाई सोलह अगुल रहती थी, ललाट चार अगुल ऊचा, मस्तक दो अगुल, नाक चार अगुल चिबुक दो अगुल ऊँचा, मु ह दो अगुल चौडा, आँख की लम्बाई एक अगुल, चौडाई दो अगुल आख और बरौनी की लम्बाई दो अंगुल तथा चौडाई दो यव । आख और बरौनी के अन्दर का छद तीन यव मणि पाँच यव लम्बी, नीचे का लटकन पाच यव मोटा मु ह की फलावट चार अगुल तथा ग्रीवा पाँच अंगुल लम्बी और ६ अगुल मोटी होनी चाहिए । बाहु क ध से कुहनी (कूवर) तक १८ अगुल, कुहनी दो अंगुल कुहनी से मणिब ध तक १८ अगुल मणिब ध से अँगुलियों के अ त तक चौदह अंगुल अगूठा जोड से अ त तक सात अगुल तजनी पाँच अगुल मध्यमा ६ अगुल अनामिका पाँच अगुल तथा कनिष्ठिका चार अगुल होनी चाहिए । ।[4] इस प्रकार ब्रह्म यामल में, जो नपाली

---

१ पी० सी० बागची — ब्रह्मयामल तन्त्र, चप्टर ४ ए प्यु टेक्स्ट आन प्रतिमा लक्षण, जरनल आफ दी इण्डियन सोसाइटी ऑफ ओरियण्टल आट, दिसम्बर १९३५, खण्ड ३ स० २, पृष्ठ ९० ।

२ पी० सी० बागची — उपर्युक्त – पृष्ठ ९३ ।

३ पी० सी० बागची — उपयुक्त – पृष्ठ ९७ ।

४ वही — उपयुक्त – पृष्ठ ९८ तथा ९६ ।

सम्वत १७२ अर्थात् १०५२ ईसवी का लिखा हुआ है तथा पिंगलमत जो नपाली सम्वत २६४ का अर्थात ११७४ ईसवी का लिखा हुआ है, प्रतिमाआ के विधान मिलते ह ।

ब्रह्म यामल त न्त्र अ ध्याय ४

दिव्याधिकाना शक्तीना लक्षणम–[२]
पादौ तु षटकल ज्ञयौ स्त्रीणा चव वरानन ।
पार्ष्णी प्रोत्थन कत या स्त्रीणा पञ्चाङ्गुल तथा ।।
षडङ्गुल भवेत पुसा पादाग्रतलक तथा ।
सप्ताङ्गुल भवेत पुसा नारीणा च षडङ्गुलम ।।
अङ्गुष्ठ द्व्यङ्गुल स्त्रीणा कलार्द्धेनाधिक तथा ।
प्रोत्थनाङ्गुष्ठकौ कार्यौ पादूना तु कला प्रिय ।।
तर्जनी तु कलासार्द्धं देर्घ्येण तु प्रकीर्त्तिता ।
प्रोत्थन तु कलार्द्धं स्यात् मध्यमा तु कला स्मता ।।
प्रोत्थनार्द्धकला चव यवूना तु प्रकीर्त्तिता ।
अनामिकाप्रमाण तु कलार्द्ध त्रियवाधिकम ।।
प्रोत्थनार्द्धकला चव द्वियवूणा प्रकीर्त्तिता ।
कनिष्ठिका प्रमाणन कलार्द्ध द्वियवाधिकम ।।
द्वियवाना तथा चव प्रोत्थनार्द्धकला स्मता ।
जङ्घकलापिका देवि कला सार्द्धा प्रकीर्तिता ।।
परिणाहस्तथा प्रोक्ता कलासप्त न सशय ।
परिणाहे तथा पुसा कला चवार्द्धपञ्चमम् ।।
अष्टादश कला स्त्रीणा नितम्बम् परिकीर्तितम् ।
स्तनयोमध्यदशन्तु कला चवार्द्धपञ्चमम ।।
कला चत्वारि सर्वास्तु परिणाहे तयो स्मत ।
कण्ठस्तनान्तर चैव कला सार्द्धम् प्रकीर्तितम ।।
सबाहुवक्ष प्रोत्थेत कला चव चतुदश ।
बहवो अशकाधस्तात् प्रोत्थन द्विकलौ स्मृतौ ।।
परिणाहे तथा देवि षटकलौ परिकीर्त्तितौ ।
पुरुषस्य तथा ध्यतौ सार्द्धं चव कलाद्वयम् ।।
कलापिकाथ प्रोत्थन कला सपरिकीर्त्तिता ।
पुसस्तु द्विकला ज्ञेया परिणाहा त्रिगुणा स्मृता ।।
शष देवि प्रमाण स्यात् समान नारिपुसयो ।
हस्तस्य तु तल चव षटकलम् परिकीर्त्तितम ।।
आयत्वेन य नारीणाम् प्रोत्थन द्विकलम् भवेत् ।
कलाद्वय तथा चार्द्धमङ्गुष्ठौ परिकीर्त्तितौ ।।

---

२ हरिप्रसाद शास्त्री — कटलाग ऑफ मनुस्क्रिप्टस इन दी दरबार लाइब्रेरी, खण्ड २, पृष्ठ ६१ (नैपाल) ।

यवूना च तथा प्रोत्था स्वभाननाङ्गुलम् भवेत् ।
तजनी तु भवेददीर्घा कलाद्वयतथार्द्धक ॥
मध्यमा तु भवेच्चैव पादूना तु कलात्रयम् ।
षडयवा तु तथा प्रोत्था भवेद्व वङ्गलिद्वयम् ॥
अनामिका तथा दध्य सार्द्ध चैव कलाद्वयम ।
चतुर्यवा भवेत प्रोत्था कनिष्ठी द्विकला स्मृता ॥
दर्घ्येण प्रोत्थतश्चापि अर्द्धाङगुलमिता भवेत् ।
अङ्गुष्ठ मूलिमा पव कला नयं यवाधिकम् ॥
अर्द्धाङ्गुल कला चव द्वितीयम पवकम भवेत ।
नतीय चाङ्गुलम प्रोक्त त्रियवा च समासत ॥
पर्वार्द्धेन नखा प्रोक्ता सर्वेषा नात्र सशय ।
नर्जन्यायान्तथाद्य तु सपादा तु कला स्मता ॥
द्वियवूना द्वितीया स्यात् कला चव प्रकीर्त्तिता ।
ततीय चाङ्गुलम प्रोक्तम् द्वियवाधिकपवक्म् ॥
मध्यमाया तथाद्य तु कला च षडयवास्तथा ।
द्वितीय तु भवेत पूर्वं द्वियवूना कला तथा ॥
तृतीय तथा पवम् पादूना तु कला भवेत् ।
अनामया तथाद्य तु कला तु षडयवास्तथा ।
द्वितीयन्तु कला प्रोक्ता तृतीय त्रियवाधिकम् ।
अङ्गुलस्तु भवेद्देवि सप्रमाणन नान्यथा ॥
प्रोत्थ तु चाग्रपवस्यादङगुलीनाम् प्रकीर्तितम् ।
शष तु कारयत ज्ञानी यथाशोभ न सशय ॥
मूल स्थूला तथा चाग्र क्रमेणव तु श्लक्ष्णका ।
अङ्गुल्य कारयत् सर्वान् स्वमानन सुशोभनाम् ॥
अङ्गुष्ठस्य तथा प्रोत्थमग्र सपरिकीर्त्तितम ।
मूल श्लक्ष्ण प्रकत्तय यथाशोभ प्रमाणत ॥
पुरुषस्य तथा प्रोत्था भवेत् करतल प्रिय ।
कलात्रय न सन्देहो दर्घ्येण तु कलात्रयम् ॥
तथा चार्द्धकलाधिक्य भवते नात्र सशय ।
मुद्रामन्त्रधरा सर्वे नानाभरणभूषिता ॥
दिव्याधिकाना सप्रोक्तम् प्रमाण वरवर्णिनि ।

दिव्याधिक्य पुरुष मूर्तियो के समान शक्तिया के भी अवयव बनान चाहिए—

दिव्याधिक तु तद्रप तदेकादशतालकम् ॥
अङ्गुलानि भवेत्तालम द्वादश च प्रमाणत ।[1]
आदावेव समाख्यातो मस्तकश्चतुरङ्गुलम ॥

---

१ इस प्रकार मूर्त्ति की पूरी नाप १३२ अगुल हुई ।

चतुरङ्गुला स्मृता नासा ललाट चतुरङ्गुलम ।
मुखं तु त्र्यङ्गुलम् प्रोक्त चिबुक द्वयङ्गुल भवेत् ।।
सक्किण्या तु तथा चास्या विस्तार चतुरङ्गुलम् ।
नासापुटौ तथा ज्ञयौ द्वयङ्गुलौ तु प्रमाणत ।।
नासाग्रं द्वयङ्गुलम् प्रोक्तम् विस्तरेण महाशय ।
दैर्घ्ये अक्ष्णौ तथा ज्ञय त्र्यङ्गुल तु प्रमाणत ।।
प्रोत्थन्तु द्वयङ्गुलम प्रोक्तम् तारकश्चाङ्गुलम् भवेत ।
अक्ष्णो चव पुटौ कार्यौ यथा उभौ प्रमाणत ।।
चतुरङ्गुलौ भ्रुवौ ख्यातौ द्वयङ्गुल तु भ्रुवोत्तरम् ।
अक्ष्णौ चव भ्रुवौ देवि कलावार्द्धातरम भवेत ।।
भ्रुवोपरि महादेवि ललाट चतुरङ्गुलम् ।
कर्णयोश्च भ्रुवोश्चव अन्तरा त्रिकलम् भवेत् ।।
सक्किण्याक्ष्णतर चव सार्द्ध देवि कलाद्वयम ।
श्रवणयोश्च पुटौ प्रोत्थम् अङ्गुलौ परिकीर्तितौ ।।
दर्घ्येण च कला सार्द्धम् भवेच्चोपरिमात्मनि ।
प्रोत्थेन अङ्गुल ज्ञेय यथाशोभ व्यवस्थितम ।।
कर्णमूलान्ततोच्छ्र या सार्द्धं चेवाङ्गुलम् भवेत् ।
दैर्घ्येण कण्ठदेश तु भवेत् पञ्चाङ्गुलम भवेत् ।।
चतु कल समाख्यात प्रोत्थन तु न सशय ।
कणन्तु हृदय चव भवेदष्टकल तथा ।।
विस्तरेण तु वक्ष स्याद्वात्रिंशांगुलकम भवेत ।

इस प्रकार दोनो दिव्याधिक पुरुष तथा स्त्रियो की मूर्तिया की इस तन्त्र की मान्यताओ को मिला देन से प्रतिमा बन जाती है। यह तन्त्र पीछे का है परन्तु ये मान्यताएँ पहिल से ही चली आ रही थी जिन्हें यहाँ लिपि-बद्ध किया गया है।

तन्त्रो में इस प्रकार लक्ष्मी का विष्णु की शक्ति के रूप में स्वरूप प्राप्त होता है परन्तु तन्त्ररास में भी भवनश्वरी को आदिशक्ति के रूप में निरूपण किया है और उनकी प्राथना में उनको लक्ष्मी स्वरूपा भी कहा है और इस स्वरूप का वणन करते हुए यह कहा है कि इनको चार हाथी सूडो म घट लिय हुए अमृताभिषक कर रहे ह।[1] जो गजलक्ष्मी का स्वरूप है।[2]

लक्ष्मी का स्वरूप बौद्ध तन्त्र-ग्रथ साधनमाला[3] में नही मिलता, कदाचित इस कारण से कि इनको जैनियों ने अपना लिया था[4], परन्तु महासरस्वती का स्वरूप जो यहाँ प्राप्त होता है वह बहुत कुछ लक्ष्मी से मिलता है।

१ आनन्द कुमार स्वामी —— अर्ली इण्डियन आइकोनाग्राफी श्रीलक्ष्मी ईस्टन आर्ट, पृष्ठ १८५।
२ ऐसा स्वरूप हमें ममल्लीपुर में गजलक्ष्मी का प्राप्त होता है जहा चार हाथी इनको स्नान करा रहे ह
३ साधन माला —— विनयतोष भट्टाचाय — गायकवाड आरियण्टल सीरीज खण्ड २।
४ विनयतोष भट्टाचाय —— दी इण्डियन आइकोनोग्राफी, इण्ट्रोडक्शन, पृष्ठ १।

'शरदिन्दुकरकरा सितकमलोपरि चन्द्रमण्डलस्था दक्षिणकरेण वरदा वामेन सनालसितसरोज धरा स्मेरमुखीमतिकरुणामयी श्वेतचन्दनकुसुमवसनधराम मुक्ताहारोपशोभितहृदयाम् नानारत्नालङ्कारवती द्वादशवर्षाकृतिम् मुदितमुकुलदन्तुरोरस्तटी स्फुरद्दन्तान्तगभस्ति-व्यूहावभासितलोकत्रयाम् ।'[1]

इस प्रकार तन्त्रों में लक्ष्मी का स्वरूप जो विविध तन्त्रों को देखने से मिलता है वह बहुत प्राचीन नहीं है । इससे यह अनुमान होता है कि यह विद्या लिखित रूप में आदिवासियों ने नहीं रखी थी और यदि लिखित रूप में थी भी तो आर्यों के आक्रमण के फलस्वरूप आदिवासियों की पुस्तक नष्ट हो गई और उस काल में अप्राप्त थी जब इन तन्त्रों का संग्रह हुआ ।

★

१ साधन माला, खण्ड १, पृष्ठ ३२९-१६२ ।

प्रतिमा तथा तद्विषयक कुछ परम्पराएँ

प्राचीन भारतीय प्रतिमाओ म तथा पाश्चात्य मूर्तियो में कुछ भेद है। पश्चिम मे मूर्तियाँ मनुष्य विशष के रूप के आधार पर गढी गयी ह परन्तु हमारी प्रतिमाए यहा के कलाकारो के हार्दिक उदगारो के आधार पर। हमारे शास्त्रो म वर्णित प्रतिमाओ के प्रमाणो को यदि हम देश के विभिन्न भागो से प्राप्त प्रतिमाओ के नाप से मिलाय तो कुछ एसा भान हागा कि शास्त्रकारो के वणन की एक अपनी परम्परा थी तथा प्रतिमा निर्माण करनवालो की दूसरी। प्राय स्थान स्थान पर शास्त्रो म कुछ बाते छूटी हुई-सी प्रतीत होती ह जो इस कला के विशषज्ञो को ही कदाचित् ज्ञात थी। यहा कलाकारो की अपनी कुछ परम्पराएँ थी जो शास्त्रो मे नही मिलती, वे उसे परम्परागत अपन पिता पितामह से प्राप्त करते थ। जिस प्रकार किसी देवता की अचना करन के हेतु यह आवश्यक था कि शिवो भूत्वा शिवम् उसी प्रकार भारतीय कलाकार का भी यह विश्वास था कि जब वह स्वय शिव हो जाय तभी शिव की प्रतिमा बना सकता है। उसे परम्परागत यही बताया जाता था कि इस भावना के उत्पन्न किय बिना वह देवता की प्रतिमा गढ नही सकता क्योकि भारत मे प्रतिमा रूप की प्रतिकृति नही है यह ध्यान में अवतरित धारणा का एक मूत आकार है जो एक छाया मात्र सकेत रूप है।

ध्यान योगस्य ससिद्धय प्रतिमा लक्षणम् स्मतम्। प्रतिमाकारको मर्त्त्यो यथा ध्यान ततो भवेत।'[१]

भक्त को इस प्रकार की प्रतिमा के समक्ष बठकर अपन हृदय में प्रतिमा के प्रति देवत्व की भावना उत्पन्न करनी पडती है। प्रतिमाओ की प्राण प्रतिष्ठा भी इसी कारण कराई जाती है कि उस पर ध्यान केन्द्रित करन पर उस देवता की प्रथम अचना करनवालो के भाव उसके पीछ आनवाल उपासको को भी प्राप्त हो सकें।

हिन्दु धम के अनुसार प्राणी मात्र की अलग अलग अवस्थाए होती ह। इस ससार से मन हटाकर इस ससार के कर्त्ता की ओर मन ले जान के हेतु प्रथम अवस्था म कुछ आधार की आवश्यकता होती है। वह आधार प्रतिमा द्वारा प्रदान होता है। प्रतिमा निर्माण निराकार ब्रह्म को ध्यान द्वारा साकार करन का प्रयत्न मात्र है। प्रतिमा पर ध्यान केन्द्रित होन पर आकाररहित परमात्मा पर भी ध्यान केन्द्रित हो सकता है यह अवस्था पहिल की अपेक्षा ऊची अवस्था समझी जाती है। जिस प्रकार सूय ग्रहण नगी आँखो से न देख सकने के कारण लोग घट में पानी भर कर सूय के अक्स को देख कर सूयग्रहण को पहिचानते हैं उसी प्रकार इस ससार के कर्त्ता की प्रतिमा का रूप देकर उस परम पिता परमात्मा को पहिचानने का प्रयत्न करते ह। परमात्मा तो 'अणोरणीयान् महतो महीयान्' है। एतिहासिक दृष्टिकोण के अनुसार यह कहना आवश्यक है कि भारत के आदिवासियो में प्रतिमा बनान की तथा उसके सूचन की व्यवस्था थी जिसका कुछ स्वरूप हमें सिन्धु घाटी की सभ्यता से प्राप्त मुहरो पर तथा वहाँ से मिली मृण्मूर्तियो में दृष्टिगोचर होता है। आय मूर्तिपूजक नही थे जैसा उनकी ऋग्वेद में अकित प्राथनाओ से ज्ञात होता है। यहाँ के निवासियो के सम्पक में आकर इन्होने उनके देवी-देवताओ को अपनाया तथा उनका सस्कार करके अपने अमृत देवी देवताओ मे पहिल हिचकते हुए फिर खुल कर स्थान दिया। इन देवी-देवताओ की प्रतिमाओ के बनाने की कला इन्ही आदिवासियो के आरम्भ से रही। इसे आर्यों न नही सीखा। इनके गढन के नियम जो हमे विविध ग्रन्थो में प्राप्त होते ह, वे

---

१ शुक्र नीतिसार – ४, १४०।

इन्ही आदिवासियो से सकलन किय हुए प्रतीत होते ह, क्याकि प्रतिमाए आया क आगमन व पूव स ही बनती रही। इन प्रतिमाओ के प्रति श्रद्धा भक्ति था। इनका पूजन इत्यादि भी इन्ही आदिवासिया की देन प्रतीत होती है क्योकि सवप्रथम सिन्ध घाटी की सभ्यता म हम उपासका का उपासना करते हुए पाते ह। भारत म प्रतिमाएँ तो पूजन करन के हेतु बनी। भारत प्राचीन समय स समन्वयवादी रहा है हम इस कारण आर्यों के आदिवासियो के देवी-देवताओ को अपना लिया और उनके साथ तदविषयक कथा कहानिया भी। य कथाए भिन्न भिन्न स्रोतो से तथा भिन्न भिन्न रूपा म एक स्थान पर आन क कारण विरोधाभास उत्पन्न करती ह जस एक कथा मे लक्ष्मी का विष्णु की पत्नी दूसरे म इन्द्र की पत्नी तथा तीसरे म कुबर की पत्नी इत्यादि। पीछे चलकर यह मीमासा की गयी कि यह कल्प भद के कारण है। आग चलकर गीता म कम माग ज्ञान माग तथा भक्ति माग सब का समन्वय भी इसी परम्परागत समन्वय की प्रवत्ति के कारण प्राप्त होता है।

प्रतिमा निर्माण के समय जब कलाकार ध्यान करता है तो उसके स्मृति पट पर देख हुए स्वरूपा के ध्यान आते ह इस कारण इन प्रतिमाओ के स्वरूप, इनकी वेष भूषा देश काल के अनुरूप ही हो जाती है। वाराहमिहिर का यह आदेश कि देशानरूप भूषण वेष अलकार मूर्त्तिभि कार्यो', किसी कलाकार के परम्परागत आदेश का स्वरूप है। प्राय इन मूर्तियो के चेहरा की बनावट भी मूर्तिकार क यजमान के मुखाकृति से मिलती जुलती ही रहती है जसे प्राचीन सूय की प्रतिमाओ में शक जाति के चेहरा का प्रदशन है। आज भी मारवाडिया द्वारा बनवाई हुई प्रतिमाओ के चेहरे मारवाडिया की भाति बनते ह।

इन मूर्तियो म हाथ के भाव को हस्त कहत ह—जसे दण्ड हस्त गज हस्त, कटि हस्त इत्यादि तथा उगलियो और हथली के विशिष्ट भावो की मुद्रा—जसे ज्ञान मुद्रा व्याख्यान मुद्रा योग मुद्रा, सूची मुद्रा, अभय मुद्रा वरद मुद्रा इत्यादि। हाथ के विविध आयुधा का भी हस्त अथवा पाणि कहते ह—जसे पद्म हस्त अथवा पद्म पाणि। इस प्रकार हस्त तथा मुद्रा उस काय के द्योतक ह जो प्रतिमा कर रही है। कलाकार इन मुद्राओ के द्वारा अपन भावो को व्यक्त करता है। कुमार स्वामी का मत है कि इन मुद्राओ की भूषा का रूप बहुत प्राचीनकाल स निश्चित हो गया था। इस कारण उसको प्रत्यक दशक समझ लता था।[1] इन मुद्राओ द्वारा पूरी कथा भाषा नही जानन वाले दर्शक को कलाकार बता देता है। इन मुद्राओं को आर० के० पोडूवेल न तीन सूचिया में विभक्त किया है—वदिक तान्त्रिक और लौकिक।[2] हाथ की मुद्राओ से भी अधिक मुख-आकृतिया भावो को प्रदर्शित करन मे समथ होती ह, जैसे ध्यान आकृति क्रोध आकृति इत्यादि इत्यादि। इन भावो को आँखो तथा होठो इत्यादि द्वारा व्यक्त किया जाता है। इनका विशद विवेचन भरत नाटयशास्त्र में मिलता है। आज भी भरत नाटयम् के कलाकार इन मुखाकृतियो तथा हस्त-मुद्राओ से अपन भावो को व्यक्त करत ह तथा विविध रसा का प्रतिपादन करते हैं।

अग विन्यास का रूप भी हमे भरत के नाटयशास्त्र में प्राप्त होता है जो हम नृत्य करती हुई प्रतिमाओ में दृष्टिगोचर होता है। इनको अग प्रत्यग तथा उपाग मे विभक्त किया गया है।

---

१ कुमार स्वामी तथा गोपाल कृष्णय्या – दी मिरर आफ जेश्चर, पृष्ठ २४। यहाँ कुमार स्वामी ने जातक न० ५४६ का विवरण दिया जिसमें बोधिसत्व अपनी पत्नी बनाने के हेतु उपयुक्त स्त्री चुनने के हेतु हस्त मुद्रा में बात करते थे।

२ आर० के० पोडूवेल – एडमिनिस्ट्रेटिव रिपोर्ट आफ आर्केआलोजिकल डिपार्टमेण्ट, ट्रावनकोर स्टेट ११०७ एम० ई०, पृष्ठ ६७ तथा प्लेट।

हस्त मुद्राए जो प्राय प्रतिमाओ मे पायी जाती ह अभय मुद्रा, वरद मुद्रा, ध्यान अजुली नमस्कार व्याख्यान धम चक्र प्रवतन कटि अवलम्बित सिहकरण गज सूची भूस्पश तथा विस्मय। एक ही मुद्रा के अलग अलग नाम शास्त्रकारा न दिय ह, जसे अभय मुद्रा क। वाराहमिहिर न शान्तिद कहा है।[1] इस अभय मुद्रा का जो विवरण वाराहमिहिर न दिया है वह सर्वोत्तम है।

'द्रष्टुरभिमुख ऊर्ध्वांगुलि शान्तिद कर यह मुद्रा प्राय बहुत से देवी देवताओ की प्रतिमाओ में मिलती है क्याकि मनुष्य अपन कष्टो का निवारण देवताओ से चाहता है। लक्ष्मी तथा बुद्ध मूर्तियो मे भी यह हस्तमुद्रा दष्टिगाचर हाती है। इसी प्रकार वरद मुद्रा वाराहमिहिर न उत्तानोधोगुलीहस्तो वरद कह कर बताया है।[2] यह मुद्रा भी प्राय लक्ष्मी की मूर्ति म मिलती है। नमस्कार तथा अजली मुद्राओ मे प्राय उपासका के हाथो के दिखान की प्रथा है। यह मुद्रा सबसे प्राचीन ज्ञात होती है। इस मुद्रा म प्राथना करते हुए एक देवी के उपासक को हम सिधु घाटी की सभ्यता में देखते ह जसा पहिल लिखा जा चुका है। इस मुद्रा में दोना हाथ जाडकर अथवा अजली बनाकर प्राथना की जाती है। ध्यान मुद्रा के कई प्रकार ह—एक पद्म आसन म स्थित होकर एक के ऊपर दूसरी हथली रखना दूसरे दोनो हाथो की हथली दोनो घुटन पर रखना तीसरे दोनो, हाथो को घुटन पर रखकर दोनो करो की तजनी तथा अँगूठ को मिलाकर रखना। व्याख्यान मुद्रा में भी दक्षिण कर की तजनी और अगूठ को मिलाकर वक्षस्थल के समीप रखना। कटि अवलम्बित मुद्रा में हाथ बगल में लटका रहता है और हथली कटि पर रहती है।

मूर्तियाँ तीन प्रकार के बनाई जाती ह या तो खडी या बठी हुई या लटी हुई। खडी मूर्तियो में जो भग दिखाये जाते ह इनके भद ह समभग, आभग त्रिभग तथा अतिभग। समभग मूर्तिया सीधी खडी रहती तथा शरीर सब एक सिधाई में रहता है। प्राय जन तीर्थंकरो की मूर्तियाँ इसी भाँति खडी समभग में बनती ह। इन्हें वे कायोत्सग आसन में खडा करते ह। आभग में प्रतिमा का मस्तक से नाभि तक का भाग दक्षिणा की ओर झुका रहता है। त्रिभग में नीचे का भाग नाभि से एडी तक दाहिनी ओर झुका रहता है तथा बीचका शरीर बाई ओर और ग्रीवा तथा मस्तक दाहिनी ओर। अतिभग त्रिभग का उग्र रूप ही समझना चाहिय। और एक ढग खडे होने का है जिसमें दाहिना पैर आग बढा रहता है और बायाँ पीछे की आर रहता है। इसे आलीढासन कहते ह। जब बायाँ पर आग रहता है और दाहिना पीछ तो उसे प्रत्यालीढ आसन कहा जाता है। इस प्रकार खड होने पर शरीर तिरछा रहता है जिससे चलन का भास होता है। नत्य के विविध प्रकार के आसन होते ह जो भरत नाटयशास्त्र म विशष रूप से वर्णित ह तथा चिदम्बरम के मन्दिर के गोपुर की भीत पर दिखाय गय हैं। बठी हुई मूर्त्ति के आसनो के भद अहिबुध्न्य सहिता म अध्याय ३० म दिये हुए ह, उसमें ग्यारह मुख्य ह—चक्र पद्म कूम मायूर, कक्कुट वीर, स्वस्तिक भद्र सिंह मुक्त तथा गोमुख। कूम आसन का इस सहिता में जो विवरण प्राप्त हाता है उसके उसे याग आसन भी कह सकते ह।

गूढ निपीडय गुल्फाभ्याम व्युत्क्रमेण समाहिता। एतत कर्मासनम प्रोक्त यागसिद्धिकरम् परम्॥'

इस प्रकार का आसन सवप्रथम मोहनजोदडो से प्राप्त एक मोहर पर अकित शिव के बठने के ढग में दिखाई देता है। पद्म आसन को इस सहिता में उर्वोरुपरि सस्थाप्य उभ पदतल सुखम् कहा है। इस आसन में सारनाथ से प्राप्त बुद्ध की मूर्ति सभी न देखी है। कुक्कुट आसन म पद्म आसन लगाकर दोनो हाथ पथ्वी पर रख कर शरीर के नीचे के भाग को अधड म उठा लिया जाता है। वीर आसन के दो भेद होते ह, एक तो

१ वाराहमिहिर – बहत्सहिता – अध्याय ५७ – ३३ से ३५ तक।

२ वाराहमिहिर – उपयुक्त – अध्याय ५७, पृष्ठ ७००।

सवज्ञात है जिसमें उकडू बठ कर बाया पर मोड कर नितम्ब के नीचे रख लिया जाता है और दाहिना पर शरीर की सिधाई में मोडकर छाती से लगा लिया जाता है। दूसरा आसन जो अहिबध्न्य सहिता म वर्णित है उसमें जघो को मिला कर बायें पर को दाहिने जघ पर और दाहिने पर को बाय जघ पर रखा जाता है।

एकत्रीणीति सस्थाप्य पादमेकमथेतरम्।
असम पादे निवेश्यतद वीरासनमुदाहृतम ।

भद्रासन में दोनो एडिया गुदा के नीचे रखकर पर के दोना अँगूठा का दाना हाथा स नाभि की ओर खीच कर रखा जाता है। सिंह आसन में कूर्मासन की भाँति एक पर को दूसरे के ऊपर रखकर हथली को जघो पर रखा जाता है तथा उगलिया सीधी रहती ह, पातजल योगसूत्र का व्यास ने जो भाष्य किया है उसमें तेरह मरय यौगिक आसनो के नाम गिनाय ह पद्म आसन वीर आसन भद्र आसन स्वस्तिक आसन दण्ड आसन, शोपाशय पयक क्रौच निषदन हस्तिनिपदन उष्ट्रनिपदन, समसमस्थान स्थिर सुख तथा यथासुख। यो प्राय चौरासी यौगिक आसन गिनाय जाते है तथा आज भी योगी लाग इन्ह दिखाते ह। मूर्तिकला मे नत्य के आसनो का छाडकर प्राय पद्म आसन वीर आसन याग आसन सुखासन, अर्ध-पयक तथा पयक आसन दिखाय जाते ह, क्योकि और दूसरे आसना को पत्थर म काटना उतना सरल नही होता। अध पर्यंक म एक पर मुडा रहता है और दूसरा आसन के नीचे लटका रहता है। पयक म दोना पर नीचे लटके रहते ह। लेट हुए आसनो म शयन तथा अध शयन दो भेद मिलते ह इन दाना शयन और अध-शयन म वाम कक्ष शयन और दक्षिण कक्ष शयन आसन मूर्तियो में प्राप्त होते ह। देवगढ की विष्णु की मूर्ति वाम-कक्ष शयन आसन में है।[1] लक्ष्मी की मूर्ति प्राय खडी अथवा अध पयक या पद्म आसन मे बठी मिली है।

आसन का अथ कई ग्रथकारो ने उस वस्तु का भी किया है जिस पर प्रतिमा स्थित होती है परतु इसका पीठ कहना अधिक उपयुक्त होगा, जसे पद्म पीठ सिंह पीठ इत्यादि। इसके निर्माण का विशद विवरण मत्स्य पुराण में मिलता है।[2] इस पुराण के अनुसार पीठ को सोलह भागा में विभाजित करके इसके एक भाग का पृथ्वी में धँसा कर बनाना चाहिय। जगाती चार भाग म बनानी चाहिय। उसके ऊपर का वत्त एक भाग ऊचा होना चाहिय तथा उसके ऊपर पटल भी उतना ही ऊचा होना चाहिय। पटल के ऊपर कण्ठ तीन भाग ऊँचा होना चाहिय और कण्ठ पीठ अर्थात कण्ठ के ऊपर के भाग को भी तीन भाग ऊचा बनाया जाना चाहिय। ऊर्ध्व पट्ट कण्ठ पीठ के ऊपर के भाग को कहते ह। यह दो भाग ऊँचा होना चाहिय तथा उसके ऊपर की पीठिका एक भाग ऊँची हो। पिटिठका के समकक्ष उसी धरातल म प्रणालिका बननी चाहिये जो कदाचित मूर्ति क स्नान के जल को बाहर निकालने के हेतु बनाई जाती है। मत्स्य पुराण म दस प्रकार के पीठा का विवरण प्राप्त होता है, जिन पर विविध देवताओ की प्रतिमाओ के रखन का विधान है। इनके नाम ह—साण्डिला वापी यक्षी वेदी मण्डला पूण चन्द्रा वज्रा पद्मा, अर्धशशी, त्रिकोण।[1] (यक्षा पर स्थित भारहुत से प्राप्त हुई प्रतिमाए है,) जो कदाचित कुबर तथा उनके रानी की अथवा लक्ष्मी की हो सकती हैं।)

इस प्रकार पीठो पर स्थित प्रतिमाआ के अतिरिक्त प्रतिमाआ के दिखान का विवरण भी हम पुराणा मे मिलता है। कुछ प्रतिमाए उडती हुई दिखाई गई ह। उनमे विशष रूप से गधर्वों की मूर्तिया हमें मिलती ह। विष्णु धर्मोत्तर पुराण मे विद्याधरो को इस प्रकार दिखान का निर्देश प्राप्त होता है—

---

१ स्टेला क्रामरिश – दी आट आफ इण्डिया थ्रू दी एजज – प्लट ३२।
२ मत्स्य पुराण – अध्याय २६२ – १ से ४।
१ मत्स्य पुराण – अध्याय २६२ – ६ से १८।

'रुद्रप्रमाणा कत यास्तया विद्याधरा नप ।
सपत्नीकाश्च ते कार्या माल्यालकारधारिण ॥
खडगहस्ताश्च ते कार्या गगन वाथवा भुवि ।'[1]

प्राचीन मध्य युग के मूर्तिकारो म विद्याधरो को ग धर्वों से अलग देवता के बगल में दिखाया है और ग धर्वों को कीर्तिमुख के दोनो ओर । मानसार म विद्याधरो को उडते हुए ही दिखाने का निर्देश प्राप्त होता है—

पुरत पृष्ठपादौ च लाङ्गलाकारा वेपच ।
जा वाश्रितौ हस्तौ गोपुरोद्धतहस्तकौ ॥
एव विद्याधरा प्रोक्ता सर्वाभरणभूषिता ।"

इन श्लोको म पदा की स्थिति ठीक ठीक वर्णित है । दोनो पर मुडे हुए, एक कुछ आग दूसरा उससे पीछ । मानसार में ग धर्वों को वीणा इत्यादि बजाते हुए खड दिखान का निर्देश है—

'नृत्य वा वनव वापि वशाख स्थानक तु वा ।
गीतवीणाविधानश्च ग धर्वाश्चेति कथ्यते ।
चरणम पशुसमान चो र्वकाय तु नराभम ॥
वदन गरुडभावम बाहुकौ च पक्षयुक्तौ" ।

इसके अतिरिक्त और भी देवता गगनचारी मूर्तियो में दिखाय गय ह जैसे देवगढ के म दिर के अनन्तशयन विष्णु के ऊपर की ओर हर पावती इ द्र कार्त्तिकेय अपन अपन वाहन। पर अ तरिक्ष म स्थित ह ।

मूर्तियो को जल में अग्नि के बीच मे तथा आकाश में दिखाने की विविध मान्यताए हम विविध मूर्तियो में प्राप्त होती ह । आकाश मे बादल दिखान के हेतु गोल बिन्दु बनाय गय ह या कुछ उठा हुआ स्थान कही कही बिना काट छोड दिया गया है जैसा गा धार कला म श्याम जातक की कला दिखाते हुए कारीगर ने छोड दिया है[3] (यह पाषाण खण्ड इण्डियन म्युजियम कलकत्त में है) । जल की तरङ्गें दिखान का प्रयत्न समुद्र की लहर। को उभाडदार बडी घु घराली चौडी रेखाओ द्वारा किया गया है । कभी कभी इसमे साप भी दिखाय गये है, जसा प्राय वरुण, विष्णु और लक्ष्मी की मूर्तिया के पीठ स्थान पर हम प्राप्त होते ह[4]। अग्नि को दिखान के हेतु ज्वाला उभाडदार ऊपर की ओर जाती हुई त्रिकाण चौडी रेखाओ से दर्शाते थ ।

विभिन्न देवताओ के आयुधो के विषय में विशिष्ट निर्देश हमे ग्रथा में प्राप्त होते ह जसे विष्णु के हाथ में शख, चक्र, गदा पद्म का होना आवश्यक है । कामदेव के हाथ में धनुष बाण इ द्र के हाथ मे अकुश तथा वज्र, बलराम जी के हाथ में हल-मूसल[5], शिव के हाथ में त्रिशूल परशुराम जी के हाथ में परशु तथा धनुष होना आव श्यक है । गणश के हाथ में अकुश का । आयुधो के साथ-साथ विशेष देवी देवताओ के हाथ विशिष्ट वस्तुओ का का भी होना नितान्त आवश्यक है, जैसे शिव के हाथ में डमरू, सरस्वती के हाथ मे वीणा तथा पुस्तक, ब्रह्मा

---

१ विष्णु धर्मोत्तर पुराण – खण्ड ३ अध्याय ४२ – ६, १० ।

२ मानसार – पृष्ठ ३७०, श्लोक ७ ६ ।

३ एन० जी० मजूमदार – ए गाइड टू दी गा धार स्कल्पचस इन दी इण्डियन म्युजियम – भाग २, पृष्ठ १०७ ।

४ जे० एन० बनर्जी – डेवलपमेण्ट आफ हि दू आईकोनोग्राफी – प्लेट २३–२, योगासन विष्णु मथुरा (प्राचीन मध्यकालीन) ।

५ वाराहमिहिर – बृहत्संहिता – अध्याय ५७–३६ ।

वती के पाषाण खण्डो पर खुदे हुए स्त्री-पुरुषो के मस्तक पर दिखाई देता है। मुकुट भी साची में खुदे हुए इन्द्र के मस्तक पर है। ओपश श द बन्दी के हेतु व्यवहार म आता था और केश को ऊपर से पहिना जाता था और मस्तक के अग्र भाग से पीछे की ओर जाता था। ललाटिका श द पाणिनि मे प्राप्त होता है।[१] यह आधुनिक बना का प्राचीन स्वरूप है तथा स्त्रिया इसे ललाट पर धारण करती थी। उसका भी प्राचीन स्वरूप हमें भारहुत की मूर्तियो के मस्तक पर प्राप्त होता है।

कान म कई प्रकार के आभूषणो के नाम प्राचीन ग्रथो में आते ह--ऋग्वेद में 'कणशोभना' शब्द मिलता है।[२] पाणिनि में कर्णिका श द प्राप्त हाता है।[३] कणशोभना का आधुनिक रूप बगाल का कानपाशा है। कर्णिका कान की तरकी की भाति होती थी जिसका एक स्वरूप हारिति के आभूषणो में स्पष्ट दिखाई देता है।[४] कर्णोत्पल[५] तथा कुण्डल श द अश्वघोष मे प्राप्त होता है। कर्णोत्पल पत्तियो के आकार का बना झुमके की भाति का कान का आभूषण होता है, जो हमें कौशाम्बी से प्राप्त लक्ष्मी के कान में दिखाई देता है। कुण्डल विविध भाँति के कान से लटकते हुए आभूषण को कहते ह। ग्रीवा के आभूषणो में गल से सटी हुई टीक को कण्ठसूत्र अश्वघाप न नाम दिया है।[६] इससे नीचे के भाग में पहिनन के आभूषणो को रत्नावली तथा हार कहते थे, जिनमें स्तन भिन्न हार[७] हारयष्टि[८], विलम्ब हार के नाम अश्वघोष के ग्रन्था में प्राप्त होते ह। हाथ के आभूषणो में वलय कडा या ककण के स्थान पर पहिना जाता था तथा अगद और केयूर बाहु पर पहिन जाते थे। ये नाम अश्वघोष के ग्रथो मे मिलते ह। अगद प्राय गोल होता था जसा आज का अनन्त है, परन्तु केयूर बाजू की भाति का होता था, इसके बीच में एक टिकडा लगा रहता था। करधनी का नाम रसना अश्वघोष में मिलता है। इसके विविध नाम तथा अलग अलग करधनियो के विवरण भरत नाटयशास्त्र में भी प्राप्त होते ह (अध्याय २७)। पर में नूपुर पहिना जाता था। एक प्रकार के उमेठुआ पायजब को योक्त्र नूपुर कहते थ।[९] इस प्रकार के आभूषणो की प्राचीन सूची भरत के नाटयशास्त्र म मिलती है।[१०] अँगूठी के हेतु अगुलीय तथा मुद्रा इत्यादि नाम भरतनाटच शास्त्र में मिलते ह।[११] इसका स्वरूप हमें भारहुत के कुबर के दाहिन हाथ की उँगली पर दिखाई देता है।

प्राय प्राचीन भारतीय प्रतिमाओ पर वस्त्र का अभाव है केवल अधोवस्त्र तथा उष्णीष दिखाय गये ह। कई प्रतिमाओ पर उत्तरीय भी मिलता है। देवियो की प्रतिमाओ पर स्तन पट भी दिखाई देता है।

१ डा० वासुदेव शरण अग्रवाल – पाणिनि कालीन भारतवर्ष पृष्ठ २२७।
२ कीथ एण्ड मकडोनल – वदिक इण्डेक्स, खण्ड १, पृष्ठ १४०।
३ डॉ० वासुदेव शरण अग्रवाल – उपर्युक्त – पृष्ठ २२७।
४ गोविन्दचन्द्र – दी पारयर आफ दी बुद्धिष्ट गाडेसेज आफ कौशाम्बी मजारी – मई १९५९ – प्लेट ४ सी।
५ अश्वघोष – सौन्दरानन्द – ४ – १६। कर्णोत्पल – कौशाम्बी से प्राप्त लक्ष्मी के कान में – फलक १२।
६ वही – बुद्धचरित – ५ ५८।
७ वही – सौन्दरानन्द – १० ३७।
८ वही – उपर्युक्त – ४ १९।
९ वही – उपर्युक्त – अध्याय ४, १७।
१० भरत नाटयशास्त्र – अध्याय २३।
११ भरत नाटयशास्त्र – २३, १७।

भारत प्राय उष्ण देश होने के कारण यहाँ जनसाधारण बहुत वस्त्र नही पहिनते थ । इस कारण भी देवी देवताओ की मूर्तियो पर बहुत से वस्त्र नही मिलते । यो भी प्राय हमारे यहा वस्त्र दवी देवताआ को ऊपर से ही पहिनाये जाते ह ।

कुछ ग्रथो में, जैसे भरत नाटयशास्त्र, मत्स्य पुराण शुक्र नीतिसार प्रतिमानलक्षणम वाराहमिहिर की बृहत सहिता शिल्प रत्न और मानसार म, प्रतिमाआ के नाप-जोख इत्यादि के विपय म उस काल की बहुत सी सामग्री मिलती है परन्तु यह ध्यान रखन योग्य बात है कि प्राय प्रतिमा के गढनवाल आज भी निरक्षर पडित ह परन्तु फिर भी बडी सुन्दर सुन्दर मूर्त्तिया बनाते ह । इससे यह अनुमान करना कुछ अनुचित न होगा कि आदिवासियों के आत्मज मूर्तियो के कलाकार इतन बड सस्कृतज्ञ नही रहे हाग कि शास्त्रा की सहायता लेकर प्रतिमा गढ़ते । पहिल तो इनको सस्कृत भाषा आर्यों से प्राप्त नही हाती थी जिसस य इन ग्रथा को पढते क्योकि य अनाय थे । दूसरे इनके हृदय में सस्कृत के प्रति द्वष का भी हाना अनिवाय था और सिन्धु घाटी की सभ्यता के मूर्तिकारो के पास कोई सस्कृत का ग्रथ होना सम्भव नही है । इससे यह प्राय निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि य मान्यताएँ शास्त्रो में ही बनी रही और इनको कभी व्यावहारिक रूप मूर्तिकारा न नही प्रदान किया । यो भी मूर्तिकार या चित्रकार अपन को शास्त्रीय बन्धना म बाधकर कोई उत्कृष्ट रूप उत्पन्न नही कर सकता । जे० एन० बैनर्जी ने बहुत श्रम करके इन नामो से मूर्तियो के नामो का मिलाया है परन्तु यह काय स्तुत्य होन पर भी बहुत उपयोगी नही सिद्ध हो सकता[1], क्योकि कला का कविता की भाँति सजन सदव पहिल होता है और शास्त्र का व्याकरण की भाति पीछे ।

ऐसा अनुमान है कि शिल्पियों की अपनी मान्यताएँ थीं, जो पिता से पुत्र का प्राप्त होती थी । इन मान्यताओ के विषय म ऋषियो न जो पता लगाया । उन्होने उसे लिपिबद्ध किया । इन लिपिबद्ध मान्यताओ की परम्परा अलग से चल पडी । इस प्रकार भारत मे दो प्रकार की मान्यताएँ चली—एक शास्त्रज्ञो की तथा दूसरी शिल्पियो की । शिल्पियो में भी अलग अलग घरान थे, जिनकी अपनी अलग अलग मान्यताएँ थी, फिर भी कलाकारो को स्वरूप के सृजन में बराबर छूट रही ।

शुक्रनीतिसार के अनुसार (जो प्राचीन भारत के मध्ययुग का ग्रन्थ माना जाता है) सभी शिल्पी सुन्दर प्रतिमाएँ नही बना सकते थे । इस कारण "शास्त्रमान्यन यो रमय स रमयो नान्यवहि । परन्तु इसम सन्देह है कि शिल्पी इन ग्रथो का सहारा लेते थे । इसी प्रकार की मान्यता जो मिश्र म भी उसके अनुसार एक खडी मूर्ति को १८ चतुष्कोण में बाँटते थ । य चतुष्कोण आख के ऊपर की रेखा भ्रू के पास समाप्त हो जाते थे । उनके ऊपर के भाग को कलाकार चाहे जसा बनाता था ।[2] यूनान में भी शरीर की नाप की अपनी मान्यताएँ थी, जिनका पालन शिल्पी कठोरता से करते थ । ये मान्यताएँ पीछे चलकर लिपिबद्ध कर ली गई ।[3] यूनान के इन कलाकारो न मनुष्यो की ही मूर्त्तिया नही बनाई अपितु देवताओ की भी जसे जीसस हेरा अफोडाइट इत्यादि । परन्तु इनको बनाने में इन्होन वे ही मान्यताए थी जो यूनान के पहलवानो के शरीर की इन्हान प्रत्यक्ष रूप से पाई थी । हमारे यहाँ उपासको की मूर्तियाँ बनी, परन्तु उन मूर्तिया में तथा देव-मूर्तियो मे बराबर भद रहा । प्रतिमाओं के दानकर्त्ताओ की मूर्तियाँ जब भी कलाकारो न बनाने का प्रयत्न किया तो उनकी आकृतियो में सादृश्य लाने का भी प्रयत्न किया है, जसा हम कार्ली की गुफा के बाहर बने हुए राजा तथा रानियो की

---

१ जे० एन० बैनर्जी – डेवलपमेण्ट आफ हिन्दू आइकोनोग्राफी–अपेण्डिक्स 'सी' ।

२ जीन कापाट – ईजिप्शियन आट – पृष्ठ १५६ ।

३ जे० एन० बनर्जी – उपयुक्त–पष्ठ ३०८, ३०९ ।

मुखाकृति म देखते ह । परन्तु देवी देवताओ की मुखाकृतियाँ तो एक निश्चित मान्यता के आधार पर बनती रही[1] चाहे वे मनुष्य की मुखाकृतियो से ही मिलती हो, क्योकि मनुष्य न अपन ईश्वर को अपन ही स्वरूप के अनुरूप निर्माण किया चाहे वह यूनानी हो या मिश्री हो अथवा भारतीय परतु भारत में अपने देवी देवता की प्रतिमा बनाते समय उसन कुछ विशिष्ट चिह्नो का उपयोग किया जसे पद्म दलायताक्षी वषभस्कध केहरि कटि प्रलम्ब बाहु इत्यादि । हथली मे सामुद्रिक रेखाय भी वे ही दिखाई गयी जो ज्योतिष के विचार से विशिष्ट पुरुपो के हाथ म पायी जानी चाहिये । पद तल मे अकुश पताका चक्र इत्यादि दिखान का भी शिल्पी न प्रयत्न किया है । केवल उन्ही देवी और देवता का विकृत रूप इसन उपस्थित किया जिनसे मनुष्य भय खाते थ ।

भारत में पुरुष तथा स्त्रिया को चार चार श्रणियो म विभक्त करन का प्रयत्न वात्स्यायन के कामसूत्र म मिलता है परतु य मायताएँ प्राय आय नागरिको के लिए ठीक समझी गयी थी । महाभारत के शान्ति पव म भीष्म द्वारा वर्णित मनुष्या की आकृति इत्यादि के विविध भदो को देखन से एसा पता चलता है कि उस काल तक भारत म विभिन्न जातियो का मिश्रण हो चुका था और उनके शरीर की नाप अलग अलग दष्टिगोचर होने लगी थी। इस कारण बृहत सहिता में वर्णित पाच प्रकार के मनुष्य—यथा हस शश, रुचक भद्र तथा मालय के शरीरो की नाप[1] केवल परिकल्पित ज्ञात होती है, क्योकि इस प्रकार का वर्गीकरण तो एक ही जाति के पुरुषो में सम्भव है । इससे मूर्तियो का सम्बध जोडना भ्रामक होगा, जसा ज० एन० बनर्जी न करने का प्रयत्न किया है ।[2] प्राय यह धारणा कि मनुष्य पहिले बहुत दीघकाय होता था अब छोटा होता जाता है–जैसा मत्स्य पुराण में लिखा है कि सतयुग में देवता राक्षस तथा मनुष्य की लम्बाई ९६ अगुल होती थी, परतु कलियुग में केवल अगुल होती है भ्रामक है । परतु इसके साथ यह भी मानना ही पडगा कि हमारे शिल्पियो न प्राय अनादि काल से अपन देवी देवताओ का मनुष्यो से दीघकाय बनाया है जिसमे हमारा ध्यान उन विशिष्ट प्रतिमाओ पर ही केंद्रित हो, जैसा अतर हम अनतशायी देवगढ़ के विष्णु के उपासको तथा विष्णु की प्रतिमा में पाते ह[4] या पुरी के कार्तिकेय तथा उनकी पारषद मडली मे देखते ह ।[5] यह अन्तर थोडा नही बहुत है ।

वाराहमिहिर के अनुसार दिय प्रतिमाओ के हेतु—

मालयो नागवास समभुजयुगलो जानुसम्प्राप्तहस्ता
मास पूर्णाङ्गसधि समरुचिरतनुमध्यभागे कृशश्च ।
पञ्चाप्तौ नोर्ध्वमास्य श्रुतिविवरमपि त्र्यङ्गुलोनाम च ।
त्र्यग दीप्तीक्ष सतकपोल समसितदशन नातिमासाधरोष्ठम ।।"

वैश्वानस आगम के अनुसार छ प्रकार की नापें ह—मान उपमान प्रमाण उन्मान परिमाण तथा लम्बमान । मान शरीर की ऊँचाई का प्रमाण है एक ही तल की चौडाई की उनमान मोटाई को परिमाण चारो ओर की, उपमान है भीतर की गहराई की लम्बमान सूत डाल कर ऊपर से नीचे तक प्रतिमा की विविध नाप है । 'मान',

---

४ ए० एन० टगोर – सम नोटस ऑन इण्डियन आर्टिस्टिक अनाटोमी, पृष्ठ ३ ।
१ वाराहमिहिर – बहत सहिता – अध्याय ६८ – १, २, ७ ।
२ ज० एन० बनर्जी – डेवलपमेण्ट ऑफ हिदू आइकोनोग्राफी पृष्ठ ३११ ३१२ ।
३ मत्स्य पुराण – अध्याय १४५ । फ्रास के ग्रिमाल्डी गुफा का मनुष्य जो प्राय आठ हजार वष प्राचीन है, उसकी लम्बाई ५ '४' से अधिक नहीं है ।
४ जे० एन० बनर्जी – उपयुक्त – प्लेट २२–२ ।
५ वही — उपर्युक्त – प्लेट १७–१ ।

उनमान' तथा 'प्रमाण' शब्द महावीर के शरीर के नाम के विवरण में जन कल्पसूत्र म भी मिलते आते हु[1]। अगुल तथा ताल शब्द भी सहिताओ मे मिलते हु। अगुल श-द मूर्ति कला के काय में सब से छाटी माप है[2]। यह श-द शुलभसूत्र मे भी वेदी बनान के माप के सिलसिल में -यवहार हुआ है। बहृत सहिता के अनुसार आठ यव की चौडाई एक अगुल के बराबर होती है[3]। यही माप भरत नाटयशास्त्र में भी मिलती है। इस कारण इस माप को कपोल कल्पित नही मानना चाहिय। आज भी अगुली की नाप, अगुली के सिरे से लकर अगुली के एक पोर तक मानी जाती है। इसको आठ यव की चौडाई के बराबर मान कर चलना कुछ अनचित नही है। श्री जे० एन० बनर्जी का मत है कि इस प्रकार रख हुए जी की चौडाई बहुत हो जाती है[4], कुछ उचित नही जँचता। पीछ के शास्त्रकारो में मानागुल, मात्राकुल, देहल-दागुल इत्यादि श-दा का रचकर अपनी बात को पुष्ट करने का उद्योग किया है। शुक्र नीतिसार मे अगुली की माप अपनी मटठी का चौथा भाग कहा गया है[5], "स्वस्वमुष्टेश्चतुर्थांशो ह्यङ्गुल परिकीर्तितम'। प्रतिभामान लक्षणम मे अगुली का माप बनाने में मुष्टि के स्थान पर पल्लव श-द का व्यवहार किया गया है, पल्लवाना चतुर्भागा मापनाङ्गुलिका स्मता"। पल्लव का अथ हाथ की हथली से भी किया गया है परन्तु यह स्पष्ट नही हाता कि किसकी मुटठी किसके हाथ की हथेली और फिर प्रत्येक मनुष्य की हथली तथा मटठी के नाप म भी अतर होता है इस कारण भी यह प्रमाण सव उपयोगी नही हो सकता। ल-धागुली का प्रमाण इस प्रकार प्राप्त हाता है कि जिस पदाथ की मूर्ति बनाना है उस लकडी अथवा पत्थर की ऊँचाई को बारह बराबर भाग म बाट कर उसके एक भाग को लकर फिर उसके नौ भाग करके एक भाग की अँगुली का माप मान लिया जाय। इस मा-यता से अलग अलग ऊँचाई के पत्थर और लकडी के लिय अलग अलग माप निर्धारित करने की आवश्यकता नही पडती और आवश्यकता-नुसार छोटी बडी मूर्तियो का बनाना कठिन नही होता। ज० एन० बनर्जी का मत है कि १०८ अँगुलिया की मूर्विया प्राय बनती थी। ताल मूर्ति के विभाग को कहते थ। इस कारण इन १०८ अँगुली की मूर्तिया का नव ताल मूर्तियाँ कहते थे। वाराहमिहिर के अनुसार एक हाथ की मूर्त्ति शुभ है दा हाथ की मूर्ति से धन धा-य का लाभ होता है।[6] मूर्ति की ऊँचाई मूर्ति के आसन से दूनी हानी चाहिय। पीठिका द्वार का एक तिहाई से एक बटे आठवाँ भाग कम होगा अर्थात् द्वार को आठ भागो म बाँट कर उसका एक भाग लकर इस एक तिहाई भाग मे कम करना है, जसे द्वार यदि ६ फुट का है तो आसन दो फुट म स ८ इच कम अर्थात १ ३ का हाना चाहिये और प्रतिमा २ फुट ६ इच की होगी। मत्स्य पुराण के अनुसार घर म स्थापित करन की मूर्ति एक अँगूठ से लकर बित्त भर से अधिक बडी नही होनी चाहिय[7] तथा म-दिरो म स्थापित हान वाली मूर्तिया १६ अगुल से अधिक बडी नही होनी चाहिये। प्रवेश द्वार की ऊचाई को आठ भाग म विभाजित करके उसके एक भाग को छोडकर जो शष बचे उसके दो भाग के नाप की जितनी लम्बाई की प्रतिमा बनानी चाहिय। बचे हुए भाग मे तीन भाग करके एक भाग की ऊँचाई की पीठिका बनाई जाय। इस प्रकार यदि ६ फट का द्वार हुआ तो

---

१ जकोबी — सेक्रेड बुक्स आफ दी ईस्ट सीरीज – खण्ड २२ पष्ठ २२१।
२ जे० एन० बनर्जी — उपर्युक्त – पृष्ठ ३१६।
३ वाराहमिहिर — अध्याय ५७ – १७२।
४ जे० एन० बनर्जी — उपयुक्त – पष्ठ ३१७।
५ शुक्र नीति शास्त्र — अध्याय ४ खण्ड ४ ८२।
६ बृहत् सहिता — अध्याय – ५७–१६।
७ मत्स्य पुराण — अध्याय – २५८–२२, २३।

उसको ८ से विभक्त करन से ९ इच का एक भाग हुआ। ९ छाडकर ६४ बचा, इसका दो भाग ४२ ⅔ इच हुआ इतनी ऊँचाई की प्रतिमा हानी चाहिय। इसमे स बचा २१ ⅓ इच इसका ⅓ भाग हुआ ७ ⅑ इच इतनी ऊँचाई की पीठिका हानी चाहिय।[1] यह पीठिका कई प्रकार की होती है स्थण्डिला वापी, यक्षी, वेदी मण्डला पूण चन्द्रा वज्रा पद्म अद्धशशि तथा त्रिकाण। हिसाब स प्रतिमा का नव भाग मे विभक्त कर के एक भाग मे मुख चार अगुल म ग्रीवा एक भाग म हृदय एक भाग म नाभि नाभि के नीचे एक भाग में लिंग दो भाग म जघा चार अगुल के घुटन पर तथा चौदह अगल की मौली होनी चाहिय।[2] (अब इस नाप में दो हिसाब होन के कारण कुछ गडबडी पडती है एक ओर तो भाग का हिसाब दूसरी ओर अगुल का चौडाई का विवरण देते हुए मत्स्य पुराण म लिखा है कि चार अगुल का ऊँचा ललाट तथा चार ही अगुल ऊँची नासिका दा अगल ऊँची ठुडढी, दो अगल ऊचे ओठ एक अगुल ऊची आख तथा चार अगुल विस्तार का कान होना चाहिय। आठ अगुल चौडा ललाट होना चाहिय तथा उतन ही विस्तार की भौह होनी चाहिए। भाहा की रेखाए आधी अँगुली माटी हानी चाहिय जा धनुप की भाँति वक्र हानी चाहिय। दोनो भौहो के अग्र भाग ऊपर की ओर उठ रहने चाहिय दाना भौहा के बीच दा अगुल का अन्तर हाना चाहिय। आख की नासिका से कनपटी तक दो अगुल लम्बाई होनी चाहिय तथा उसके म य भाग में ऊचाई हानी चाहिय, जहाँ (पुतली बनानी चाहिय)। तारे के आध भाग से पँचगुनी दष्टि बनानी चाहिय। नाक दो अगुल चौडी होनी चाहिये। उसके आग के दो छिद्र आध आधे अँगुली के हाल चाहिय तथा आग की ओर झुके रहन चाहिये। कपोल दो अगुल चौड हू। तथा कनपटी तक फन हुए हू। । अधराष्ठ की चौडाई आधी आधी अगुली होनी चाहिये। इसके बीच के भाग को ज्योति की भाँति बनाना चाहिय। इनको कान के मूल से छ अगुल दूर बनाना चाहिय। कानो की बनावट भौह के आकार की होनी चाहिय। काना के बगल में दो अगुल का रिक्त स्थान छोडना चाहिये। ललाट प्रदेश के पीछ मस्तक के आध भाग का १८ अगुल का बनाना चाहिय। इस प्रकार सारे मस्तक की गोलाई ३६ अगुल हानी चाहिये तथा कश समेत ४२ अगुल। ग्रीवा की चौडाई ८ अगुल होनी चाहिय। स्तन और ग्रीवा का अन्तर एक ताल बताया गया है (एक ताल अगूठ से लकर मध्यमा अगुली तक) दानो स्तनो का निर्माण १२ अगुल में होना चाहिय दाना स्तनो के मण्डल दा दा अगली के हान चाहिय। चुण्डी एक जौ के बराबर होनी चाहिय। वक्षस्थल की चौडाई दो ताल की दाना कक्ष प्रदेश ६ अगुल जिन्ह बाहुओ के मूल म तथा स्तना की सिधाइ म बनाना चाहिय। दोनो पर चौदह अगुल के तथा दानो अगूठ दो या तीन अगुल के होन चाहिये। अँगूठ का अग्रभाग उन्नत रहना चाहिय तथा पर का विस्तार पाँच अगुल का होना चाहिये। प्रदेशनी अगुली अगूठ की भाति ही लम्बी बननी चाहिय। इस अँगुली से मध्यमा अगुली १⁄₈ भाग लम्बी होगी। अनामिका मध्यमा से ⅛ भाग छोटी होगी। इसी प्रकार कनिष्ठिका अनामिका से ⅛ भाग छोटी बननी चाहिय। पर की गाठ दो अँगुली म तथा दानो एडिया दो दो अँगुली मे हानी चाहिय। अँगूठ म दो पोर बनाना चाहिय। अँगूठे की चौडाई एक अगुल की लम्बाई दो अगुल, प्रदेशनी आधे अगुल चौडी और तीन अगुल माटी हानी चाहिय इसी प्रमाण से दूसरी अँगुलिया भी बननी चाहिय।[3] इसी प्रकार मत्स्य पुराण में विभिन्न अगा की मोटाई भी दी हुई है।[4] इस विवरण के अनुसार देवताओ से देवी प्रतिमाओ का

---

१ वही — अध्याय – २५८–२५ – पट्टिका – वही – २६२ ६, ७।
२ वही — अध्याय – २५८–२६, २७, २८, २९।
३ वही — अध्याय २५८ – ३१ ५१।
४ वही — अध्याय २५८ – ५३ ६९।

जमे लक्ष्मी की प्रतिमा का कुछ दुबल बनाना चाहिय परन्तु इनके स्तन ऊरु तथा जघे देव प्रतिमाओ से अधिक स्थूल रखन का निर्देश मिलता है। इनके उदर प्रदेश की लम्बाई १४ अगुल होगी। भुजाए मृदुल होनी चाहिये अर्थात उनम मुष्टिका उभडी हुई न होनी चाहिय मखाकृति अपक्षाकृत लम्बी बनानी चाहिय। अलकावली लम्बी रहनी चाहिय। नासिका ग्रीवा एव ललाट ३½ अगल ऊच रखना चाहिय। अधर का विस्तार आधे अगुल का होना चाहिय। दात नत्र अधर स चार गुन अधिक नम्र होन चाहिय एव ग्रीवा की एक एक बलि आधा अगुल ऊँची होनी चाहिय। इन प्रतिमाओ का आभषणो स सुसज्जित करना चाहिय।[1] विशष रूप से लक्ष्मी की कुछ इसी से मिलती जुलती मान्यताएँ बृहत्सहिता क ५७ व अध्याय म प्राप्त होती ह तथा प्रतिमा मान लक्षण मे भी।[2]

प्राय सभी देव प्रतिमाए हमारे यहा प्रसन्न वदन बनाइ जाती ह। लक्ष्मी तो विशष रूप से क्योकि हमारे यहा कहा गया है कि प्रसन्न वदनम् ध्यायत सवविघ्नोपशान्तय। आख प्राय सामन देखती हुई रहती थी[3] केवल ध्यान मुद्रा म आख नासाग्र पर केद्रित दिखाई जाता ह। आकाश की ओर जिस प्रतिमा की आखे बनी हो उनको अशुभ मानते ह। य कुछ मान्यताए हमारे सुख प्रदाता सभी देवी देवताओ की प्रतिमा बनाने म काम आती रही ह। केवल रौद्र तथा भयानक रसो को उत्पन्न करनवाली प्रतिमाओ की मुखाकृति भिन्न रहती थी। विविध देव प्रतिमाओ क हेतु विविध रग के पत्थर भी व्यवहार किय गय ह जसे श्याम रग के पत्थर कृष्ण अथवा विष्ण की मूर्तियो के बनान के हेतु तथा श्वेत रग के पत्थर लक्ष्मी या सरस्वती की प्रतिमा के हेतु।

या प्रतिमा बनान की मान्यताओ के विवरण विशष रूप से ज० एन० बनर्जी द्वारा प्रकाशित समयक सम्बुद्ध भाषित प्रतिमा लक्षणम म हाडवे के ए नोट आन सम इण्डियन शिल्पशास्त्र"[4] में गोपीनाथ राव के दक्षिण के उत्तम दशताल विधि म, बृहत्सहिता में शुक्रनीति में अशमद भदागम में कर्णागम में वखानस आगम मे विष्णु धर्मोत्तर पुराण म[5] तिब्बत के दशताल न्यग्रोध परिमण्डल बुद्ध प्रतिमा नाम मे सम बुद्ध भाषित प्रतिमा लक्षण विवरण नाम[7] नग्न जी द्वारा विरचित चित्र लक्षण म प्रतिमा मानलक्षणनाम मे ब्रह्मयामल में[8] पिंगला-मत मानसोल्लास में मानसार मे तथा शिल्प रत्न[9] इत्यादि मे प्राप्त होते ह। इन ग्रथो की मान्यताएँ एक-सी नही ह। इनमें स्थान-स्थान पर भद मिलते ह। इससे भी यही सिद्ध होता है कि शास्त्रीय मान्यताओ की अपनी एक धारा थी तथा शिल्पकारो की अपनी। शास्त्र लिखनवाला न जब शिल्पियो से पूछताछ की तो जो उन्होंन उन्ह जो बताया उसके आधार पर जब शास्त्र के विद्वानो न सशोधन का प्रयास किया तो ये भद उत्पन्न हो गय ऐसा अनुमान होता है। इसी कारण इन सभी विवरणो मे विचक्षण अर्थात् विज्ञ शिल्पी की सहायता लेने का निर्देश मिलता है।[1]

---

१ वही — अध्याय २५८ – ७१ ७४।
२ जे० एन० बनर्जी — डेवलपमेण्ट आफ हिदू आइकोनोग्राफी – अपेण्डिक्स 'बी'।
३ गुप्त कालीन मूर्तियो को छोडकर।
४ जनरल आफ लेटस — कलकत्ता युनिवर्सिटी १९३२।
५ ओस्ट अजियारिश जिटसश्रिफ – १९१४।
६ स्टेला क्रामरिश — विष्णु धर्मोत्तरम भाग ३, ३५, ३६ कलकत्ता युनिवर्सिटी।
७ धमधर द्वारा अनुवादित।
८ पी० सी० बागची — ब्रह्मयामल तन्त्र – जनरल आफ इण्डियन सोसाइटी आफ ओरियण्टल आर्ट पृष्ठ १०२ १०६, ब्रह्मयामल की मान्यताओ का विवरण 'तन्त्र में लक्ष्मी का स्वरूप' नामक अध्याय में दिया गया है।
९ श्रीकुमार — शिल्परत्न – के शाम्ब शिवशास्त्री-सम्पादक, ट्रिवाण्डरम सस्कृत सीरीज न० ९८, श्री सेतु लक्ष्मी प्रसाद माला न० १० – खण्ड १, २–१९२९।
१० शास्त्रो के अनुसार एक बार मने भी लक्ष्मी की मूर्ति बनवाने का प्रयास किया परन्तु मै विफल रहा क्योंकि मुझे विज्ञ शिल्पी की सहायता नहीं मिली।

११ ।

प्राचीन लक्ष्मी की प्रतिमा का विकास

जो प्राचीन साहित्य हम प्राप्त होता है उमसे एसा अनुमान हाता है कि श्री लक्ष्मी धन प्रदान करनवाली देवी थी और इनका सम्बन्ध कमल, जल गज तथा यक्षो से था । जा प्राचीन मूर्तिया प्राप्त होती ह उनका देखन स ऐसा अनुमान होता है कि इनका धन धान्य आदि सब प्रदात्री देवी भी समझा जाता था । इनका सष्टिकर्त्री के रूप म पूजा जाता था इस कारण इनको नग्न भी दिखाया जाता था । कमल जिस प्रकार बिना जोते-बोय उगता है उसको देख कर उस काल के मनष्यो का आश्चर्यान्वित होना स्वाभाविक था । इस कारण उसको इनके हाथ में दिया गया होगा तथा इनका सिंहासन बनाया गया होगा । इसी प्रकार जल से जीव की उत्पत्ति होन के कारण[1] (इसे जीवन कहते थे) इनसे इसका सम्बन्ध जोडा गया होगा । हाथी तथा मेघ के रग को एक सा देखकर इसको जल से सम्बन्धित करना कोई आश्चय की बात नही है । इस कारण कदाचित गज भी लक्ष्मी के साथ जोडा गया होगा । यक्ष हमारे यहा के प्राचीन आदिवासियो के देवता थ इसमे कोई स देह नही ह ।[2] इनको लक्ष्मी के साथ जोडना तो आवश्यक था । जसा पहिल लिखा जा चुका है कि जो लक्ष्मी की मूर्तियाँ हडप्पा तथा मोहनजोदडो की मोहरो पर मिलती ह उनम भी लक्ष्मी दो कमल के पौधो के बीच खडी ह मस्तक पर त्रिशूल के आकार का आभूषण है पीछे चोटी लटक रही है । हाथ में तथा परो में आभूषण ह । य प्राय नग्न ह[3] । कांस मूर्ति जो यहा से प्राप्त हुई है वह भी नग्न है । हो सकता है कि वह भी लक्ष्मी की ही मूर्ति हो, क्योकि उसके गले में जो आभूषण है वह पद्म की पत्ती का है । इनका यह स्वरूप ईसा से २५०० वर्ष पूर्व का है । वज्ञानिक खोदाइयो के अभाव के कारण इस युग के पश्चात काल के विषय म हमारी जानकारी बहुत थोडी है । कुछ मृण पात्र के टुकड हम आर्यो के आदिकाल के प्राप्त हुए ह[4] परन्तु अभी उनके विषय म भी विद्वान एक मत नही ह कि वे वास्तविक रूप से उस काल के ह कि नही ।

प्राग एतिहासिक युग के पश्चात जो सास्कृतिक सामग्री साहित्य के अतिरिक्त प्राप्त होती है वह मौय काल की है । इस युग की मृण मूर्तियो म हमे कोई मूर्ति हाथ म कमल लिय हुए अथवा कमल पर खड़ी अभी तक देखन म नही आयी है । परन्तु एक मूर्ति जो ग्रीवा तक बनी है आधुनिक लक्ष्मी की मूर्ति से बहुत कुछ मिलती हुई है (फलक २ क पटना से प्राप्त – ख आधुनिक) । इस मूर्ति को लक्ष्मी की मूर्ति मानन में केवल कठिनाई यह है कि इनके हाथ में कमल नही है या इस मूर्ति के कान में जो आभूषण है वह विकसित कमल के आकार का है[5], इस कारण यह अनुमान होता है कि यह लक्ष्मी की मूर्ति है ।

---

१ कुमार स्वामी — यक्षाज – खण्ड २ पृष्ठ १४ ।

२ फर्गुसन — ट्री एण्ड सरपेण्ट वरशिप – पृष्ठ २४४ ।

३ वत्स — एक्सकवेशन्स एट हडप्पा – प्लेट ९३ न० ३१८, मार्के – फरदर एक्सकवेशन्स प्लेट ९३–न० ३१८ ।

४ बी० बी० लाल — एक्सकवेशन्स एट हस्तिनापुर इत्यादि – ऐनशेण्ट इण्डिया न० १० ११ पृष्ठ २३

५ पटना म्यूजियम — न० ४३३० ।

रूपड़ मे प्राप्त एक अंगूठी के नगीने पर बनी प्राचीन मूर्ति है जो मौर्य काल की होनी चाहिये[1] इसी प्रकार की मूर्ति तक्षशिला, पटना[2] इत्यादि मे भी अंगूठी के नगीनो पर प्राप्त हुई है जिससे ऐसा ज्ञात होता है कि इन देवी की मान्यता दूर-दूर तक थी (फलक २ ग)। इस नगीने मे दो भाग मे चित्र खुदे हुए है एक ऊपर तथा दूसरा नीचे। नीचे के भाग मे एक देवी की मूर्ति दो नागो के बीच मे अंकित की गई है। (नाग शब्द सर्प तथा हाथी दोनो के लिये संस्कृत मे मिलता है। गज का सम्बन्ध जल से है जो जीवन प्रदाता है, जैसा पहिले लिखा जा चुका है तथा सूर्य भी जल प्रदाता तथा उत्पादन शक्ति का द्योतक है[3], इस कारण गज के स्थान पर सर्प यदि दिखाई देता है तो यह अनुमान करना कि पहिले देवी के दोनो ओर सर्प दिखाये जाते थे तथा पीछे चल कर उनके स्थान पर गज दिखाये जाने लगे, कुछ अनुचित न होगा)। इन सर्पों के दोनो ओर कमल के फूल बने है। देवी के दक्षिण ओर का कमल तो स्पष्ट है बाई ओर का टूट गया है। देवी अपने दोनो हाथ नीचे लटकाए हुए हथेली तथा उंगलियां घुटने की सीध मे रखे हुए योग आसन मे स्थित है (कदाचित यही प्राचीन वरद मुद्रा थी जो पीछे चल कर सीधी हथेली से दिखाई जाने लगा)। मस्तक पर एक किरीट दिखाई देता है जैसा भारहुत की लक्ष्मी के सिर पर दिखाई देता है (फलक ३ क)। कानो मे गोल कुण्डल है जो पद्म के विकसित फूल के सदृश है। गले मे हार है मणिबन्धो पर चूड़ी दिखाई देती है कमर मे मेखला है देवी नग्न है। इस नगीने के ऊपर के भाग मे लक्ष्मी अपने दोनो पैर फैलाए हुए खड़ी है हाथ दोनो नीचे की ओर लटक रहे है। आभूषण वे ही है जो नीचे की मूर्ति के शरीर पर है। इनकी दाईं ओर एक उपासक एक हाथ ऊंचा किये हुए आश्चर्य मुद्रा मे इनकी ओर आ रहा है। दक्षिण ओर एक पेड़ के नीचे एक झोपड़ी दिखाई गयी है, जो पत्तो से आच्छादित है। उसी के सामने एक दीन हीन व्यक्ति बैठा है तथा एक देवी उसको एक गोल-सी वस्तु भेंट कर रही है। यहां देवी को वस्त्र पहिने हुए दिखाया गया है। इनकी चोटी पीछे की ओर लटक रही है जैसी मोहनजोदड़ो के मुहर पर देवी के मस्तक के पीछे दिखाई देती है जैसा पीछे कहा जा चुका है। गजलक्ष्मी की एक मूर्ति पीछे के काल की भग्नावस्था में कौशाम्बी से भी प्राप्त हुई है, इस कारण इन देवी को लक्ष्मी समझना कुछ अनुचित न होगा।

भारहुत से प्राप्त कई ऐसी मूर्तियाँ है जिन्हें हम लक्ष्मी की समझ सकते है। जैसे एक देवी की मूर्ति जो एक यक्ष अपने हाथो पर धारण किये हुए है। ये सर्वाभरण भूषिता है और इनके गहने भी मोतियो के बने हुए है। पैर मे नूपुर के स्थान पर गोल मणियो की चूड़ी है। आगे के पटके मे भी मोतियो की लड़िया लगी है। मस्तक पर मोतियो का जाल है। एक हाथ कमर पर है तथा दक्षिण कर मे कमल है। एक उपवीत की भांति

---

१ वाई० डी० शर्मा — एक्सप्लोरेशन आफ हिस्टारिकल साइटस – एनशण्ट इण्डिया न० ६, पृष्ठ १२३, प्लेट ४८ बी।

२ मार्शल — तक्षशिला – खण्ड २, पृष्ठ ५०३ तथा आगे (केम्ब्रिज १९५१)।

३ एस० ए० सीयर — स्टोनडिस्क्स फाउण्ड एट मुतजीगज – जरनल बिहार रिसर्च सोसाइटी खण्ड ३७ (१९५१) पृष्ठ १ तथा आगे।

४ एनशण्ट इण्डिया न० ९ – (१९५३) प्लेट ४८ बी० रूपड़ से प्राप्त।

५ कुमार स्वामी — यक्षाज – खण्ड २, पृष्ठ ३२।

६ फरगुसन — ट्री एण्ड सरपेण्ट वरशिप – पृष्ठ २४४ – सर्पराज एलोरा की गजलक्ष्मी के सिंहासन के नीचे दिखाई देते है। गोपीनाथ राव – उपर्युक्त – प्लेट ११०।

७ काला — स्कल्पचर्स इन दी एलाहाबाद म्युनिसिपल म्यूजियम – प्लेट १४ – ए तथा बी०।

की माला बायें कंध से वक्षस्थल पर लटक रही है ।[१] दूसरी मूर्ति श्रीमा देवता की है ।[२] तथा एक और मूर्ति है जो हाथ में कमल लिये कमल पर खडी है ।[३] इनके अतिरिक्त तीन गजलक्ष्मी की भी मूर्तिया दिखा देता हैं, जिनमे दो लक्ष्मी की खडी और एक बठी हुइ मूर्ति है। इन तीना म गज कमल पर खड ह तथा लक्ष्मी भी कमल पर ह। भारहुत की बठी हुइ गजलक्ष्मी की मूर्ति योग आसन मे स्थित है तथा दोना कर सम्पुटित ह ।[४] इनके बठने का योग आसन प्राय वसा ही है जसा मोहनजोदडो से प्राप्त एक मुहर पर शिव का है ।[५] यहाँ पंजे नीचे की ओर ह तथा एडी ऊपर को (फलक ३ ख)। य एक विकसित कमल पर स्थित ह। दोना ओर दो हाथी कमल पर खड इनको अपनी सूड म घट लकर स्नान करा रहे ह। जिस पद्म पर देवी आसीन ह वह एक घट मे से निकल रहा है तथा हाथी भी जिन कमला पर खड ह वे भी उसी घट से निकल हुए दिखाये गय ह। उसी घट से निकलती हुइ कमल की पत्तिया भी ह। (शतपथ ब्राह्मण म कमल को जल का द्योतक कहा है)। इस मूर्ति के अग बहुत घिस गय ह। इस कारण इन देवी के आभूषणो का स्वरूप ठीक दिखाई नही देता परन्तु बहुत ध्यान से देखन पर यह ज्ञात होता है कि इनके सिर पर किरीट, काना में कुण्डल गल म हार तथा कटि मे मेखला है। इस प्रतिमा का विशष महत्व यह है कि भारहुत साची तथा बोध गया म जो इसी काल की प्रतिमाएँ प्राप्त हुई ह उनमे किसी म भी देवी योग आसन म हाथ जोड हुए बठी नही मिलती ह। गुप्त काल के चन्द्रगुप्त द्वितीय तथा कुमार गुप्त के सिक्को पर कही-कही लक्ष्मी योग-आसन म दिखाई देती ह परन्तु उनम भी वे हाथ जोड हुए नही दिखाई देती ।[८] यहाँ दो गजलक्ष्मियो की मूर्तियाँ जिनमे देवी खडी ह वे भी गोल वृत्त के भीतर बनी हुई ह (फलक ३ क, ख)। इन दोनो में प्रसन्न-वदना लक्ष्मी विकसित पद्म के ऊपर खडी ह दक्षिण बाहु उठा हुआ बाए स्तन पर है तथा एक फलक मे बाम बाहु मे एक कमल की कली की डण्डी पकड हुए है (क)[९] और दूसरा एक थली को[१०] (ग)। मस्तक पर किरीट है, कानो में कुण्डल गल म कण्ठा है, मणिबन्ध पर वलय तथा चूडिया ह, कटि में कमरबन्द और धोती है, पर म चूडी है। दो गज जो इनको स्नान करा रहे हैं, उनके गल में तथा मस्तक पर अलकार ह। हाथी एक विकसित कमल पर चारा पर रख हुए खड ह और सूड मे घट लिय हुए स्नान करा रहे ह। य दोना पद्म तथा देवी जिस पद्म पर स्थित ह वे सब एक घट से निकल रहे हैं, घट भी अलकृत है। एक फलक मे इन तीन पद्म क फूला से तीन कमल की कलिया तथा दो कमल के पत्त निकल रहे ह। दूसरे में तीन कमल के अतिरिक्त केवल दो कलियाँ तथा दो कमल पत्र ही निकल रहे ह। भारहुत के इन छोट-छोट फलका को देखते ही बनता है। कितन कम स्थान म शिल्पिया न किस सुघडता स इतनी सब चीजें एक साथ बना दी ह इनम कोई वस्तु एक दूसरे के ऊपर नही हे न अकन म ही गिचपिच हुआ

---

१ ए० कुमार स्वामी — ला स्कलप्चूरड भारहुत पृष्ठ ६३ प्लेट १६, फिगर ४७।
२ वही — उपयुक्त – प्लट १८ फिगर ४४।
३ वही — उपयुक्त – प्लेट २३ फिगर ५८।
४ वही — उपयुक्त – प्लेट ४० फिगस १२२, १२३, १२४।
५ वही — उपर्युक्त – प्लट ४०, फिगर १२४।
६ माके — फरदर एक्सकवेशन्स – प्लेट ७८, न० २२२।
७ शतपथ — ७, ४, १, ८।
८ मोतीचन्द्र — पद्म श्री – नेहरू बथ डे बुक – फिगर २१ इत्यादि।
९ कुमार स्वामी — उपयुक्त – फलक ४० फिगर १२२।
१० वही — उपर्युक्त – फलक ४०, फिगर १२३।

है। ये केवल चिपटे दिखाई देते हैं। भारहुत के एक खम्भ पर जो एक लक्ष्मी की पद्महस्ता प्रतिमा प्राप्त होती है (फलक ४ ख), उसमे देवी की त्रिभंग मूर्ति है, दक्षिण कर ऊपर उठा हुआ है तथा उससे वे कमल की कली पकड़ हुए हैं बाया हाथ धोती के एक छोर को उठाये हुए है। यहा विकसित कमल पर लक्ष्मी खडी हैं। मस्तक पर मोतियो का जाल है, कानो में कुण्डल, गले में त्रिरत्न के टिकड़े के साथ दो नन्दीपाद के स्वरूप के टिकड़े मोती की एक लडी के साथ गुथे हुए हैं। कमर में मणियो की मेखला तथा धोती है परो में नूपुर है[1]।

एक दूसरी मूर्ति सिरिमा देवता की है (फलक ४ क) जो श्री का प्राचीनतम स्वरूप ज्ञात होता है जैसा पहिले लिखा जा चुका है। ये वही देवी हैं जिनका परिचय श्री सूक्त में प्राप्त होती है।[2] यहा खम्भ के ऊपर के भाग में अर्ध कमल बना हुआ है। देवी का एक हाथ ऊपर उठा हुआ है जिसमें कमल था, जो अब टूट गया है। दूसरा हाथ बगल में लटक रहा है। मस्तक पर ओढ़नी है ललाट पर ललाटिका है कानों में कुण्डल, गले में कई कण्ठे हैं सबसे नीचे वाले कण्ठ में त्रिरत्न तथा नन्दीपाद के टिकड़े हैं। बाहु में अगद तथा मणिबन्ध पर चूड़ियां हैं। कमर में मेखला है तथा कमरबन्द। धोती का आगे का भाग सामने की ओर लटक रहा है। पैरों में चूड़ियां हैं। ये हाथ की चूड़ियां उन प्राचीन कांस मूर्तियों की चूड़ियों का स्मरण कराती हैं जो हमें मोहन जोदड़ो से मिली हैं। परन्तु यदि ध्यानपूर्वक देखा जाय तो ये चूड़ियाँ बाहु पर बहुत दूर तक नहीं दिखाई गयी हैं जैसी कांस्य मूर्ति में मिलती हैं। ये समपादक स्थानक मुद्रा में खडी हैं।[3]

भारहुत की प्रतिमाओं के कलामय गोल मुख पद्म-पत्र के समान नेत्र हाथी की सूंड के समान बाहु, पीन पयोधर क्षीण कटि, भरे हुए नितम्ब इस काल की कला की अपनी विशेषताएँ हैं। इस मूर्ति में मौर्य काल की उभरी हुई गोलाई भी दृष्टिगोचर होती है।

भारहुत में गजलक्ष्मी की और भी मूर्तियाँ थी, जैसा कि एक पाषाण खण्ड के ऊपर दो हाथियो की सूंडो को देखकर ज्ञात होता है[4], परन्तु समय के प्रभाव से अब वे नष्टप्राय हो चुकी हैं। इस फलक में एक हाथी तो स्पष्ट है, दूसरे का केवल मुख और सूंड है। दोनों दो घट से किसी का स्नान करा रहे हैं। देवी के मस्तक के ऊपर का कुछ कुछ भाग दिखाई देता है।

भारहुत की भांति साँची के द्वार के खम्भो पर तथा तोरणों पर कई फलक ऐसे हैं जिन पर लक्ष्मी की मूर्तियां प्राप्त होती हैं। ये सब बडी सफाई से पत्थर में खोदी गई हैं। इनमे कई मूर्तियाँ कपिशा से प्राप्त हाथी दांत के फलको पर की स्त्रियों के समान हैं।[5] इन मूर्तियों में हम लक्ष्मी के विविध स्वरूपों का दर्शन होता है। कही पद्महस्ता, पद्मस्थिता है तो कही पद्मवासिनी। गजलक्ष्मियों में भी ये विविध मुद्राएँ प्रदर्शित की गयी हैं। कही एक हाथ में कमल लिये हुए और दूसरा कटि पर रखे हुए कही दोनों हाथो में कमल लिये हुए कही हाथ जोड़े हुए, तो कही एक हाथ कुच पर रखे हुए। कोई गजलक्ष्मी की खडी मूर्ति है तो कोई बैठी हुई। कोई पद्मस्थिता मूर्ति बैठी हुई है, तो कोई खडी है। गजलक्ष्मी की मूर्ति के साथ कही कहीं और दूसरे पक्षियो

---

१ कुमार स्वामी — श्री लक्ष्मी - चित्र १४, मोतीचन्द्र – उपर्युक्त – फिगर २, कुमार स्वामी – ला स्कल्पत्यूरड भारहुत – प्लानस २३, फिगर ५८।

२ श्रीसूक्त — ३।

३ कुमार स्वामी — उपर्युक्त – पृष्ठ १८१।

४ कुमार स्वामी — ला स्कल्पत्यूरड भारहुत प्लेट ४१, फिगर १३३।

५ हाकिन — ला नुवेल रिसेश आ बेग्राम – प्लाग – १०, ११ इत्यादि।

को जैसे हस को भी दिखाने का प्रयत्न किया गया है ।[१] किसी किसी फलक मे इनके चरण के नीचे उपासका को भी दिखाया गया है । इन उपासका म एक स्त्री और पुरुष की सर्वाभरण भूषित आकृतियाँ ह । कदाचित् य आकृतिया उन्ही दानियो की ह जिन्होन इन फलका के खुदाई की मजदूरी दान म दी होगी । एक फलक म इन उपासका के नीचे दो सिंह और दो हरिण भी बन हुए ह ।[२] प्राय य फलक शुगकालीन ह । प्राय बौद्ध और जन भिक्षका के दाता वश्य ही थे जसा साँची के लखा के नामा से ज्ञात होता है । इस कारण उनकी देवी की मूर्ति का यहा बनना कोई आश्चय नही है ।

साची के शुग कालीन स्तूप न० २०२ के एक फलक पर एक लक्ष्मी की मूर्ति खुदी हुई है (फलक ५घ), जिसम उनका पद्महस्ता पद्मस्थिता रूप प्राप्त होता ह । इसम देवी दोनों हाथो म दो विकसित कमल लिय हुए ह य दोनो कर उनके वक्षस्थल पर ह । य एक विकसित कमल की नाभि पर खडी ह । इसी बीचवाल कमल के नीचे से कई और पद्म की कलयाँ तथा पद्म के पत्र और फूल निकल कर लक्ष्मी के दोनो ओर फल हुए ह । एसा ज्ञात होता है कि जसे सरोवर म से निकल हो । लक्ष्मी के मस्तक पर किरीट है काना म कुडल गल म हार कमर म मेखला तथा परा म नूपुर ह कमर म धोती है उत्तरीय स्पष्ट रूप से नही दिखाई देता । ये पैर के पजे का फलाए हुए दानो एडिया को मिला कर खडी ह । इनके दोनो आर दो हस इनकी ओर से मुँह मोडे हुए कमल नाला पर स्थित ह । एक की चोच म मोती का गुच्छा भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है ।[३] इसी प्रकार की एक खडी मूर्ति एक दूसरे फलक पर दिखाई देती है (फलक ५ ङ) । इसमे लक्ष्मी का दक्षिण कर ऊपर उठा है और उसमें कमल की कली है और बाय कर म थली के भाति की कोई वस्तु ज्ञात होती है । य किसी चौकोर वस्तु पर खडी ह । इनके दोनो पैर सामन की ओर समपाद में ह । मस्तक पर मौली कानो में कुण्डल गले में हार मणिबन्धो पर चूडी तथा ककण कटि में मेखला है तथा कमरबन्द और धोती परो में नूपुर ह ।[४] लक्ष्मी के दोनो ओर कमल की कलिया तथा कमल के पत्त बन हुए ह । इस प्रकार इनको पद्म हस्ता पद्मवासिनी दिखाया गया है । मुख कुछ बाई ओर को झुका हुआ है ।

इसी प्रकार की एक दूसरी मूर्ति भी प्राप्त होती है (फलक ५ ग), जिसमें देवी के दोनो हाथ नीचे को ओर ह और दक्षिण कर से कमल नाल पकड हुए ह तथा बायें से कपडा । मुख इनका सामन की ओर है और कोई विशेष अन्तर दृष्टिगोचर नही होता ।[५] इसी प्रकार लक्ष्मी के एक हाथ में कमल तथा दूसरे में वस्त्र गुप्त सिक्को के पीछे बनी लक्ष्मी की मूर्तियो में भी दिखाई देता है । यह लक्ष्मी का पद्महस्ता पद्मवासिनी स्वरूप है ।

एक लक्ष्मी की बठी हुई मूर्ति भी साची म दिखाई देती है (फलक ६ क) जिसमें उनका दक्षिण कर अभय मुद्रा में है और दूसरा एक कमल नाल को पकड हुए है । य एक विकसित कमल की नाभि पर एक आसन रखकर सुखासन मे बैठी हुई ह । मस्तक पर एक ओढनी पडी है । कानो म चौकार कुण्डल ह । गल में हार बाहु म अगद तथा मणिबन्ध पर चूडी और ककण ह । कटि में मेखला तथा पर में चूडिया ह । इनके

१ मोती चन्द्र — पद्म श्री – फिगर १४, तोरण ।
२ वही — उपर्युक्त – फिगर १२ ।
३ मार्शल एण्ड फूशे – दी मान्युमेण्ट्स आफ साँची, खण्ड ३, प्लेट ७५–६ ए ।
४ वही — उपर्युक्त – भाग २, प्लेट ७६, १२ बी, १५ ए ।
५ मोतीचन्द्र — पद्मश्री – नेहरू बथ डे बुक, पृष्ठ ५०४ के समक्ष – फिगर ५ ।

दोनो ओर कमल के फूल कमल की कलिया तथा पत्तियाँ ह । नीचे की ओर अशोक कठघरा बना है । इनका स्वरूप पद्मवासिनी है ।[1]

एक दूसरे फलक पर एक लक्ष्मी की खडी मूर्ति है, जिसम दोना आर कमल के फूल, कलिया तथा पत्तियाँ ह । इनका दक्षिण कर कटि पर है तथा वाम कर म विकसित कमल है ।[2]

गजलक्ष्मियो की मूर्तिया भी साँची म प्राप्त हाती है । इनमे कुछ खडी ह और कुछ बठी ह । इनमें एक मूर्ति भारहुत की भाति है । एक अलकृत घट के मुख स निकलते हुए विकसित कमल के ऊपर य खडी ह दो विकसित कमल पर दो गज सूँड ऊची करके घटा से इनको स्नान करा रहे ह (फलक ६ ख) । इस घट में से तीन कमलो के अतिरिक्त एक कमल का पत्ता तथा एक कली निकल रही है । देवी का दक्षिण कर स्तना पर है तथा बाया सीधा नीचे लटक रहा है ।[3] मस्तक पर ओढ़नी है काना मे कुण्डल गल मे हार मणिबन्धो पर वलय कमर मे मेखला कमरबन्ध तथा धोती है परों मे नूपुर ।

एक दूसरी गजलक्ष्मी की प्रतिमा जो मिली है (फलक ५ ख) उसमें लक्ष्मी विकसित कमल पर खडी ह तथा गज भी दोना कमला पर खडे सूड उठाकर घटो से देवी का स्नान करा रहे ह तथा कलियाँ और पत्ती सभी एक स्थान से निकल रही ह परन्तु य सब घट म से निकल रही ह । गजा के ऊपर के भाग में छत्र तथा कमल है । कमल की कलियो और पत्तिया के नीचे अलकृत स्त्री पुरुष की छवि है । दानो के हाथो में कमल की कलियाँ ह । य भी कमल पर खड ह । देवी के मस्तक पर मौली कानो में झुमका गल में हार, बाहुओं पर अगद हाथ मे वलय, कटि म मेखला तथा परो मे नूपुर ह । नीचे क अग में धोती है ।

इसी प्रकार की एक और प्रतिमा प्राप्त हुई है जिससे पहिलीवाली मूर्ति से अन्तर इतना है कि लक्ष्मी दोनो हाथ सम्पुट किय हुए ह परो मे इनके चूडी और नूपुर ह । दाना गजा के ऊपर दा कमल बन हुए है । नीचे जो स्त्री-पुरुष खड ह उनके चरण पथ्वी पर ह तथा स्त्री का दाहिना हाथ मुडा हुआ स्तनों के पास है और बायाँ सीधा लटक रहा है (फलक ५ क) । पुरुष एक हाथ में चँवर लिय हुए है तथा दूसरे म वस्त्र । इनके पर के नीचे दो सिह ह जो दो ओर मुह किय बठ दिखाय गय ह तथा इनके बीच मे एक कमल है । सिहो के नीचे दो हिरन ह । इनके बीच में भी एक विकसित कमल है तथा इनके पर के पास दो कमल ह । यहाँ कुछ लोगा का अनुमान है कि य स्त्री पुरुष की आकृतिया अशोक तथा उनकी विदिशा की रानी की ह ।[5]

एक तोरण पर बनी गजलक्ष्मी की खडी मूर्ति इससे भिन्न है । यहा लक्ष्मी के चारो आर कमल की कलियाँ फूल पत्तियाँ इत्यादि दिखाय गय ह जिनमे लक्ष्मी की बाइ और दाहिनी ओर हस के जोडे भी कमलों पर बठ ह । देवी कमल के आसन पर खडी ह । उनका दक्षिण कर ऊपर उठा है जिसम कमल है तथा बाय कर कटि पर है । इनका मुख बाई ओर को कुछ घूमा हुआ है । मस्तक पर मौली कानों म कुण्डल, गल म लम्बा हार हाथो म चूडी तथा वलय ह कटि म कमरबन्द तथा मेखला है धोती भी पतली है परा में चूडी तथ नूपुर हैं ।[6]

---

१ वही — उपर्युक्त – फिगर ९ ।
२ वही — उपयुक्त – फिगर १० ।
३ वही — उपयुक्त – फिगर – ११ ।
४ वही — उपयुक्त – फिगर १३ ।
५ जिम्मर — दी आर्ट ऑफ इण्डियन एशिया – प्लेट २७, प्राय ईसा पूव ११० की कृति ।
६ मोतीचन्द्र — उपर्युक्त – फिगर १४ ।

एक और खडी गजलक्ष्मी की मूर्ति जो यहाँ दिखाई देती है उसके दोनो ओर के बन खम्भा को तथा नीचे के कठघरे और ऊपर के सीढीदार कँगूरा क। देखन से एसा नात होता है जसे यह इनका मन्दिर हो। यहा लक्ष्मी कमल की पीठ पर खडी ह, इनके दक्षिण कर म एक फूल है तथा बाएँ म एक वस्त्र। मस्तक पर एक गोल मौली काना म झमके गल म लम्बा हार ज। स्तनो के ऊपर से होता हुआ नीचे तक लटक रहा है हाथ में चूडी तथा कगन हं कटि म मेखला तथा परा म चूडी और नूपुर ह।[१] द।नो ओर तालाब से निकलते हुए कमल के फल कलियाँ तथा पत्तिया ह। खम्भो पर सिह की आकृतिया बनी ह।

बठी हुई गजलक्ष्मी की मतियो म एक पहिलवाली मूर्ति की भाँति मदिर म प्रतिष्ठित दिखाई देती है। इसम भी देवी के दोनो ओर खम्भ बन ह ऊपर कगूरे ह और नीचे कठघरा। लक्ष्मी शतदल कमल पर अध पर्यंक आसन म बठी हैं। इनका बाया पर ऊपर मुडा हुआ है। एक हाथ जघ पर है तथा दूसरा एक कमल लिय हुए है। तालाब से कमल की कलियाँ इत्यादि निकल रही ह। गज दोनो आर सूँड उठा कर घट से स्नान करा रहे ह दो जल धाराए इनके मस्तक पर पड रही ह।[२]

इससे भी विकसित रूप साँची मे एक दूसरे फलक पर प्राप्त होता है जिसमे पद्म इत्यादि एक घट से निकल रहे ह (फलक ७ क)। एक पद्म पर लक्ष्मी अध-पयक आसन मे स्थित ह। इस फलक म उनका दक्षिण पैर ऊपर उठा हुआ है तथा बाया पर नीचे लटक रहा है। सिर पर ओढनी है कानो मे चौकोर कुण्डल ह गल मे एक बडे बड माती के दानो की माला है जिसके बीच में एक लम्बी मणि है। हाथो में चूडी कमर मे करधनी तथा पैरो मे चूडियाँ ह। एक हाथ में बडी कमल की कली है दूसरा हाथ जघे पर है। यह मूर्ति प्राय चौकार स्थान में बनाई गयी है। इसके ऊपर के भाग तथा नीचे के भाग में कठघरे बन हुए ह। दोनो ओर घट से निकलती हुई कमल की बल बनी हुई है।[३]

बोध गया से प्राप्त प्राय इसी काल की लक्ष्मी की मूर्तियो मे उनका गजलक्ष्मी का ही स्वरूप अधिक दृष्टिगोचर हाता है। एक मूर्ति गजलक्ष्मी की इन्द्र के ठीक ऊपर मिलती है।[४] इसमें देवी कमल पर खडी है दोनों ओर से दोनो हाथी विकसित कमल पर खड घटों को सू ड में पकड देवी को नहला रहे ह। जिस कमल पर लक्ष्मी स्थित ह उसी कमल की जड से दा कलियाँ निकल कर लक्ष्मी के दानो आर ह तथा दो और कलियाँ भी उसी स्थान से प्रस्फुटित हो रही ह। लक्ष्मी का एक हाथ उठा हुआ है जिसमें कमल है। दूसरा हाथ बगल में लटक रहा है। ऊपर का भाग बहुत घिस जान से यह पता नही लगता कि इनके मस्तक वक्षस्थल तथा हाथो में कौन-कौन से आभूषण थे कमर मे मेखला तथा धोती स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर हो रही ह।

एक दूसरे फलक मे जो प्राय इसी प्रकार का है (फलक ८ ख), उसमे लक्ष्मी का जूडा उनके बाई ओर बँधा हुआ है तथा उस पर मौली है। कानो में कुण्डल ह गल में तीन लडियो का हार है, जो स्तनो के ऊपर ही रह जाता है। हाथ के गहनों का पता नही लगता। कमर में दो लडी की मणियो की मेखला तथा धोती है, परो में भारो नूपुर भी दिखाई देते ह धोती भी ये पहिन हुए ह, परन्तु यह वसी ही बँधी हई ह जसे आज भी बिहार में लोग बाँधते ह। बायाँ हाथ कटि पर है और दाहिना उठा हुआ कमल को लिय हुए ह। दाहिनी ओर का हाथी कँवलगट्टे पर स्थित है। इनके बाई ओर का हाथी घिस गया है। पद्म आसन के दोनो ओर

---

१ वही — उपर्युक्त – फिगर १५।
२ वही — उपर्युक्त – फिगर १६।
३ वही — उपर्युक्त – फिगर १०।
४ कुमार स्वामी — ला स्कल्पचर। बोध गया – प्लेट ३९, पोतो ६१।

से दो कलिया निकल रही है तथा दो कमलगट्ट हैं जिन पर हाथी बने हुए हैं। इनके पैर दोनों सामने की ओर और दाहिनी ओर का हाथी कॅवलगट्ट पर स्थित है। इनके बाईं ओर का हाथी घिस गया है। पद्म आसन के दोनों ओर से दो कलिया निकल रही हैं तथा दो कमलगट्ट है, जिन पर हाथी बने हुए हैं। इनके पैर दोनों सामने की ओर है।[१]

एक दूसरे फलक में लक्ष्मी दोनों हाथों में कमल के फूल तथा पत्ती को लिए हैं इनका शरीर कुछ बाईं ओर झुका हुआ है (फलक ८क)। मस्तक पर मौली है कानों में कुण्डल हैं अन्य आभूषण दिखाई नहीं देते। ये कमल के विकसित पुष्प पर खड़ी हैं इनका यह स्वरूप पद्महस्ता पद्मवासिनी का है। इस फलक के बाहर की ओर दो कमल बने हुए हैं, जिनमें से मोतियों की मालाएँ[२] लटक रही हैं। इसी फलक के नीचे एक स्त्री पुरुष का जोड़ा है, जो एक मकान की दालान में खड़ा दिखाया गया है।[३]

हाथी दाँत की एक स्त्री मूर्ति इटली के पाम्पीआइ नगर से प्राप्त हुई है। इसे भी डा० मोतीचन्द्र ने लक्ष्मी की मूर्ति बताया है। यह मूर्ति ईसा पूर्व प्रथम शताब्दी की है। यह शुगकालीन आभूषण धारण किये हुए है। इस खड़ी मूर्ति के दोनों ओर इससे सटी हुई दो सखियां हैं, जो पात्र लिये हुए हैं। यह मूर्ति नग्न है इसका बाँया हाथ उठा हुआ है। ललाट पर ललाटिका, मस्तक पर बेंदी गले में हार हाथ में कड़ा कमर में करधनी पैरों में चूड़ी तथा नूपुर हैं।

शुगकालीन कई एक मृण मूर्तियाँ भी प्राप्त हुई हैं, जो लक्ष्मी की ज्ञात होती हैं (फलक ९ घ)। इनमें इनकी प्रायः एक ही प्रकार की बनावट है। बहुत से अलंकारों से सुशोभित ये पद्म पर खड़ी मिलती हैं। बसाढ़ से प्राप्त एक लक्ष्मी की मूर्ति के दोनों हाथ कमर पर हैं दोनों ओर कमल के फूल, कमल की कलियां तथा कमल की पत्तियां हैं।[४] इस मूर्ति के दोनों कन्धों पर पंख लगे हुए हैं। इन पंखों के विषय में विद्वानों की अनेक धारणाएँ हैं। कदाचित् इनको आकाश की देवी बनाने की दृष्टि से ईरान के प्रभाव के कारण इनकी भी पीठ पर ईरानी पशुओं की भांति पंख लगा दिये गये हैं[५] अथवा कदाचित इनको चंचला दिखाने के हेतु ऐसा किया गया। इसी प्रकार की कई मूर्तियां प्राप्त हुई हैं इनमें एक मूर्ति नन्दन गढ़ से भी प्राप्त हुई है, जो कलकत्ता के राष्ट्रीय संग्रहालय में है तथा एक दूसरी मूर्ति कौशाम्बी से प्राप्त हुई है।[८] एक दूसरी और लक्ष्मी की मृण-मूर्ति बसाढ़ से भी प्राप्त हुई है[९] जिसमें मूर्ति का अर्धभाग ही है। यहाँ देवी विकसित कमल पर स्थित हैं। नीचे की धोती कमरबन्द से बँधी है तथा ऊपर से मणियों की करधनी शोभायमान हो रही है। ऊपर के अंग पर कसी हुई चोली है, वाम कर कमरबन्द को पकड़े हुए है और दक्षिण कर सुखपूर्वक बगल में लटक रहा है।

१ कुमार स्वामी — ला स्कल्पचर—बोध गया — प्लेट ५६ २ (११)।
२ कुमार स्वामी — उपर्युक्त — प्लेट ५६ — १।
३ वही — उपर्युक्त — प्लेट १७ कठघरे का खम्भा।
४ मोतीचन्द्र — एनशण्ट इण्डियन आइवरीज — प्रिंस ऑफ वेल्स म्यूजियम बुलेटिन, बम्बई — न० ६, १९५७ १९५९ — १९ पृष्ठ ४ ६३।
५ आर्केआलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया रिपोर्ट — १९१३ १४, पृष्ठ ११६ प्लेट, ४४।
६ मोतीचन्द्र — उपर्युक्त — पृष्ठ ५०४, कुमार स्वामी — इपेक (१९२८) पृ० ७१।
७ कलकत्ता राष्ट्रीय संग्रहालय — न० ३०४, एस० आई० ए० आर० १९३५ ३६ प्लेट २२, फिगर २।
८ काला — टेरा कोटा फिगरिन्स फ्राम कौशाम्बी — प्लेट १४बी तथा प्लेट ५१ फिगर २, पृष्ठ २६।
९ आर्केआलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया रिपोर्ट — १९१३ १४, पृष्ठ ११७।

परन्तु इन सबस सुन्दर तो एक गजलक्ष्मी की मूर्ति मथुरा से मिली है जो मथुरा के राजकीय सग्रहालय में है (फलक ८१ च)। इस शुगकालीन मूर्ति म दो गज घटा स लक्ष्मी को स्नान करा रहे हं। य गज दो विकसित कमला पर खड ह जिनके नाल खम्भा की भाँति दिखाई देते ह। लक्ष्मी खडी ह, इनका बाया हाथ कटि पर है और दाहिना ऊपर उठा हुआ है और उसमें कमल का फूल है। एक कमल का फूल देवी के बाई ओर भी है। मस्तक पर पगडी है कन्धे पर उत्तरीय तथा कमर म धाती है। गल मे मणिजटित टिकडो का कण्ठा है, कान में गोल कुण्डल कटि पर भारी करधनी है। करधनी से लटकती हुइ मणिया की लडियाँ ह जसी फलक ९ (घ) पर उद्धत मृणमूर्ति के चित्र म दिखाई देती ह। मणिबन्धा पर वलय दिखाई देते ह। इनके पीछे की ओर पानी की धार के दोना ओर मुद्राएँ दिखाई देती ह[१]। इसी प्रकार की एक और गजलक्ष्मी की मूर्ति मथुरा सग्रहालय मे है। एक और लक्ष्मी की मूर्ति पद्म लिय हुए यही से प्राप्त हुइ है। इसी प्रकार की एक शुगकालीन मणमूर्ति गजलक्ष्मी की वाराणसेय सस्कृत विश्वविद्यालय के सग्रहालय म भी है। यह मूर्ति बठी हुई है और इसे दो गज स्नान करा रहे ह। यह मूर्ति इतनी जीण हो गई है कि इसके विविध अग स्पष्ट दिखाई नही देते। फिर भी यह मूर्ति उसी परम्परा की होने के कारण अपना विशिष्ट स्थान रखती है। एक हड्डी की बनी लक्ष्मी की मूर्ति मथुरा के चौरासी टीले से प्राप्त हुई है। यह मूर्ति ईसा के प्रथम शताब्दी के काल की प्रतीत होती है। इसे भी डा० मोतीचन्द्र ने लक्ष्मी की मूर्ति बताया है।[२] यहा भी देवी विविध आभूषणो से आभूषित ह और नग्न अवस्था में दिखाई गयी ह।

लक्ष्मी की प्रतिमा भारत लक्ष्मी के स्वरूप म लम्पसकस से प्राप्त एक रजत की थाली पर बनी हुई है।[३] यह प्रतिमा रोमदेशीय सम्भ्रान्त महिला के रूप में दिखाई गई है। मस्तक से दो सीग निकले हुए ह। कदाचित् उस समय इस प्रदेश के विशिष्ट पुरुष और स्त्रियाँ अपन मस्तक पर शृग धारण करते थ जसा महाभारत के सभापव के अन्तगत उपायन पव के निम्नाकित श्लोक से ज्ञात होता है—

शकास्तुषारा कङ्काश्च रोमशा शृङ्गिणो नरा।[४]

मस्तक पर एक पगडी है, गले में एक तौक है बाहुओ पर अनन्त तथा मणिबन्धो पर वलय, एक उत्तरीय कन्धे पर है नीचे के भाग में धोती है परों में यूनानी स्त्रिया की भाति चप्पल है, एक हाथ में धनुष है, दूसरा हाथ आश्चय की मुद्रा में है। ये हाथी दात के सिंहासन पर बठी हुई ह। इनके दोनो ओर वे भारतीय पशुपक्षी ह जो भारत से बाहर के देशो मे भज जाते थ, जैसे तोता, बघरी नस्ल के कुत्त इत्यादि। शुग काल की और मृणमूर्तियाँ जो लक्ष्मी की हो सकती हं। इनमें कौशाम्बी पटना तामलुक, मसोन इत्यादि स्थाना से प्राप्त मूर्तियाँ उल्लखनीय ह।[५] प्राय ये मूर्तियाँ नीचे से खण्डित ह तथा इनके मस्तक के एक ओर विविध अस्त्र बन ह। एक

---

१ श्री कृष्णदत्त वाजपेयी—'मथुरा' उत्तर प्रदेश के सास्कृतिक केन्द्र – शिक्षा विभाग, उत्तर प्रदेश, लखनऊ फलक ६।

२ मोतीचन्द्र — ऐनशण्ट इण्डियन आइवरीज – प० ४ ६३, फलक – २ए।

३ श्री वासुदेव शरण अग्रवाल — लम्पसकस से प्राप्त भारत लक्ष्मी की मूर्ति – नागरी प्रचारिणी पत्रिका – विक्रमांक – वशाख – माघ, २०००, पृष्ठ ३९ ४२।

४ महाभारत — सभा पव – उपायन पव – ३०।

५ तामलुक — इण्डियन आर्कोआलाजी – १९५४ ५५, प्लेट ३९ ३, काला – टेरा कोटा फिगरेन्स फ्राम कौशाम्बी, प्लेट ५ ए तथा प्लेट १४ २, मसोन – गोविन्द चन्द्र – मसोन की मृण्मूर्तियाँ 'आज' ५ जनवरी, १९५८।

पूण मूर्ति कलकत्ता सग्रहालय म है, जिसम देवी एक विकसित कमल पर स्थित है। इसस यह अनुमान होता है कि ये सभी मूर्तिया लक्ष्मी की ह। अब यह प्रश्न उठना है कि इनके मस्तक के चारा ओर य आयुध क्या बनाये गय ह। कदाचित् इ ह राज्यदा या राज्य दनवाली देवी क रूप म यहा प्रस्तुत किया गया है जसा धम्म पद की अट्ट कथा मे इनका रूप मिलता है— राज्य श्री दायका दवता । इसी कारण इनके मस्तक क पीछे त्रिशूल इ द्र का वज्र तीर गज ा अकुश परशु इत्यादि बनाय गय ह। इनक मस्तक पर विविध प्रकार के आभूषण ह जिनम मौली प्रधान रूप स दिखाई गई है। इम मौली से लटकत हुए माती क दो गुच्छ दिखाई देते ह। काना म भारी झुमके ह, गले मे कण्ठा तथा हार हे और हार स लटकती हुई माती की दा लडिया स्तना के बीच से होती हुई कटि प्रदेश तक आती ह। बाहुआ म अगद तथा मणिब ध पर भारी वलय ह। कटि म मणिया की भारी करधनी तथा परा म भारी नूपुर और चूडिया ह। कभी इनका हाथ एक कमर पर तथा दूसरा उठा हुआ एक वस्त्र पकड हुए है ता कभी दाना कर एक दूसरे पर ह इत्यादि। ये मूर्तियाँ कदाचित उमी प्रकार पूजन मे व्यवहार होती थी जस आजकल लक्ष्मी की मूर्ति का व्यवहार दिवाली के पूजन पर होता है।

भाजा के विहार मे, जो प्राय इसी काल का है, एक डहरी पर एक अध चन्द्राकार पखडियाँ ह। देवी के दोना ओर दो हाथी सू ड ऊँची किय हुए इनको घट से स्नान करा रहे ह। दाना हाथा से य दो कमल के फूल पकड हुए ह। इसी फलक मे चार उपासक भी दिखाये गय ह। इस मूर्ति को कुमार स्वामी न माया देवी (बुद्ध को माता) की बताया है।[१] परन्तु उपासका को देखकर ही हमें यह धारणा न बनानी चाहिय कि य माया देवी ह क्याकि श्री सूत्र म हमें इनके चार ऋषि प्राप्त होते ह चिक्लीत, मणिभद्र इत्यादि। सम्भवत य उपासक वे ही चारो ऋषि ह। जसा भारहुत के एक फलक पर हम देखते ह।[२] बुद्ध को भी कुषाणकाल में सिंहासन पर ही दिखाया है कमलासन पर नहीं। पद्म आसीन बुद्ध तो गुप्त काल म बन। इससे यह प्रतीत होता है कि यह लक्ष्मी का ही आसन था और इस कारण यह मूर्ति भी उन्ही की हानी चाहिय। सकिसा से भी एक मृण फलक प्राप्त हुआ है, जिसम लक्ष्मी का गज स्नान करा रहे ह[३]। इसी प्रकार का एक फलक मथुरा से भी प्राप्त हुआ था जो बोस्टन म्युजियम मे है। खण्ड गिरि की गुफा में भी एक गजलक्ष्मी की मूर्ति प्राप्त होनी है। इसम लक्ष्मी खडी ह। य अपने दोना करा मे दो विकसित कमल धारण किये हुए ह। वे एक कमल पर स्थित ह। इनके दोना ओर दो हाथी कमला के दो फूला पर खड ह और अपनी सू ड उठाये हुए लम्ब घटो से लक्ष्मी को स्नान करा रहे ह। इन हाथिया क पीछ भी दो हाथी खड ह। लक्ष्मी के और हाथियो के बीच म कमल की पत्तियाँ तथा कलिया भी दिखाई गयी ह। यहाँ सभी कमल एक सरोवर से निकलते हुए दिखाई देते है। ऊपर के भाग में सिंह तथा और पशु बने हुए ह।[४] लक्ष्मी के मस्तक पर मौली है, गले में हार हाथ मे चूडी कटि मे मणिमेखला तथा परो में नूपुर ह (फलक १० क)।

कौशाम्बी से एक मण फलक प्राप्त हुआ है जो प्राय शुगकालीन ज्ञात होता है। इसमें लक्ष्मी एक सप्त दल कमल पर खडी ह। (फलक ६ ङ) बायाँ हाथ इनका कटि पर है तथा दक्षिण कर उठा हुआ एक कमल को धारण किय हुए है। पदतल के नीचे एक सरोवर है, जिसमें से कई कमल की कलिया तथा फूल निकल रहे

१ कुमार स्वामी — हिस्ट्री ऑफ इण्डियन एण्ड इण्डोनेशियन आट – (१९२७) पष्ठ २९।
२ जिम्मर — दी आट ऑफ इण्डियन एशिया – प्लेट ३१ डी।
३ कनिंघम — आर्कआलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया रिपोट – खण्ड ११, पृष्ठ २९।
४. कम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया – प्लेट २७ ७५।

है। इनके मस्तक पर ओढ़नी है। गले म हार बाहु मे अगद हाथ म वलय, कटि में मेखला तथा परो में नूपुर ह। दाहिना पर कुछ मुडा हुआ नत्य की मुद्रा में है। मुख भी दाहिनी ओर कुछ घूमा हुआ दिखाई देता है।[१]

कौशाम्बी से चुनार के पत्थर का एक फलक भी प्राप्त हुआ है जिस पर एक ओर साँची की भाति की गजलक्ष्मी की खडी प्रतिमा है जो पद्मकाश पर स्थित दिखाई गयी ह। कमल की पत्तिया नीचे की ओर लटकी हुई हं। दोनो हाथो से ये दो कमल नाल पकडे हुए ह। इन्ही कमल नाला के फूला पर दो हाथी खड अपनी सूँड़ो से घटा को उठाय हुए इनका जल से अभिषक कर रहे ह। इनके दानो ओर कमल की पत्तियाँ कमल की कलियाँ इत्यादि दिखाई गयी ह। जिस कमल पर य स्थित ह उसके नीचे भी कमल के फल फल अधखिल कमल, कमल की पत्तियाँ बनी ह। ये सब एक मगल कलश से प्रस्फुटित हो रहे ह जो एक वेदी पर रखा है।[२] लक्ष्मी के मस्तक पर एक ओढनी है जिसके सामन की ओर से ललाटिका थाडी सी बाहर निकल कर झाँक रही है। काना म कुण्डल गल म हार मणिबन्ध पर कगन कटि म कमरबन्द तथा धाती है। उत्तरीय के दोनो छोर दोना हाथो पर लटक रहे ह। य पीन पयोधरा तथा प्रसन्नवदना प्रदर्शित की गयी ह (फलक ११)।

एक और पाषाण खण्ड (चुनार के पत्थर का) यहाँ से प्राप्त हुआ है, जिस पर लक्ष्मी नग्न रूप में पद्म पर खडी प्रदर्शित की गयी ह (फलक १० ख)। इनका बाया हाथ कटि पर हे तथा दक्षिण कर म य कमल धारण किये हुए ह। गज कमलो पर खडे सूँड उठा कर घटो से इनको अभिषक करा रहे ह। देवी के मस्तक पर ओढ़नी है, ललाट पर ललाटिका, कानो म कुण्डल गल में मोतिया की माला मणिबन्ध पर चूडियाँ तथा एक एक कगन कमर म एक लडी की मणियो की करधनी है पाँव म नूपुर ह। इस मूर्ति का अधोभाग नग्न है। इसी पाषाण खण्ड पर उनके बाई ओर एक हाथी बना है और दाहिन ओर एक वषभ। वषभ के पश्चात् एक स्वस्तिक है जो पत्तियो से बनाया गया है, उसके पश्चात एक यक्ष की मूर्ति है। इस पाषाण-खण्ड के अन्त म एक मगर बना है। यह पत्थर किसी मन्दिर का तोरण ज्ञात होता है (फलक ११)। इस प्रकार स्पष्ट लक्ष्मी का सम्बन्ध हाथी स्वस्तिक यक्ष से मिलता है। लक्ष्मी का कृषि से प्राप्त होना तथा जल के माग से मिलना यहाँ वषभ तथा मगर द्वारा दिखाया गया है।[३]

गजलक्ष्मी की एक विचित्र मृण मूर्ति कौशाम्बी से और प्राप्त हुई है जो ईसा की पहिली शताब्दी की है।[४] यह हारीनती के साथ मिली थी और एक मन्दिर म स्थापित थी।[५] यह मणमूर्ति प्राय २½ फुट की है। इस स्थान से प्राप्त मृण मूर्तियो मे यह सबसे बडी है। इस मूर्नि के मस्तक पर एक मुकुट है, जिसमें दो गज घटा से इनके मस्तक पर पानी छोड रहे ह। मस्तक पर इनके ललाटिका काना म पत्र कुण्डल गल म माला, बाहु में अगद, मणिबन्धो पर वलय, कमर म करधनी तथा परा म नूपुर ह। नीचे के अग में धोती धारण किय हुए ह ऊपर का अग खुला है। एक हाथ अभय मुद्रा म है तथा दूसरा एक कमल को लिय हुए है (फलक १२)। एसा ज्ञात होता है कि बौद्ध उपासको में हारिति के साथ लक्ष्मी का भी पूजन इस काल मे चालू हो

१ काला —टेराकोटा फिगरिन्स फ्राम कौशाम्बी – प्लेट २१, पष्ठ ३४ ३५।

२ इण्डियन आर्कआलाजी — १९५६ ५७ प्लेट ३८ ए, चित्र प्रो० जी० आर० शर्मा, प्रयाग विश्व विद्यालय की कृपा से प्राप्त।

३ काला — स्कल्पचस इन दी इलाहाबाद म्युजियम, प्लेट १६–ए।

४ यह मूर्ति प्रयाग विश्वविद्यालय के कौशाम्बी म्युजियम की है तथा इसकी प्रतिकृति प्रो० शर्मा की कृपा से प्राप्त हुई है।

५ इण्डियन आर्कआलाजी, १९५७ ५८

गया था क्योकि जिस स्थान पर यह मूर्ति प्राप्त हुई है वह बौद्ध विहारो के अन्तगत है। जसा पहिले लिखा जा चुका है, मलिन्द पन्ह म कुछ पधो के नाम मिलते ह उनम श्री देवता, काली यक्ष, मणिभद्र इत्यादि के नाम ह।[१] इससे इस बात की पुष्टि होती है।

कुछ पीछे के काल के दो मण फलक और प्राप्त हुए ह[२] जिनम एक मे दो स्त्रिया लक्ष्मी के दोना ओर खडी चँवर डुलाती हुई दिखाई गई ह तथा दूसरे मे लक्ष्मी साडी पहिन हुए दिखाई गई ह। य मूर्तिया उत्तर कुषाणकालीन ज्ञात होती ह। तक्षशिला से प्राप्त अँगूठी के नगीन की चर्चा पहिल की जा चुकी है। जो यहाँ मूर्तिया मिली ह उनमे एक मूर्ति ऐसी है जिसके हाथ मे एक फूल है, जो कमल का हो सकता है। इस मूर्ति का केश कलाप बडा सुन्दर है (फलक १३ क) गल मे हार, बाहु म अगद तथा मणिबन्ध पर वलय ह। इनके वक्षस्थल पर एक छन्नवीर भी दिखाई देता है। कटि म मणिया की मेखला हे, जिसके बीच म एक चौकोर टिकडा लगा है। य धोती पहिन ह परन्तु इनका अधोभाग नग्न है।[३] बायाँ हाथ कटि के पास हे। एक और मूर्ति बठी हुई मिली है जिसके हाथ मे धान के गट्ठ के भाति की एक वस्तु है जा कमलगट्टा भी हो सकता है। यह आरडोक्षो की मूर्ति के भाति हे[४] जिसका निखरा हुआ स्वरूप हम कुषाण सिक्का पर प्राप्त होता है।[५] इरान की इस देवी का हमारी लक्ष्मी से प्राचीन काल म काई अन्तर नही था।

मृण मूर्तियो मे एक मूर्ति वसे ही अपन स्तन पर हाथ रख हुए है जस भारहुत की गजलक्ष्मी। इस कारण इसे लक्ष्मी की मूर्ति मानना चाहिय (फलक १३ घ)। ये मस्तक पर से आढनी ओढ हुए ह तथा दाहिना हाथ बगल में लटका हुआ है। मूर्ति घिस जान के कारण यह ठीक पता नही चलता कि य कौन कौन से आभूषण पहिन हुए थी।[६] एक और मूर्ति हाथ म सूप की भाँति का बतन लिय हुए यहाँ मिलती है। यह भी दीपलक्ष्मी की मूर्ति हो सकती है (फलक १३ घ)। इन्ह देखकर एसा ज्ञात होता है कि जसे सूप में भर कर धन अथवा धान्य प्रदान कर रही हो। य भी सिर पर से ओढना ओढे हुए ह। इनके काना मे कुण्डल गले में हार तथा कण्ठ और बाहु पर अगद दिखाई दे रहा है।[७]

हड्डी में खोदी हुई प्राय तीन मूर्तियाँ यहा एसी मिलती ह जिन्ह देखन से एसा अनुमान होता है कि ये लक्ष्मी की ह। इनम दो मूर्तियो में देवी बायें हाथ से अपनी मेखला पकड ह तथा दक्षिण कर स्तन पर है (फलक १३ ख)। कानो में इनके कुण्डल गल में हार बाहु म अगद मणिबन्धा पर चूडिया, कटि मे मेखला तथा परा में नूपुर ह।[८]

मथुरा से भी लक्ष्मी की एक बडी सुन्दर मूर्ति प्राप्त हुई है जिसम देवी एक हाथ अपन स्तनो पर रखे हुए दो विकसित कमलो पर खडी ह पीछे की ओर कमल इत्यादि बने हुए ह (फलक ६ ग, घ)। यह मूर्ति,

---

१ कुमार स्वामी — यक्षाज – भाग २ पृष्ठ ११।

२ काला — कौशाम्बी की मण मूर्तिया – सम्पूर्णानन्द अभिनन्दन ग्रथ, पष्ठ ३०१ ३०८, प्लट पृष्ठ ३०६ पर।

३ मार्शल — तक्षशिला, प्लेट २११ न० ३ए तथा ३ बी०।

४ वही — उपयुक्त – प्लेट २११ – न० १।

५ वही — उपर्युक्त – प्लेट १९१ न० ९५।

६ वही — उपयुक्त – प्लेट १३१ न० १७।

७ वही — उपयुक्त – प्लेट १२९ न० १४१।

८ वही — उपर्युक्त – प्लेट २०३ – एल-बी० न० ४५, एल-बी० नं० ४६।

विकसित कमल जो एक घट से निकल रहे ह उनके समक्ष बनी है। पीछ की ओर दो मोर बने हुए ह आगे दो विकसित कमला पर दो पर रख लक्ष्मी खडी ह। इनके दाहिन हाथ में एक कपडा है और बायाँ हाथ दाहिन स्तन पर है जसे तक्षशिला की देवी का है। काना म कुण्डल गल म एकावली, बाहु पर केयूर मणिबन्धो पर चूडी तथा वलय कटि म करधनी परा म नूपुर ह।[1]

अमरावती से प्राप्त आन्ध्र कला के एक पाषाण खण्ड पर एक लक्ष्मी की बठी हुई प्रतिमा प्राप्त हुई है (फलक १४)। इस मूर्ति की भाव भगी विचित्र है। य एक पर मोड हुए तथा एक पर लटकाय हुए कमलगट्ट पर बठी ह। ऊपर बाय कमन बन हुए ह तथा इनके मस्तक पर से समुद्र की लहरे दिखाई गयी ह। इनके समक्ष एक बडा सा मकर बना है। मस्तक पर बिन्दी और बनी है। काना में गोल कानपाशा है। ग्रीवा म ग्रैवेयक तथा हार है। बाहु पर अगद तथा मणिबन्धा पर वलय है। हार का एक भाग लटकता हुआ कमर पर झूल रहा है। परो मे नूपुर ह। समुद्र से लक्ष्मी की प्राप्ति का यहाँ भाव प्रदर्शित किया गया है।[2] इसी फलक पर एक यक्ष भी है।

इससे भी पूव बसाढ से प्राप्त एक नाव पर बनी लक्ष्मी की मूर्ति भी इसी तथ्य की द्योतक है।[3] इस देवी का बाया हाथ कमर पर है तथा दाहिना हाथ अभय मुद्रा में है। नीचे के अग मे धोती पहिन हुए ह। बाईं ओर शख बना हुआ है और उसके बाय एक पशु खडा है।

बेसनगर से भी एक लक्ष्मी की मूर्ति प्राप्त हुई है, जिसे कनिंघम न और वस्तुआ के साथ वहा से पाया था।

लक्ष्मी की मूर्ति इतनी शुभ मानी जाती थी कि सिक्को पर तथा मोहरो पर भी इनको दिखान का प्रयत्न किया गया है (तक्षशिला से प्राप्त सिक्के पर – फलक ६ङ)। कौशाम्बी से प्राप्त एक सिक्के पर गजलक्ष्मी को मूर्ति प्राप्त होती है जो प्राय ईसा पूव तीसरी शतान्दी की है। विशाखदेव शिवदत्त वायुदेव राजाओ के सिक्का पर इनकी मूर्ति मिलती है जो ईसा पूव पहिली शतान्दी में अयोध्या मे राज्य करते थे। उज्जन के भी ढल हुए सिक्का पर य दिखाई देती ह जो प्राय ईसा पूव दूसरी और तीसरी शताब्दी के बीच की ह। लक्ष्मी देवी का इतना मान बढ़ गया था कि बाहर के शासका के सिक्को पर भी य अकित की गयी। अजाइलिसेस (फलक ६ख) राजुवुला, शोदास के सिक्को पर य गजलक्ष्मी के रूप म पाई जाती ह। पद्मवासिनी के रूप में मध्य एशिया की दीवारा पर भी य दिखाई देती ह।[4] पद्मस्थिता, पद्महस्ता लक्ष्मी खडी अथवा बठी हुई उज्जैनी के ब्रह्ममित्र द्रिवमित्र, सूय मित्र विष्णुमित्र पुरुषदत्त उत्तमदत्त तथा पाचाल के भद्रघोप के सिक्का पर दिखाई देती है।[5] इसी प्रकार अगाथोक्लीड के सिक्का पर तथा पुष्कलवती की देवी के स्वरूप में भी हमें लक्ष्मी प्राप्त होती ह।[6]

---

१ मोतीचन्द्र — पद्मश्री – पृष्ठ ५०५, फिगर ७ए।
२ जे० एन० बैनर्जी — उपयुक्त प्लेट ८ ६, पृष्ठ ३७४, ईसा की दूसरी शताब्दी, मोतीचन्द्र – उपयुक्त–फिगर १६।
३ मोतीचन्द्र — उपर्युक्त – फिगर २७ – आर्केआलाजिकल सर्वे रिपोट – १९१३ १४, पृष्ठ १२९ १३० प्लेट ४६ ९३।
४ जे० एन० बनर्जी — उपर्युक्त – पद्मिनी विद्या – ज० आई० एस० ओ० ए० – १९४१, पष्ठ १४१ १४६।
५ कुमार स्वामी — अर्ली इण्डियन आइकानोग्राफी – इस्टन आट – खण्ड १, पृ० १७८।
६ जे० एन० बनर्जी — उपर्युक्त – पृष्ठ ११० १११।
७ ए० के० कुमारस्वामी — अर्ली इण्डियन आइकोनोग्राफी – ईस्टर्न आट – खण्ड १ पृष्ठ १७५ तथा आगे।

बसाढ़ से प्राप्त कुछ मोहरो पर गजलक्ष्मी की मूर्ति प्राप्त होती है।[1] कुमारामात्याधिकरण मोहर पर लक्ष्मी पेडो के बीच खडी ह हाथी उन पर पानी छोड रहे ह तथा दो यक्ष रुपया की थली लिय हुए खड ह।[2] इसी प्रकार की एक दूसरी मोहर प्राप्त हुई है जिसम यक्ष नही उपस्थित ह[3] और दूसरा नमूना प्राप्त हुआ है जिसमें लक्ष्मी छ पखडीवाला फूल बाये हाथ म लिये खडी ह तथा यक्ष गोल बतन स रुपया उडेल रहे ह (फलक ६ क)।[4] इससे भी बढकर एक दूसरी मूर्ति एक और मोहर पर प्राप्त होती है जिसम हाथी, जो देवी का स्नान करा रहे ह कमल के फूल पर खड ह और उनके पीछे यक्ष घुटना टके हुए ह। उनके सिरा पर एक गोल सा बिल्ला लगा हुआ है और ये रुपया बिखर रहे ह।[5] एक और मोहर यही से प्राप्त हुई हे जिसम लक्ष्मी एक नीची चौकी पर खडी ह और हाथी दोनो आर से उनका स्नान करा रहे ह इनकी बाई ओर शख है, दक्षिण ओर एक रुपये की थली सी वस्तु दिखाई देती है। इस मुहर पर के लख व'गाली नाम कुण्ड कुमारामात्याधिकरणस्य से एसा ज्ञात होता है कि यह मरकट ह्रद के किसी कुण्ड की खदाई से सम्बन्धित है।[6] एक और पतली सी मोहर पर लक्ष्मी देवी की प्रतिमा प्रतीत होती हे इसम दक्षिण कर आग बढा हुआ है और बायाँ हाथ कमर पर है, एक कमल को लिये हुए एक बदामा मोहर पर इसी प्रकार की लक्ष्मी की मूर्ति बनी है, परन्तु इसमे एक लम्बी कमल के फूल की डण्डी देवी के बायें कर में है।[7] इससे पहिलवाली माहर की देवी का भी ठीक ज्ञान हो जाता है। ये सभी मोहर गुप्त युग के प्रारम्भिक काल की ज्ञात होती ह।

भीटा से प्राप्त मोहरो पर भी गजलक्ष्मी की मूर्तियाँ मिली ह। इनमें एक मे लक्ष्मी का दक्षिण कर अभय मुद्रा मे है तथा दूसरा कर गरुड पर। इनके दक्षिण की ओर एक चक्र है। इनको दो गज कमला पर खड स्नान करा रहे ह। नीचे के लख मे 'विष्ण रक्षित' लिपि म मिलता है, इससे भी वष्णवा की देवी लक्ष्मी की मान्यता यहा सिद्ध होती है।[8] एक और मोहर पर गजलक्ष्मी के साथ दो यक्ष हाथ जोड हुए कमल पर बठ हुए दिखाई देते ह, जसे उनकी आज्ञा की प्रतीक्षा करते हो।[9] एक अन्य माहर पर य देवी पूण विकसित कमल पर खडी ह, इनके दोनो हाथ उठे हुए ह। दक्षिण कर में शख है तथा बाये में थली, जिसमे से निकल कर मुद्राएँ नीचे गिरी ह, जो गोल वृत्त से दिखाई गई है।[10] यहाँ प्राय मूर्तियाँ गरुड के साथ अथवा बिना गरुड के मिली ह।

राजघाट से प्राप्त कुछ मोहरा पर भी लक्ष्मी की मूर्ति प्राप्त होती है। एक मोहर पर जिसमें 'वाराणस्याधि (स्था) नाधिकरणस्य गुप्त लिपि म लिखा है, एक देवी कमल पर खडी ह। उनके दक्षिण की ओर

---

१ टी० ब्लाच — एक्सकवेशन्स एट बसाढ — आर्केआलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया — एनुअल रिपोर्ट १९०३ ०४, पष्ठ १०७ तथा आगे प्लेट ४० ४१।

२ टी० ब्लाच — उपयुक्त — सील न० ३ इसके तीन नमूने प्राप्त हुए थे।

३ वही — उपयुक्त — सील न० ४ इसके २८ नमून प्राप्त हुए थे, प्लेट ४० १०।

४ वही — ब्लाच — उपर्युक्त — सील न० ५ इसके ९ नमूने प्राप्त हुए थे।

५ वही — उपर्युक्त — सील न० ६ प्लेट १।

६ वही — उपयुक्त — सील न० २००, पृष्ठ १३४, प्लेट ४७।

७ वही — उपर्युक्त — सील न० २०८ तथा ३१४।

८ मार्शल — आर्केआलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया रिपोट — १९११ १२ पृष्ठ ५२, प्लेट १८, सील नं० ३२।

९ वही — उपर्युक्त — सील न० ३५।

१० वही — उपयुक्त — सील न० ४२।

एक चक्र है, जो सिंहासन पर स्थित है और बाइ आर एक अस्पष्ट वस्तु है। उनके करो में थलियाँ ह जिनसे सिक्के गिर रहे ह। एक और माहर राजघाट से इसी काल की मिली है जिस पर कुमारामात्याधिकरण अकित है। जिससे ऐसा ज्ञात होता है कि यह कुमार गुप्त के काल की है। इस पर गजलक्ष्मी की सुदर मूर्ति बनी है।[१] गुप्तकाल के सिक्का पर लक्ष्मी की जो मूर्तिया मिलती ह उनम वे प्राय पद्म के ऊपर स्थित ह तथा एक हाथ मे पद्म धारण किय हुए ह तथा दूसरे में पाश।[२] य योग आसन में दोना एडी उठाकर पज नीचे की ओर किय हुए बठी हैं (फलक ६ ग)। किसी किसी सिक्के मे इनके एक हाथ मे कमलगट्टा है तथा य एक मोढ पर बठी ह।[३] कुमार गुप्त के सिक्के पर य मार को मोती चुगा रही ह। और एक सिक्के पर य सिंह पर बठी ह।[४]

देवगढ के शेषशायी विष्णु की मूर्ति में य भगवान् का चरण अपनी गोदी म रख एक हाथ स तलवा सहला रही ह।[५] जसा वणन हमे विष्णु धर्मोत्तर पुराण म प्राप्त होता है। इनके मस्तक पर किरीट है, कानो में कुण्डल गल म तौक तथा बाहु म केयूर और हाथ मे वलय ह। नीचे का भाग दिखाई नही देता। अहिछीली की जो अनन्तशायी विष्णु की मूर्ति प्रिंस आफ वेल्स म्यूजियम में है, उसमे लक्ष्मी के मस्तक पर विष्णु का हाथ है।[६]

काशी में भी गुप्त काल की एक गजलक्ष्मी की मूर्ति है जो प्राय एक फुट ऊची है[७]। यह काल भरव के मन्दिर की एक गली म एक मकान की दीवार के पाषाण खण्ड पर अकित है। लक्ष्मी समपाद स्थानक मुद्रा में खडी ह। परो के नीचे का कमल दिखाई नहीं देता है। इनकी दो भुजाएँ ह। दक्षिण कर वरद मुद्रा में है और वाम कर में एक विकसित कमल है। लक्ष्मी प्रसन्नवदना ह। इनके दाना ओर कमल के फूल कली, पत्त इत्यादि बन हुए ह। दो कमलो पर दो हाथी स्थित ह तथा अपनी सूडा को उठाकर घट से स्नान करा रह ह। घट घिस गय ह। लक्ष्मी के मस्तक पर केशविन्यास है। जूडा ऊँचा बँधा हुआ है। कानो में कुण्डल ह। गले में बड मोतिया की एक लडी माला है। बाहुओ पर केयूर ह। उत्तरीय दक्षिण कर पर से होता हुआ वाम कर पर आकर नीचे लटक रहा है। अधोवस्त्र एडी तक दिखाइ देता है। कटि मे मेखला है। नूपुर नही दिखाई देते। मूर्ति की अर्ध उन्मीलित आखे तथा नीचे लटके हुए ओष्ठ तथा शरीर की बनावट सभी इस मूर्ति को उत्तर गुप्तकाल का बताती ह।

एक और गजलक्ष्मी की प्राय इसी काल की आज गभतेश्वर मुहल्ल में मगला गौरी के नाम से पूजी जाती है। इनका भी दक्षिण कर वरद मुद्रा म है तथा बाय कर में कमल है। मस्तक के पीछ की ओर दो हाथी कमल पर स्थित घटा से इनको स्नान करा रह हैं। मूर्ति के नीच कुछ आकृतियाँ पुरुष स्त्रिया की दिखाई देती ह। इनका भी केशविन्यास बडा सुदर है। जूडा ऊपर उठा हुआ बधा है। कानो में कुण्डल तथा गले में

---

१ जे० एन० बनर्जी — डेवलपमेण्ट ऑफ हिन्दू आइकोनोग्राफी – पृष्ठ १९८, डॉ० मोतीचन्द्र – चतु मणि, पृष्ठ ८६।

२ डॉ० मोतीचन्द्र — उपयुक्त – फिगर २१।

३ वही — उपर्युक्त – फिगर २२।

४ वही — उपर्युक्त – फिगर २३, जे० एन० बनर्जी – उपयुक्त – प्लेट ६ १।

५ जे० एन० बनर्जी — उपयुक्त – प्लेट २२ २।

६ स्टेला कामरिश — दी आर्ट आफ इण्डिया – फिगर ६२।

७ नारायण दत्तात्रेय कालेकर – काशी की प्राचीन देव मूर्तिया – 'श्रीलक्ष्मी', आज २६ १० ५७, पृष्ठ ५, कालम ३।

एकावली है। बाहु पर केयूर तथा मणिबन्धा पर वलय ह। कटि म मखला तथा उसक नीच धोती है। परा म नूपुर ह।

एक दूसरी मूर्ति लक्ष्मी की गणश तथा कुवर क साथ मिलती है जा आजकल म्यूज गिम म है[1] (फलक १५ ख)। इसम लक्ष्मी की बाई ओर गणश तथा दाहिनी आर कुवर बन हुए ह। यह इतनी घिस गयी है कि यह किस काल का है यह कहना कठिन है (फलक १५ ख), परन्तु गणश, कुबेर तथा लक्ष्मी का सम्बन्ध यहा प्रत्यक्ष है। कम्बोज म भी एक शपशायी विष्ण की मूर्ति मिलती है (फलक १५ क)। इसम भी लक्ष्मी भगवान का चरण चापती हुई दिखाई गई ह।[2]

इलारा म लक्ष्मी का मूर्ति एक तालाव म निकलती हुई दिखाई गई ह (फलक १६)। यह कलासवाली गुफा म है। यहा के एक लख के अनुसार जा राष्ट्रकूट लिपि म है, यह श्री क जलक्रीडा का द्यातक है।[3] यहाँ इनका गजलक्ष्मी का स्वरूप है। यहाँ दवी पयक आसन म बठी ह तथा दा गज इनका स्नान करा रहे ह। इनके दानो आर चतुभुज दो स्त्रियाँ खडी ह। एक के हाथ म घट है तथा दूसरी के हाथ मे विल्वफल। यह चतुभुज का स्वरूप है, जसा विष्णु धर्मोत्तर पुराण म वर्णित है। इनके पद्म आसन के नीचे दा नाग स्त्री पुरुष दोनो आर बने हुए ह। दाना के हाथ म घट ह एक स्त्री और पुरुष की मूर्ति और है। इसम पुरुष अपना एक हाथ उठाये लक्ष्मी के सिंहासन को उठाय रखन का प्रयत्न कर रहा है। लक्ष्मी के मस्तक पर मकुट कान म कुण्डल गल म एकावली तथा उमठुआ हार हाथ मे वलय परा में नूपुर ह। उडासा के मन्दिरा क मुख्य द्वार पर प्राचीन भारत के मध्य युग की बहुत सी गजलक्ष्मी की मूर्तियाँ पाई जाती ह। इनके स्थान भी मन्दिरा म प्राप्त होते ह। एक गजलक्ष्मी की बडी सुन्दर मूर्ति खिचिंग से प्राप्त हुई हे (फलक १७ क)। इस मूर्ति म य चौकार आकार के मदिर म दिखाइ गई ह। य अध-पयक आसन में बठी हैं। एक पर ऊपर है दूसरा नीचे लटक रहा है। इनके बाय कर मे एक विकसित कमल है दाहिना हाथ वरद मुद्रा म है। इनके मस्तक पर मुकुट काना में कुण्डल गल मे माती की एकावली बाहु पर अगद मणिबन्धा पर वलय तथा परा म नूपुर ह। दा गज इनका घट उलट कर स्नान करा रहे ह। व भी कमल पर स्थित ह।[4]

इलारा की गुफाओ म मदिर की दूसरी मजिल म जिसे रगमहल कहते ह कुछ चित्रकारी बनी हुई है। इस चित्रकारी का देखन से एसा ज्ञात हाता है कि पहिल दीवाल पर प्राय आठवी शताब्दी म चित्रकारी की गयी थी। पीछे चल कर उसी पर दूसरी चित्रकारी की गयी। दोनो पर्तें प्रत्यक्ष दिखाई दती ह। इसमें लक्ष्मी और विष्णु गरुड पर चढ हुए आकाश माग स जाते हुए दिखाई देते है। लक्ष्मी हाथ जाड हुए गरुड की ग्रीवा मे पर डाले हुए बठी ह। इनका ऊपर का शरीर नग्न है नीचे के अग मे धाती है मस्तक पर मातिया की लडिया ह कानो मे कुण्डल गल में हार है। हाथ म चूडी और कगन बाहु पर अगद ह। य मीनाक्षी ह। नाक सुग्ग को ठौर की भाँति है। स्तन पीन ह कटि पतली है तथा उँगलिया नुकीली ह।[5]

---

१ कुमार स्वामी — यक्षाज – खण्ड २ प्लेट ८, कुमार स्वामी ने गणेश को भी यक्ष माना है। इस प्रकार यक्षराज कुबेर तथा गणेश यक्ष के बीच लक्ष्मी को भी यक्षों की रानी होना चाहिये।

२ जा प्रेजी लुस्की — ला ग्राड डी एस्स – प्लेट ८ए।

३ कुमार स्वामी — श्रीलक्ष्मी – पष्ठ १८२।

४ जे० एन० बनर्जी — डेवलपमेण्ट आफ हिन्दू आइकोनोग्राफी – पष्ठ ३७५, टी० ए० गोपीनाथ राव – उपयुक्त – प्लेट ११०।

५ जे० एन० बैनर्जी — उपयुक्त – प्लेट १८२।

६ कुमार स्वामी — हिस्ट्री ऑफ इण्डियन एण्ड इण्डोनेजियन आर्ट – पृष्ठ १०० १०१, फिगर १६६।

दक्षिण भारत म पल्लवा का बनवाया हुआ प्राय नवी शताब्दी का विरत्तनश्वर का मन्दिर तिरूत्तनी म है। यह कस्बा चित्तूर जिल म है तथा अरकाणम के स्टशन क पास ही है। इस पर के अभिलख से पता चलता है कि इस मदिर क। नाम्नी अप्पी न बनवाया था। यहाँ मदिर के द्वार पर आल के भीतर उत्तर की ओर एक देवी की मूर्ति है और दक्षिण की आर गणश की मूर्ति हे। इस देवी की मूर्ति का कुछ लोगा न दुर्गा की मूर्ति बताया है।[1] परन्तु है यह लक्ष्मी की मूर्ति है क्याकि इनके एक हाथ म शख और दूसरे में पद्म है। यह समपाद मुद्रा मे खडी ह। मस्तक पर लम्बी टापी के भाँति का मकुट है। कान। म कुण्डल गल मे हार बाहुआ पर केयूर, मणिबन्धा पर कक्ण कटि मे मेखला और परा म नूपुर ह। ऊपर के अग मे अँगिया है और नीचे के अग पर धोती।[2] यहाँ भी लक्ष्मी की मूर्ति गणश के साथ दिखान से इन दाना के प्राचीन सम्बन्ध की परम्परा के अक्षुण्ण स्रोत का प्रमाण मिलता है।

दक्षिण के अमरपुरम् से ८ मील दूर हेमावती म पल्लवो के काल का एक दूसरा मदिर भी स्थित है। यह मदिर नोलम्बवाडी म है और नालम्बा का बनवाया हुआ है।[3] य लोग पल्लवा के ही घरान के थ। इस मदिर के तोरण पर एक गजलक्ष्मी की मूर्ति है। इस दवी का द। गज दाना ओर से स्नान करा रहे ह। देवी के दोना आर कुवर और यक्षी की मूर्तियाँ बनी हुई ह। इसस लक्ष्मी का स्पष्ट सम्बन्ध यक्षराज कुबर और उनकी रानी से ज्ञात होता है। दक्षिण की य मूर्तिया हमारे लिय बड काम की ह इस कारण कि भारत के उस भाग में आदिवासिया की बहुत सी बस्तियाँ अब भी विद्यमान ह और उनकी अपनी परम्परागत विचारधारा अब भी वसी ही बनी हुई ह जसी हजारा वष पूव थी। इस कारण इन पर हमें ध्यान देना आवश्यक है।

या हमे उत्तर भारत म पद्महस्ता लक्ष्मी की मूर्ति खजुराहो के मौनव्रती विष्णु के साथ भी मिलती है। य विष्णु के बायें खडी ह और हाथ में पद्म है। बडी सुन्दर मूर्ति है।[4] मस्तक पर माँग में एक लडी मोती है गले मे एकावली तथा हाथ मे वलय ह।

इससे भी सुन्दर स्वरूप लक्ष्मी का खजुराहा के पाश्वनाथ के मदिर मे नारायण के साथ देखन का प्राप्त होता है। यहा भी लक्ष्मी हमे दा भुजावाली मिलती ह। इनके एक हाथ म कमल है जो नारायण की ग्रीवा पर है। यहा इनका लास्य भाव दरसाया गया है। ये सर्वाभरण भूषिता ह। ऊपर का अग नग्न है। नीचे के अग मे धोती है।

मद्रास के सग्रहालय में दो पाषाण तथा एक अष्टधातु की बनी हुई तीन लक्ष्मी की मूर्तिया ह। पत्थर की मूर्तियाँ उत्तरी भारकोट जिल में मिली थी तथा अष्टधातु की छाटी सी मूर्ति तजोर जिले के अतगी तालुके के एनाडी गाँव मे खुदाई के फल स्वरूप प्राप्त हुई है। इन मूर्तिया की यह विशषता है कि इनकी बाहर की रेखा देखन से य श्रीवत्स के चिह्न के समान ज्ञात हाती है। इसी रूप को लकर इनमें लक्ष्मी की प्रतिमा बनाई गई है। पत्थर की मूर्ति तथा अष्टधातु की मूर्ति तो बिलकुल श्रीवत्स के चिह्न के भाति है।[5] इनमें श्री देवी के

---

१ डुगलस बारेट — तिरूत्तनी – दी हेरिटेज आफ इण्डियन आर्ट, न० २ – भूला भाई मेमोरियल इन्स्टिटयूट, बम्बई – १९५८ पृष्ठ ४।

२ वही — उपर्युक्त – प्लेट ५।

३ वही — हेमावती – दी हेरिटेज आफ इण्डियन आर्ट सीरीज – भूलाभाई मेमोरियल इन्स्टिटयूट, बम्बई – १९५८ प्लेट २०।

४ जे० एन० बनर्जी — उपयुक्त – प्लेट २४।

५ वही — उपर्युक्त – प्लेट १९ – १ तथा ३, पृष्ठ ३७६।

सिर पर मुकुट कानो मे कुण्डल गले में हार वक्षस्थल पर छन्नवीर इत्यादि ह । य पद्म के सिंहासन पर पद्मासन म स्थित ह । शख तथा पद्म इनके हाथ म दिखाई दते ह । अष्ट धातु की मूर्ति के हृदय पर एक चौकार स्थान बना हुआ है, जहाँ कदाचित कौस्तुभ मणि जडी थी।[1] यह भी श्रीवत्स के चिह्न के आकार की बनाई गई है (फलक १७ ख)। प थर की दूसरी मूर्ति स्पष्ट है।[2] इसम लक्ष्मी पयक आसन म ह । ये पद्म पर स्थित ह । दोनो हाथ इनके उठ हुए ह । बाय में शख है दक्षिण म पद्म हे । मस्तक पर किरीट है कानो म कुण्डल ह गल म तौक है। हाथ म वलय ह। कमर म कमरबन्द तथा परा म नूपुर ह। दो हाथी इनका स्नान करा रहे ह । य स्तनपट तथा धोनी पहिन हुए ह । मामल्लपुरम क मन्दिर म लक्ष्मी की जो मूर्ति प्राय सातवी शताब्दी की बनी हुई है।[3] उसम देवी पयक आसन मे कमल पर स्थित ह । दाना आर दो भीमकाय गज बन हुए ह । इनमें एक तो घट सूड म लकर देवी को स्नान करा रहा हे परन्तु दूसरा सूड नीचे किय हुए कदाचित दूसरा घट उठा रहा है। देवी के दोनो ओर चार स्त्रिया ह । पासवाली दोनो स्त्रियो के हाथ म भी घट ह । लक्ष्मी के बायें वाली स्त्री के पीछवाली के हाथ मे शख है परन्तु दक्षिणवाली के हाथ म क्या है यह पता नही लगता । इन स्त्रियो के सिरा पर मुकुट ह काना म कुण्डल गल में हार हाथ म वलय है तथा परा म नूपुर । देवी के मस्तक पर लम्बा टोपीनुमा मकुट काना म कुण्डल गल म हार तथा वक्षस्थल पर छन्नवीर हाथा म चूडी तथा वलय है। पैरो में नूपर ह । इनके बायें कर में विकसित कमल है परन्तु दाहिना हाथ टूटा हुआ है (फलक १८)।

कम्बाडिया अथवा कम्बोज से भी लक्ष्मी की एक समपाद मे खडी मूर्ति प्राप्त हुई है। यह काँसे की है। इसका काल प्राय १६ वी शताब्दी ज्ञात होता है। देवी के मस्तक पर पवत शृगा के स्वरूप का मुकुट है। कानों में लटकते हुए कर्णाभरण ह गल म तौक बाहुआ म अगद मणिबन्धो पर वलय कटि में मेखला तथा धोती है। परो म नूपुर है। शरीर का ऊपर का भाग नग्न है एसा ज्ञात होता है कि कम्बोज में भी इनकी पूजा होती थी।[4]

प्राचीन भारत के मध्ययुग म वष्णवी की भी मूर्ति बनन लग गयी थी। इन मूर्तिया म दवी के हाथ में विष्णु के सब अस्त्र दिखाय जाते थ । इनके पीन स्तना से ही इनकी पहिचान हो पाती है। हेमाद्रि वृत्त खण्ड के अनुसार इनको चतुभुज बनाना चाहिय।[5] इस बात की एक मूर्ति मयूरभज मे किंचिग स्थान से प्राप्त हुई है।[6] यह मूर्ति एक सिंहासन पर अर्धपयक आसन म स्थित है। इनके सिंहासन के नीचे के भाग में गरुड की मूर्ति बनी है । सिंहासन मे दोनो ओर गन्धर्व उडते हुए दिखाय गय है। वष्णवी चतुर्भुजी ह । आगे का दक्षिण कर अभय मुद्रा म है बाया कर कोई अस्पष्ट वस्तु को पकड हुए है जो कदाचित् कमल था, अब टूट गया है। पीछे के दक्षिण कर म चक्र तथा बाय मे शख है। मस्तक पर दक्षिण भारत के मन्दिरो के शिखर की भाति का मुकुट है । इस मुकुट के दानो ओर पक्ष बन हुए ह । कानो मे स्कन्धो तक लटकते हुए कुण्डल ह । गले में एकावली (मगलसूत्र) तथा ग्रवेयक (तौक) है, बाहुओ पर केयूर तथा मणिबन्ध पर वलय ह। वक्ष

---

१ वही — उपयुक्त — प्लेट १६ २ ।

२ वही — उपयुक्त — प्लेट १६ — २ ।

३ गोपीनाथ राव — एलिमेण्टस आफ हिन्दू आइकोनोग्राफी — प्लेट १०६ ।

४ जिम्मर — दी आट ऑफ इण्डियन एशिया भाग २ प्लेट ५६४ बी०

५ हेमाद्रि वत्तखण्ड — पयक चतुभुजी कार्य्या देवी सिंहासना शुभा । सिंहा बृहन्नालकारे काय तस्याश्च कमलशुभम । दक्षिणे यादवश्रेष्ठ केयूर प्रान्तसस्थितम् । वामेऽमृत घट कायरतथा राजन मनोहर । तस्याश्च द्वौ करौ कार्यौ, बिल्वशखधरौ द्विज ।'

६ जे० एन० बनर्जी — डेवलपमेण्ट आफ हिन्दू आइकोनोग्राफी — प्लेट ४४ १ ।

स्थल पर एक उपवीत है तथा छन्नवीर भी दिखाई देता है। कमर में कटिबन्ध तथा मेखला है। परो मे नूपुर ह। एसा ज्ञात होता है कि ऊपर के अग म एक आधी बाह की कुर्ती तथा नीचे धोती दिखाई देती है। इनके आसन के नीचे से इनकी धोती का एक सुन्दर भाग नीचे लटक रहा है। दक्षिण पर कमल पर स्थित है। इनके मुख से एसा ज्ञात होता है कि जसे परदुख से द्रवित देवी उपासक को अभय प्रदान कर रही ह। यह मयूरभज से प्राप्त हुई ह।

पीछे के काल की एक और वष्णवी की मूर्ति बनारस से प्राप्त श्री वृन्दावन भट्टाचाय न प्रकाशित की है।[1] यह मूर्ति खडी हे। इसका बाम पद किसी ऊचे स्थान पर था परन्तु अब पिण्डली से टूट जान के कारण कुछ पता नही चलता कि किस पर था। दक्षिण पर सीधा है। इनके आग के बायें कर में शख है, दक्षिण कर टूटा हुआ है। पीछे के दक्षिण कर मे एक गदा है और बायें में एक चक्र है। बाई ओर चक्र के पीछे सिंहासन की पीठ पर गणश की मूर्ति है। वष्णवी से गणेश का सम्बन्ध सप्तमातृ का के एक फलक से स्पष्ट हो जाता है।[2] देवी मस्तक पर एक भारी मुकुट पहिन ह। इसके आगे के भाग में बाल स्पष्ट दिखाई देते ह कानो में कुण्डल ह ग्रीवा मे चन्द्रदन्ती हार तथा स्तनो पर लटकता हुआ एक दूसरा हार है। बाहुओं में केयूर मणिबन्धो पर पतले वलय कमर में मेखला है जिससे लटकती हुई कई लडियाँ ह तथा उपवीत है।

एक और मूर्ति वष्णवी की इलौरा में सप्तमातृका के साथ मिलती है। इसमें वष्णवी, कौमारी तथा वाराही के बीच में प्राप्त होती है। इनमें सप्तमातका है, उनमें वीरभद्रा ब्रह्माणी माहेश्वरी, कौमारी वष्णवी वाराही इन्द्राणी चामुण्डा तथा गणश ह। वष्णवी अधपयक आसन मे स्थित ह। इनके पीछे के दो हाथा में चक्र तथा शख ह। आगे के बायें हाथ में कमल है। दक्षिण कर अभय मुद्रा में है। मस्तक पर केश का जड, उसके मे मेखला तथा परो में नूपुर ह।[3]

और पीछे की एक दूसरी वैष्णवी कुम्भकोनम मे मिलती है।[4] ये भी अध पयक आसन में बठी है। आगे का दक्षिण कर अभयमुद्रा में है। बायाँ कर बाये पर पर है। पीछे के दो हाथो मे एक में शख तथा एक मे चक्र धारण किये हुए ह। सिर पर मुकुट कानो में कुण्डल गल म एकावली, तौक, वक्षस्थल पर छन्नवीर है। बाहु में केयूर मणिबन्धो पर वलय तथा कमर में मेखला और परा में नूपुर ह। इनके साथ गणश के स्थान पर यक्षी की मूर्ति है।

बिल्लौर म जो वष्णवी की मूर्ति सप्तमातृका के साथ प्राप्त हुई है यह पद्मासन में स्थित ह। सर्वाभरण भूषिता है। पीछे के दो हाथों में शख और चक्र हैं। आग का दक्षिण कर अभय मुद्रा म है और बायें में पद्म ह। इनके साथ गणेश ह।[5]

मध्ययुग की जो वष्णवी की मूर्ति मादेयूर से मिली है उसमें केवल दो हाथ है। दक्षिण कर अभय मुद्रा में है तथा बायाँ वरद मुद्रा में। यह मूर्ति एक गोल पीठ पर खडी है। इसके नीचे कठघरा बना है। मस्तक पर एक ऊँचा-सा दक्षिण के मन्दिर के शिखर की भाँति का मुकुट है। मुकुट के नीचे बन्दी है। मुकुट से झूलते हुए मोतियों के गुच्छे ह। कण्ठ मे एकावली तथा उसके नीचे चूडादन्ती की तौक है। वक्षस्थल पर छन्नवी–

---

१ वृन्दावन भट्टाचार्य — इण्डियन इमेजेज – प्लेट २७।
२ गोपीनाथ राव — उपर्युक्त – पष्ठ ३८३ के समक्ष प्लेट ११८ – (१)।
३ उपयुक्त।
४ गोपीनाथ राव — उपर्युक्त – प्लेट ११९।
५ गोपीनाथ राव — उपर्युक्त – प्लेट ११८–(२)।

है तथा उपवीत नीचे तक लटकता हुआ है। बाहु पर सुन्दर केयूर है, कटि मे मेखला है जिससे लटकती हुई धोती देवी के शरीर पर है। मस्तक के वाम तथा दक्षिण भाग म केश फल हुए दिखाये गय ह जसे उस काल में शिव के दिखाये जाते थे।[1]

एक मूर्ति वष्णवी की कन्नौज से प्राप्त हुई है। यह मर्ति समपाद भाव मे खडी विष्णु के एक ओर अकित है। विष्णु के दूसरी ओर भू देवी की मूर्ति वष्णवी की मूर्ति के सदश है। यह वष्णवी की मूर्ति चतुभुज है। ऊपर के दोना करा मे विष्णु के दो आयुध शख और चक्र ह। नीचे के बाय हाथ म घट है और दक्षिण कर वरद मुद्रा म है। मस्तक पर मुकुट ह तथा और अगा म विविध आभूषण ह।[2]

प्राय इसी काल की एक मूर्ति काशी म लक्ष्मी के विष्ण और परिणय की मिलती है।[3] यह मूर्ति मणि कर्णिका घाट के सिद्ध विनायक मन्दिर के पीछ एक शिला पर उत्कीण है। ऐसा ज्ञात हाता है कि यह पाषाण-खण्ड किसी प्राचीन मन्दिर का भाग था जो यहा नवीन मन्दिर बनाते समय लगा दिया गया है। एसा काशी के बहुत से मन्दिरा मे हुआ है। इस फलक पर विष्णु लक्ष्मी का पाणिग्रहण कर रहे ह। ऊपर की आर देवताआ को एक पक्ति का दश्य था जो अब प्राय नष्ट हो चुका है। यह समूह बरातियो का ज्ञात होता है। इन्द्र का एरावत तथा शिव का नन्दी स्पष्ट रूप से दष्टिगाचर हाते ह। नीचे विष्णु के मस्तक पर करण्डक मुकुट है। यह चतुभुज मूर्ति है। पीछे के बाये हाथ में शख और दाहिन म चक्र है। आगे के दक्षिण कर से लक्ष्मी का दक्षिण कर पकड हुए ह बाएँ कर में अधोवस्त्र का एक भाग है। विष्णु के काना मे गोल कुण्डल ह कण्ठ में ग्रवेयक (तौक) तथा उपवीत है। बाहु म केयूर मणिबन्ध पर वलय है कटि मे मेखला है। उत्तरीय तथा पीताम्बर धारण किय हुए है। ये समपाद भाव म खडे ह। लक्ष्मी का एक पर पीछ है और दक्षिण पर आगे के ये अपना शरीर विष्णु की आर करके तिरछी आती हुई दिखाई गयी ह। इनका दक्षिण कर विष्णु के हाथ में है और बाय में कमल धारण किय हुए ह। देवी के मस्तक पर केश कलाप के पीछ एक किरीट दिखाई देता है और कानो मे कुण्डल ह गल में एकावली तथा तौक है वक्षस्थल पर छन्नवीर है। बाहुओ में केयूर तथा हाथ में वलय है। स्तनपट तथा धाती य धारण किय हुए ह कटि पर मेखला है। इन दोना मूर्तिया के बगल मे पुरुष तथा स्त्री आकृतियाँ ह। इनके शरीर काल के प्रभाव से गल गये ह। फिर भी विष्णु के पीछ एक द्विभुज पुरुष की मूर्ति दिखाई देती है। इनके मस्तक पर भी एक करण्डक मुकुट दिखाई देता है जो विष्णु के मुकुट से छोटा है। इसी पुरुष के पास एक स्त्री मूर्ति भी है। लक्ष्मी के पीछे भी एक स्त्री मूर्ति है, जो हाथ म कुछ लिये हुए है। इसके मस्तक पर का उठा हुआ जूडा स्पष्ट दिखाई देता है। इसके पर के पास भी एक बालक की आकृति दिखाई देती है। ये आकृतिया राजा रानी तथा उनके परिवार के बालका की होनी चाहिये, जिन्होने इस मर्ति का निर्माण कराया था (फलक २०)।

एक गजलक्ष्मी की मूर्ति प्राय मध्ययुग की सिद्ध विनायक मन्दिर के सामने के मकान की दीवार पर दिखाई देती है। यह मूर्ति चतुभुज है। इस फलक में लक्ष्मी अध पर्यंक आसन म एक विकसित कमल पर बठी हैं।[4] आगे का दक्षिण कर वरद मुद्रा मे है तथा बायें मे मातु लिंग है। ऊपर के दक्षिण कर में पुस्तक

---

१ वही — उपर्युक्त – प्लेट–१११।

२ रामकुमार दीक्षित — कन्नौज – शिक्षा विभाग, उत्तर प्रदेश – फलक – ६।

३ नारायण दत्तात्रेय कालेकर – काशी की प्राचीन देव मूर्तियाँ – ६ श्री लक्ष्मी – 'आज' शनिवार २६ अक्तूबर, पष्ठ ५ कालम १, २।

४ वही – उपयुक्त– "श्रीलक्ष्मी" 'आज' – दिनाक २६ १० ५७, पष्ठ ५, कालम ३।

तथा वाम मे कमल है। देवी के दोना ओर स्त्री-पुरुष की आकृतिया ह। देवी के मस्तक पर मुकुट कानो मे कुण्डल कण्ठ मे तीक बाहु पर केयूर मणिबधा पर वलय वक्षस्थल पर छत्रवीर तथा उपवीत कटि में झालर दार मेखला परा मे नूपुर ह। यह मूर्ति प्राय दो फुट ऊची है। यह मूर्ति तान्त्रिक पूजा के हेतु बनाई गई प्रतीत होती है।

गजलक्ष्मी का मूर्तियाँ काशी के अनक मदिरा के तोरणा पर दिखाई देती ह जसे विशालाक्षी या केदारेश्वर के मन्दिरो के तोरणा पर। य बहुत प्राचीन नही ह, परन्तु एक प्राचीन शृखला की द्योतक ह।

जापान मे भी लक्ष्मी का मन्दिर विद्यमान है[1] जा प्राय सालहवी शताब्दी का समझा जाता है। यह मूर्ति प्राचीन जापानी सम्भ्रान्त महिला की वेष भूषा म है। इसस एसा पता चलता है कि सुदूर पूव तक इनकी पूजा का प्रचार हुआ था।

इन्ही मूर्तियो के साथ श्रीचक्र का भी विवरण देना आवश्यक है जिसको बनाकर प्राचीन मध्ययुग में पूजा हुआ करती थी। यह प्रकरण तान्त्रिक है परन्तु इसमे का त्रिकोण उसी योनि का द्योतक है जो हमे प्राचीन काल की माताओ की नग्न मूर्तियो मे देखन को मिलता है। प्राचीन काल मे यह मातत्व का, उत्पादन शक्ति का तथा सौभाग्य का चिह्न समझा जाता था।[2] विशेष रूप स कृषक समाज का तो जीवन ही उत्पादन पर निभर होने के कारण माता में विशेष विश्वास था। इस चक्र मे प्राय ४३ त्रिकोण बनाय जाते ह तथा इनके चारो ओर दो वत्त। दोनो में कमल दिखाय जाते ह। इन त्रिकोणो पर बीज मत्र लिख रहते ह।[3] बीचवाले त्रिकोण के बीच में एक बिन्दु दिखाया जाता है। इसको मेरु के शिखर की भाँति भी बनाया जाता था।[4] यह चक्र धातु की पट्टी[5] सगमरमर तथा और दूसरे पत्थरो पर बनाया जाता है। इसका एक साधारण रूप एक दूसरे को काटते हुए दो त्रिकोण बना कर तथा उसके बीचम ऊँ एँ ह्री क्ली सौ जगत्प्रसूत्य नम लिख कर और इन त्रिकोणो के चारो ओर तीन वृत्त खीच कर उसम कमल दल खीच कर बनता है (फलक २१)। इसकी भी पूजा होती है।

एक और स्वरूप इनका दीपलक्ष्मी का मिलता है। दक्षिण के मन्दिरो में आज भी यह स्वरूप सखी के रूप में भगवान के साथ रखा जाता है। दिवाली के एक दिन पहिले दीपक लक्ष्मी की पूजा होती है क्योकि दीपक को भी समद्धि का एक चिह्न समझा जाता है। दीप लक्ष्मी की एक मूर्ति तो तक्षशिला की है जसा पहिले लिखा जा चुका है और एक मूर्ति गाधार कला की प्राप्त होती है। इसम भी य सर्वाभरण भूषिता हाथ म एक दीपक लिये हुए दिखाई गई ह।[6] आज जो इनकी मूर्तियाँ बनती ह उनम इन्हें पद्म पर समपाद मुद्रा में खडा दिखाया जाता है। एक मूर्ति दीपलक्ष्मी की मथवारा वारगल से याजदानी को मिली थी जो इसी मुद्रा म खडी है। इसी प्रकार की और कई मूर्तिया दक्षिण से प्राप्त थी आ० सी० गागुली जी न भी अपनी पुस्तक मे प्रकाशित

---

१ भिक्षु चिम्मन लाल — जब शिव जी ने जापान को चीन के हमले से बचाया — धमयुग १२ फरवरी १९६१ — पृष्ठ ९ पर अकित लक्ष्मी की मूर्ति।

२ जे० प्रेजिलुस्की — ला ग्राण्ड डी ऐस — पृष्ठ ४७, ४८।

३ गोपीनाथ राव — एलिमेण्टस ऑफ हिन्दू आइकोनोग्राफी पष्ठ ३३०।

४ क्या यह माँ डु वीनस का द्योतक है — प्रेजिलुस्की — उपर्युक्त — पृष्ठ ४७।

५ गोपीनाथ राव — उपर्युक्त — प्लेट ९७।

६ आर्केआलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया — एनुअल रिपोट — १९१५ १६, प्लेट ५।

७ जी० याजदानी — दी लैम्प बेयरर (दीपलक्ष्मी) — जे० आई० एस० ओ० ए० खण्ड २ न० १, पृष्ठ ११, प्लेट ८।

की है ।[1] गुजरात से प्राप्त इसी प्रकार की एक मूर्ति बडौदा के सग्रहालय में तथा दूसरी प्रिंस आफ वल्स म्युजियम, बम्बई में है ।[2] ये दोनो पीतल की हैं ।

इस प्रकार लक्ष्मी की मूर्ति के विकास का क्रम चलता रहा है। भारतीय कलाकार की अपनी मान्यताए थी और हैं। इन पर विदेशी प्रभावो का आक्रमण समय-समय पर होता ही रहा परन्तु हमारे कलाकारो ने उन प्रभावो का भारतीयकरण करके ही अपनाया। विदेशी कला के नमूनो के प्रतिरूप बनाने में इनको कोई महत्व नही दिखाई दिया क्योकि भारतीय कला का आधार कल्पना की भित्ति पर सजित आदर्शवाद रहा है और पश्चिमी कला का आधार यथार्थवाद की नीव पर निर्मित कल्पना रही है। पश्चिमी कला का उद्देश्य बाहरी सौन्दर्य का सजन रहा है और हमारी कला का रस की अनुभूति कराना। जिस प्रकार भारतीय साहित्य तथा सगीत से इसका प्रतिपादन होता है उसी प्रकार मूर्ति कला मे भी। यदि साहित्य और सगीत श्रव्य काव्य है तो मूर्ति कला दृश्य काव्य है और काव्य की परिभाषा है रसात्मक वाक्य। जहा वाणी मूक है वहा हाव भाव मुद्रा अग भग साज-सज्जा द्वारा ही रस का प्रतिपादन करना होता है। नाटक चित्रकला मूर्तिकला, स्थापत्य कला सभी दृश्य काव्य हैं परन्तु नाटक चलचित्र होने के कारण और कलाओं की अपेक्षा अधिक सरलता से रस का प्रतिपादन कर सकता है क्योकि भाव भगी का बदलना सम्भव है और एक के पश्चात दूसरा स्थायी और सचारी भावो का प्रदर्शन कर के रस की अनुभूति कराई जा सकती है। परन्तु मूर्ति कला चित्र कला तथा स्थापत्य कला में एक ही स्थित हाव भाव से इस का सम्पादन करना पडता है जैसे शिव की ताण्डव मूर्ति से रौद्र रस का भाव दर्शक के हृदय मे उत्पन्न होना चाहिये। यदि कलाकार इस कार्य मे विफल रहा तो वह मूर्ति निर्जीव हो जाती है। इसी प्रकार यदि बुद्ध की अभय मुद्रावाली मूर्ति का दर्शन से ही हमारे हृदय मे शान्त रस का सचार न हुआ तो कलाकार का प्रयास व्यर्थ हो जाता है। सभी मूर्तियाँ इसी प्रकार रस विशेष के प्रतिपादन के हेतु बनाई जाती हैं। यदि दर्शक के हृदय मे कलाकार के इच्छानुसार रस उत्पन्न न हुआ तो उस मूर्ति के चारो ओर कितना भी आडम्बर खडा किया जाय वह सब व्यर्थ हो जाता है।

देवी लक्ष्मी की जिन मूर्तियो का यहा हमने अध्ययन किया उनमे भी इसी प्रकार रस के प्रतिपादन का प्रयत्न किया गया है। जो मूर्तियाँ अभयमुद्रा मे हैं उनके दर्शन से हृदय मे शान्ति का सचार होता है जो वरदमुद्रा में हैं उनसे आशा की प्राप्ति होती है। जैसा भाव हाथ की मुद्रा से प्रदर्शित किया जाता है वैसा ही भाव मुख पर भी कलाकार ने उत्पन्न किया है अग भगी भी उसी के अनुरूप दिखायी गई है। साहित्य में जो वर्णन मिलता है, यहाँ उसका प्रत्यक्ष रूप हमारे समक्ष है।

---

१ ओ० सी० गागूली – साउथ इण्डियन ब्रजेज – पृष्ठ २५, प्लेट ३५ ३६।

२ स्टेला क्रामरिश – दी आर्ट ऑफ इण्डिया थ्रू दी एजेज – फिगर १५४ तथा पृष्ठ २२८, फिगर २७।

१२

निष्कर्ष

भारत म यक्ष पूजा अति प्राचीन काल स प्रचलित रही है तथा यहा के आदिवासी इनका सवशक्तिमान् देवता के रूप म भजते रहे ह। इनका विश्वास था कि यही पानी बरसाते ह तथा य ही खत म अनाज तथा वक्षा पर फल इत्यादि उगाते ह।[१] इन यक्ष तथा यक्षिणियो को आर्यों न अपना लिया।[२] यह उनके लिय आवश्यक भी था क्याकि आय भारत म यदि बाहर स आय तो अपन साथ पर्याप्त सख्या म स्त्रिया तो लाय नही होग। यही की स्त्रिया के साथ विवाह सम्बन्ध होन से उनके देवता नही नही करते हुए भी घर म पहुच गय होगे जो हाल आज भारत में मुसलमानो का हुआ है। इनके यहाँ भी हिन्दू तीज त्योहार किसी-किसी रूप में मान जान लग ह। यक्ष शब्द ऋग्वद म तथा अथववेद म कई स्थानो पर आया है। ऋग्वेद म यक्षो का बहुत अच्छा भाव स नही दखा जाता था। अग्नि से प्राथना मिलती है कि यक्ष के पास न जाय।[३] यह भी प्राथना मिलती है कि हे देवता, हम यक्ष न मिल।[४] अथववेद में आकर यह वणन मिलता है कि यक्ष इस ब्रह्माण्ड के बीच मे स्थित ह[५] और यहा कुबर तथा उनक पुत्र पुण्यजन के नाम से पुकारे गय ह।[६] शतपथब्राह्मण म तथा तत्तिरीय ब्राह्मण म[७] यह भावना प्राप्त होती है कि मनुष्य तप से यक्ष हो सकता है। बृहद आरण्यक में यक्ष ब्रह्मा की गद्दी प्राप्त कर लते ह। उस यक्ष को कौन जानता है जो स्वमभू ह जो ब्रह्मा ह।[८] एसा वाक्य प्राप्त होता है। पीछे चलकर यक्षो के राजा कुबर उत्तर के दिक्पाल हो जाते ह। रामायण म यक्षत्व की प्राप्ति अमरत्व की प्राप्ति मानी गयी है (वाल्मीकीय रामायण ३, ११, ८, ४)।

महाभारत म कुबर की स्त्री भद्रा (१ १९९, ६) तथा ऋद्धि (१३ १४६ ४) मिलती ह परन्तु लक्ष्मी से भी इनका सम्बन्ध मिलता है (३ १६८ १३) चीनी बौद्ध ग्रन्थो म लक्ष्मी मणिभद्र की पुत्री कही गयी ह सिरिका लक्ष्मी जातक (न० ३९२) म य धनरथ की लडकी कही गयो ह जो हम यक्ष के रूप म भारहुत म प्राप्त होते ह।[९] मणिभद्र भी एक यक्षराज ह तथा कुबर के मुख्य पाषद ह।[१०] महाभारत म यक्षिणी के एक मन्दिर का राजगृह म वणन प्राप्त होता है (३ ८३ २३) कदाचित यह मन्दिर लक्ष्मी का रहा हो।

श्री सूक्त को छोडकर श्री शब्द ऋग्वेद मे जसा पहिल लिखा जा चुका है प्राय शोभा कान्ति एश्वय सम्पदा इत्यादि के अथ में प्रयुक्त हुआ है। लक्ष्मी भी सम्पदा के अथ में व्यवहार किया गया है। सबसे प्रथम

---

१ फरगुसन — ट्री एण्ड सरपेण्ट वरशिप – पष्ठ २४४।
२ कुमार स्वामी — यक्षाज – खण्ड १ पष्ठ ३।
३ ऋग्वेद ५, ७०, ४।
४ उपयुक्त ७, ५६, १६।
५ अथववेद १०, ७, ३८।
६ उपर्युक्त ८, १०, २८।
७ कुमार स्वामी — यक्षाज – खण्ड, २ पष्ठ ३।
८ बृहद् आरण्यक – ५, ४।
९ कुमार स्वामी — यक्षाज – खण्ड २ पृष्ठ ४।
१० वही — यक्षाज – खण्ड १ पृष्ठ ७, शाखायन श्रौत सूत्र १, ११, ६।

शतपथ ब्राह्मण म' ही श्री का रूप कुछ फलीभूत हाता है।[1] तत्तिरीय उपनिषद म श्री वस्त्र गौ भाजन धन इत्यादि की प्रदाता वर्णित ह[2] तथा ग ह्य सूत्र म इनका पलग के सिरहान बलि दन का विधान है।[3] श्रीसूक्त मे वर्णित लक्ष्मी का वणन किया जा चका है।

इनका विष्ण से सम्ब ध अथवा नारायण से सम्ब ध प्राय पुराणा स पूव नही मिलता। वदिक देवी अदिति का ही सम्ब ध विष्णु से वेदो मे मिलता है।[4] यही सवप्रदाता सबकी माता कही गई ह।[5] पुराणा म रामायण तथा महाभारत मे उनका स्वरूप स्पष्ट होता है। रामायण म य कुबर के पुष्पक विमान पर गजलक्ष्मी के रूप मे हाथ मे पद्म लिय हुए वर्णित ह। महाभारत म लक्ष्मी का श्रीपद्मा कहा गया है तथा इनसे कहलाया गया है म ही विजय दिलाती हूँ म ही समृद्धि प्रदान करती हू म विजयी राजा के पास रहती हूँ इत्यादि। यहा ये क्षीर सागर के मन्थन से उत्पन्न होती ह। सती सावित्री को देखकर जन-साधारण उनको श्री की प्रतिमा कह कर सम्बोधित करते ह।[6] जिससे एसा ज्ञात होता है कि उस समय श्री की प्रतिमा बनन लगी थी। पुराणा मे इनको पद्मकरा पद्मालया पद्मानना जल से उत्पन्न जिनको गजस्नान करा रहे ह जो समद्र मन्थन से उत्पन्न हुइ जो वष्णवी हैं कहा गया है। बौद्ध ग्र थो म इनकी पूजा का निषध है।[7] इनके पथ का वणन और पथा के साथ मिलि द पन्ह (१९१) म मिलता है, परन्तु प्राय यहा यही कहा गया है कि य विवेक स काम नही लती मूर्खों पर भी प्रसन्न हो जाती ह। य सिरीका लक्ष्मी जातक (न ३९२) म कहती ह म ही मनुष्यो को राज्य दिलाती हूँ म ही श्री (सौन्दय) हू इत्यादि।

बौद्ध जन तथा प्राचीन आर्यों के निषध पर भी इनका पूजा चलती रही और इनकी मूर्तियाँ साची भारहुत बोधगया के पवित्र बौद्ध स्थाना के तारणा पर बनी। कौशाम्बी में तो इनका एक मन्दिर स्तूप के पास घोषिताराम के विहार मे प्राप्त हुआ है जो प्राय ईसा के प्रथम शताब्दी का है। जसा पहिल लिखा जा चका है और भी इनके मन्दिर रहे हाग परन्तु एसा अनुमान हाता है कि विशषरूप से इनकी पूजा गृहस्थों के घरो म होती थी जसे प्राय आज भी हाती है।

मूर्तियो के अध्ययन से यह निष्कष निकलता है कि लक्ष्मी भारत के आदिवासियो की एक देवी थी जो यक्षिणी अथवा यक्षा की रानी के रूप में पूजित हाती था इनका य सवप्रदायिनी देवी समझते थ तथा इनको बकरे को बलि दा जाती थी। प्राय एसा अनुमान हाता है कि व्यापारी बाहर जान के पूव इनकी पूजा करते थ। यहा इनकी पूजा वसे ही होती थी जसे पश्चिमी एशिया मे माता की पूजा होती थी। प्राचीन काल म इनको नग्न भी दिखाया जाता था (फलक ११) तथा वस्त्रा से आच्छादित भी। भारत में य प्राय आभूषणा से सुसज्जित दिखाई जाती थी। इनका सम्ब ध विशष रूप स कमल और जल से था। लक्ष्मी का आर्यों के देवताओ में समावेश शतपथ के काल म हुआ एसा जान पडता है परन्तु इनका यक्षा स बहुत पीछे के काल तक सम्ब ध बना ही रहा।

---

१ शतपथ ब्राह्मण — ११, ४, ३१।
२ तत्तिरीय उपनिषद — १, ४।
३ कुमार स्वामी — अर्ली इण्डियन आइकोनोग्राफी – श्रीलक्ष्मी – पृष्ठ १७५।
४ तत्तिरीय सहिता – ७, ५, १४।
५ ऋग्वेद – १, ८९, १०।
६ महाभारत – ३, २९३, २५ तथा आग।
७ विष्णु पुराण — १ ९ १०३, १९, ११७ १३२।
८ जा प्रेजिलस्की — ला ग्राण्ड डी एस पष्ठ ५३।

मिश्र म कमल प्राय अविकसित दिखाया गया है परन्तु भारत म खिला हुआ। मिस्र में एसा समझा जाता था कि एक कमल प्रत्यक प्रात काल तालाब से निकलता है दोपहर को पूरा खिल जाता है तथा सन्ध्या को यह बन्द हो जाता है क्योकि सूय रात का इसी में सात ह। प्रात काल सूय के उदय होन के पूव तक यह बन्द रहता है।[1] कमल का यही स्वरूप मिस्र म अधिक दिखाया गया है परतु भारत म प्राय यह खिला हुआ दिखाया गया है क्याकि प्रकाश अधिक होन से भारत में कमल शीघ्रता से खिल जाते ह और इसे उस स्वरूप में दिखाया गया है जब सूय भगवान अपन पूण तेज से चमकते रहते ह[2] तथा इनका तेज कमल अपन शरीर म लता रहता है। हमारे यहाँ इसी मध्याह्न काल के कमल पर लक्ष्मी को स्थित किया है तथा इसी प्रकार के कमल उनके हाथ म दिय गय ह। एसा अनुमान होता है कि इस देवी तथा सूय दोनो को उत्पादन शक्ति का देवता समझन के कारण यह आवश्यक था कि इनको कमल पर दिखाया जाता। श्रीसूक्त मे इन्हें "सूर्याम चन्द्राम् इत्यादि कहा है। कमल को जल पर तरती हुई पृथ्वी भी समझा जाता था तथा इसको पानी में रहन पर भी पानी से अछूता रहन के कारण दिव्य समझा जाता था इस कारण भी इससे लक्ष्मी का सम्बन्ध कदाचित जोडा गया होगा।[3]

प्राचीन काल म लक्ष्मी का स्वयम्भू समझा गया था जसे कमल। इस कारण इनको भी कमल से सम्बन्धित किया होगा। जल को जीवन भी कहते थ, इस कारण भी जीव को उत्पन्न करनवाली माता का जल के साथ दिखाना आवश्यक था जसे कमल को। य कमल जल से पूण घटों से निकलते हुए दिखाये गय ह। य घट प्राय एक पाश से बध हुए दिखाये गए ह जा वरुणपाश का द्योतक हो सकता है।[4]

अनुमानत गज से लक्ष्मी का सम्बन्ध कई कारणों से किया गया हागा। एक तो मेघ के समान काल होन के कारण इनको भी जल प्रदाता समझा जाता था। दूसरे हाथी की प्रागतिहासिक युग में पूजा हाती थी जसे देवी की। एसा अनुमान है कि पीछ चल कर यह साम्राज्य का द्योतक तथा इन्द्र का वाहन बन गया था, इस कारण भी लक्ष्मी का सम्बन्ध इससे जाडा गया होगा जसा काई-काई जन तीथकरा के पीछ बनाकर किया गया[5]। जिस प्रकार हाथी सूँड म पानी भर कर अपन शरीर पर छाडता है उसी प्रकार उसका लक्ष्मी का स्नान कराते हुए तालाब के समीप बनाना ठीक ही था।

श्रीवत्स के चिह्न का प्राथमिक स्वरूप हम प्रागतिहासिक युग में हडप्पा तथा मोहनजोदडो म मिलता है। ये दो साँप एक वृक्ष के दोना आर दिखाय जाते थ। यह चिह्न पवित्र हान के कारण इसे फिर विष्णु क हृदय पर बनाना प्रारम्भ किया गया हागा (फलक २२ झ) तथा इसका नाम श्रीवत्स दिया गया होगा। लक्ष्मी से इसका सम्बन्ध पीछ चलकर जोडा गया।

इस लक्ष्मी का स्वरूप अवस्ता के अनाहिता के भाति है। यदि अनाहिता के हाथ म एक धान का मुट्ठा है[7] ता लक्ष्मी के हाथ में कमल का फल। यदि अनाहिता उत्पादन शक्ति की देवता है तो लक्ष्मी भी। इनका दुर्गा या काली से जाडना ठीक नही है क्योकि उनका उत्पादन की देवी नही समझते थ[8]। सवप्रथम इनका

---

१ ए० मोरे —— ला लोटस ए ल नेसान। डे ड्यु जुरनाल आजियातिक मे – जुया १९१७ पात्र ५०१ ५०७।
२ जां प्रजिलुस्की —— उपर्युक्त पष्ठ ७२।
३ कुमार स्वामी —— यक्षाज खण्ड २ पष्ठ ५७।
४ वही —— जे० ए० ओ० एस० खण्ड ४८ पृष्ठ २७३।
५ एम० वेंकटारामअय्यर —— श्रावस्ती – प्लेट ३ – ऋषभदेव फ्राम सोमनाथ टेम्पुल।
६ जा प्रेजोलुस्की —— उपयुक्त – पष्ठ २९।
७ वही —— उपयुक्त – पृष्ठ ३१।
८ कुमार स्वामी —— यक्षाज – खण्ड २ पृष्ठ १७।

सम्बन्ध कुबेर से स्थापित हुआ जैसे अहुरमज्दा से अनाहिता का सम्बन्ध किया गया फिर वरुण तथा इन्द्र से। विष्णु से लक्ष्मी का सम्बन्ध पौराणिक काल में किया गया था। इनका जन्म समुद्र मन्थन से तथा इनके विष्णु के वरण की कथा पुराणों में ही प्राप्त होती है जैसा पहिले लिखा जा चुका है लक्ष्मी का विष्णु के साथ दिखाने की प्रक्रिया भी गुप्त काल के पूर्व नहीं मिलती। लक्ष्मी का स्वतंत्र चतुर्भुज रूप गुप्त काल के अन्त में ही मिलता है और मध्य युग में आकर इनको वैष्णवी का रूप प्राप्त होता है जिसमें इनके हाथ में शंख चक्र गदा तथा पद्म दिया गया है पद्म फिर भी इनके हाथ में है। ऐसा अनुमान होता है कि इनका ही पद्म विष्णु के हाथ में चला गया है।

पहिले की मूर्तियों को देखने से ऐसा ज्ञात होता है कि पहिले इनका रूप यक्षिणी के सदृश बनाया जाता था। इनमें तथा यक्षिणी में कोई भेद न था। इस प्रकार इनके तीन रूप प्राप्त होते हैं पद्म हस्ता पद्म स्थिता और पद्मवासिनी। यक्षिणी की भाँति ये भी धन प्रदान करनेवाली हैं। पद्महस्ता स्वरूप में इनके दक्षिण कर में पद्म है तथा बायाँ कर यक्षिणी की भाँति कटि पर है। पद्मस्थिता स्वरूप में ये विकसित कमल पर स्थित हैं तथा पद्मवासिनी स्वरूप में इनके दोनों ओर कमल उगते हुए दिखाई देते हैं और प्रायः ये दोनों हाथों में कमल की नाल पकड़े हुए हैं। इनके ये सभी स्वरूप हमें भारहुत तथा साँची में प्राप्त होते हैं। सिरिमा देवता को तो सीधे ही पद्महस्ता कह सकते हैं क्योंकि इनके हाथ में पद्म था जो अब टूट गया है[1]। पद्मस्थिता का स्वरूप तथा (फलक ४ ख) पद्मवासिनी का स्वरूप सबमें उत्तम साँची में प्राप्त होता है (फलक ५ ग)। ये प्रायः यक्षिणी की भाँति बहुत से आभूषणों से लदी हुई दिखाई गई हैं।

बसाढ़ की लक्ष्मी पद्महस्ता तथा पद्मस्थिता होते हुए भी पंख से विभूषित हैं। इसी प्रकार की एक पक्षयुत मूर्ति अखुनढ़री से भी प्राप्त हुई है।[2] ये पक्ष कदाचित् इनका ग्रीस का देवी होने का परिचय देते हैं। जैसा कि पहिले लिखा जा चुका है पक्षयुत पुरुषों की मूर्तियाँ कई स्थानों में प्राप्त हुई हैं परन्तु स्त्री-मूर्ति बहुत कम मिली हैं।

लक्ष्मी की मूर्तियाँ अपने एक हाथ से स्तन को दबाती हुई भी मिलती हैं जैसी हमें मथुरा (फलक ६ग) तथा तक्षशिला में दिखाई देती हैं (फलक १२ ख–घ)। इस स्वरूप को बनाने का कदाचित् यह अर्थ था कि ये सर्वप्रदाता माता हैं। यह स्वरूप इनका सर्वप्रथम कदाचित बाबुल में बना जिसमें एक नग्न माता दोनों हाथों से अपने स्तनों को दबाती हुई दिखाई गई है।[3] यह मृण्मूर्ति कुस्तुनतुनियाँ के राजकीय संग्रहालय में है।

गजलक्ष्मी का स्वरूप भी कई भाँति का प्राप्त होता है। खड़ी लक्ष्मी का स्वरूप बैठी लक्ष्मी का स्वरूप कमल का फूल लिये हुए स्तन को दबाती हुई चतुर्भुज इत्यादि। बैठी तथा खड़ी द्विभुज गजलक्ष्मी का स्वरूप भारहुत साँची बोधगया स्थानों पर मिलता है जैसा कि पहिले लिखा जा चुका है। इसमें भारहुत तथा साँची के एक ही दो फलकों पर हमें लक्ष्मी स्तन को दबाती हुई मिलती हैं (फलक ३क तथा फलक ६ख)। इस प्रकार की मूर्तियाँ सब खड़ी हैं। हाथ में कमल लिये हुए गजलक्ष्मी की मूर्तियों में एक फलक ७ पर है दूसरी फलक ८ पर है। अत्यन्त शुभ होने के कारण गजलक्ष्मी की मूर्तियाँ पद्महस्ता तथा पद्मस्थिता स्वरूपों में सिक्के तथा मोहरों पर भी मिलती हैं जैसा पहिले लिखा जा चुका है। परन्तु गजलक्ष्मी की मूर्ति

---

१ कुमार स्वामी — अर्ली इण्डियन आइकोनोग्राफी — श्रीलक्ष्मी — पृष्ठ १८१।

२ आर्केआलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया अन्युअल रिपोर्ट — १९२२ २३, प्लेट १० बी।

३ कोंटेनो — ला डी एस न्यू बाबिलोनियन — पृष्ठ १०४, ११०, जा प्रजिलुस्की — उपर्युक्त, पृष्ठ ४८, फिगर २।

इलोरा म ल्लपुरम् वाली मर्तियों का छाडकर प्राय फलका पर ही उत्कीण मिलती ह परन्तु फलको से उभड कर मूतरूप म नही मिलती ।[1] प्राय प्राचीन गजलक्ष्मी की मूर्तियो म देवी के आसन का कमल तथा व कमल जिन पर गज स्थित है एक पूण घट से निकलते हुए दिखाय गये ह । पूणघट पहिल वरुण का द्योतक था और आज भी वरुण पूजन म पूण घट रखकर ही उनका वरण होता है । हाथियों को कमल के फूल पर स्थित दिखाना, यह भी कल्पना की ही बात थी । हाथियो का सम्बन्ध इन्द्र के एरावत से था तथा पीछे लक्ष्मी के साथ समुद्र म थन से उत्पन्न होन के कारण लक्ष्मी मे भी था । दिक्कुजर होन के कारण य साम्राज्य के द्योतक समझ जाते थ । इसलिए भी इनको लक्ष्मी के साथ दिखाया गया । पीछे तो दो कुजरों के पीछे दो और कुजर भी दिखाय जान लग जैसे बदामी की गुफा म तथा ममल्लपुरम म ।[2] इन कुजरो के नाम एरावत अजन वामन तथा महापद्म ह ।[3] इनके सू ड के घट जल के बादल के प्रतीक ह तथा इनसे निकलता हुआ जल अमत है ।[4]

यो तो लक्ष्मी की पूजा बहुत दिनो पूव से जन साधारण म होती आती थी परन्तु गुप्तकाल में लक्ष्मी के पूजन का विशेष प्रचार हुआ । यह स्वाभाविक भी था क्योकि उस काल की विशषता थी—साम्राज्य की स्थापना लोकधर्मों का समन्वय, व्यापार से धनोपाजन तथा सौन्दय की उपासना । इन इच्छाओ की पूर्ति लक्ष्मी ऐसी देवी से होती थी । इसी कारण इनकी पूजा विशष रूप से होन लगी । बसाढ तथा भीटा से प्राप्त गुप्त माहरो पर गजलक्ष्मी की मूर्तियाँ प्रचरता से प्राप्त हुई ह तथा इस काल के सिक्को पर भी पद्महस्ता पद्मस्थिता तथा गज लक्ष्मी की मूर्तियाँ बनी हुई दिखाई देती है । इस काल के बन लक्ष्मी के मन्दिर भी प्राप्त होते ह । इन सब को देखन से उपर्युक्त धारणा की पुष्टि होती है । बसाढ तथा भीटा से प्राप्त मृणमोहरो पर गजलक्ष्मी के साथ यक्ष भी दिखाय गय ह जो थलियो में से मुद्राए निकाल कर दे रहे ह जिससे यह ज्ञात होता है कि लक्ष्मी की पूजा तथा प्राथना से धन को प्राप्ति की आशा थो । यही बात ब्रह्म पुराण म मिलती है जसा पहिल लिखा जा चुका है । इसी प्रकार को एक लक्ष्मी विक्टोरिया अलबट म्यूजियम में है । उसमे भी एक यक्ष देवी के चरणो के पास बठा हुआ थली से मुद्राए निकाल कर दे रहा है ।

अभिषक राज्यतिलक का एक विशष अग है तथा राज्यतिलक इसके बिना पूण नही समझा जाता ।[5] इस कारण भी लक्ष्मी का अभिषेक दिखान का प्रयत्न किया गया है । श्री लक्ष्मी की मूर्ति मसरूर के तोरण पर प्राप्त हुई है जिसमे बुद्ध की भाँति इनके मस्तक के ऊपर दो गन्धव एक बडा सा मुकुट हाथ म लिय हुए दिखाय गये ह[6] उनके ऊपर गज देवी का अभिषेक कर रहे ह । इस अभिषक से माया दवी (बुद्ध की माता) से कोई सम्बन्ध नही है जसा फूश तथा पाल लुई कूशो इत्यादि पाश्चात्य विद्वानो का मत है ।[8]

एक और स्वरूप जो हमें मिलता है वह दीपलक्ष्मी का है । यह स्वरूप आज भी बहुत प्रचलित है और दक्षिण भारत के प्राय प्रत्येक मन्दिर में मिलता है । इसमें एक स्त्री को सर्वाभरण भूषित सुन्दर वस्त्र पहिन

---

१ कल्पसूत्र – पृष्ठ १८५ ।
२ बदामी गुफा — २ तथा ४, कुमार स्वामी – श्रीलक्ष्मी – फिगर २४ तन्त्रसार भुवनेश्वरी की प्राथना में – पृष्ठ ७६ ।
३ मोतीचन्द्र — पद्मश्री – पृष्ठ ५०७ ।
४ कुमार स्वामी — श्रीलक्ष्मी – पृष्ठ १८५ ।
५ अथर्ववेद — १८, ४, ३६ सायण भाष्य में "उत्सोपभरनी कलशम् इत्यादि ।
६ कुमार स्वामी — श्री लक्ष्मी – पृष्ठ १८७ ।
७ आर्कआलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया – अन्यअल रिपोट १९१४–१५, खण्ड १, प्लेट २ ।
८ उपयुक्त – कुमार स्वामी ने इस मत का स्वयम् पूणरूपेण खण्डन किया है ।

हुए दिखाया जाता है । इनके हाथ म एक दीपक रहता है जिमम तेल तथा बत्ती रहती है । इसी प्रकार की एक मूर्ति गान्धार कला की प्राप्त हुई है[1] जमा कि पहिले लिखा जा चुका है । इससे एसा अनुमान होता है कि इनका यह स्वरूप भी प्राचीन था जो निरन्तर बना रहा ।

कुछ विद्वाना का मत है कि ईरान की देवी आरडोक्षो के स्वरूप का जब भारतीयकरण हुआ ता उनके हाथ में धान के मुटठे के स्थान पर कमल दे दिया गया जमा हम गुप्तकाल के चन्द्रगुप्त प्रथम के मिक्के तथा चन्द्रगुप्त द्वितीय के सिक्को का देखन स स्पष्ट हा जाता है । चन्द्रगुप्त प्रथम तथा समुद्रगुप्त क कुछ सिक्का म इनके हाथ म धान का मुट्ठा दिखाया गया है परन्तु चन्द्रगुप्त द्वितीय के सिक्के मे इनके हाथ म कमल का छता है । समन्वय हमारे यहा का संस्कृति की विशषता रही है । इस कारण काई आश्चय नही कि कुषाणा के सिक्को की आरडोक्षो को गुप्तकालीन सिक्क बनानवाला न लक्ष्मी बना डाला हो । या लक्ष्मी की मूर्तिया साँची इत्यादि स्तूपा पर इतनी अधिक थी कि सिक्का ढालनवाला का इसकी काइ आवश्यकता न थी कि वे कुषाण देवी को लकर लक्ष्मी का स्वरूप बनाते ।

इस प्रकार एसा ज्ञात होता है कि वदिक निराकार श्री तथा लक्ष्मी को पीछ चल कर साकार रूप दिया गया है । सम्भवत प्रचलित आदिवासियो का माता यक्षिणी को अपनाकर उनका आयदेवी लक्ष्मी का रूप दे दिया गया । य देवी मातृत्व तथा सब का उत्पन्न करन वाली था । इनका पीछ चल कर विष्णु की पत्नी बना लिया गया तथा मध्य युग म गजश्री का रूप दिया गया और किसी किसी मूर्ति में बलराम और कृष्ण को इनके पार्षद के रूप मे भी दिखाया गया है परन्तु इनका प्राचीन स्वरूप तथा इनका पद्म जल इत्यादि से सम्बन्ध बना रहा । इनकी उत्पत्ति का कथा कई प्रकार स बन गयी जो हमारी समन्वय की प्रवत्ति का परिणाम था । इनको बौद्धो और जना ने भी अपनाया चाहे व कहत रहें कि यह धम स पथ भ्रष्ट करनवाली देवी है । इनको हारिति के साथ बौद्ध विहारा म पूजा भा होती था जमा कि कौशाम्बी क घोषिताराम से मिल एक मन्दिर मे सिद्ध हाता है ।[2] इनकी पूजा आज तो जना और हिन्दुओ के घरो म बडी धूमधाम स हाती है और अब इन्हे अनार्यों की देवी मानने को कोई हिन्दू उद्यत नही हा सकता चाहे इतिहास कुछ ही बताय ।

---

१ आर्केआलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया – आन्युअल रिपोट – १९१५ १६ प्लेट ५ ।

२ गोविन्दचन्द्र —दी पारयूर आफ दी बुद्धिस्ट गाडसेज ऑफ कौशाम्बी – मजारी, मई १९५६, प्लेट २ पृ० १९, प्रो० शर्मा, प्रयाग विश्वविद्यालय की कृपा से ।

१३

परिशिष्ट

श्रीसूक्तम्—

हिरण्यवर्णां हरिणी सुवर्णरजतस्रजाम् ।
चन्द्रां हिरण्मयी लक्ष्मी जातवेदो म आवह ॥ १ ॥
ता म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम ।
यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् ॥ २ ॥
अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनादप्रबोधिनीम् ।
श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मा देवी जुषताम् ॥ ३ ॥
कांसास्मिता हिरण्यप्राकारामार्द्रां ज्वलन्ती तृप्ता तर्पयन्तीम् ।
पद्मे स्थिता पद्मवर्णां तामिहोपह्वये श्रियम ॥ ४ ॥
चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्ती श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम ।
तां पद्मिनीमी शरणमहं प्रपद्ये अलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणे ॥ ५ ॥
आदित्यवर्णे तपसोऽधिजातो वनस्पतिस्तव वृक्षोऽथ बिल्वः ।
तस्य फलानि तपसा नुदन्तु मायान्तरायाश्च बाह्या अलक्ष्मी ॥ ६ ॥
उपैतु मां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह ।
प्रादुर्भूतोऽस्मि राष्ट्रेऽस्मिन् कीर्तिमृद्धिं ददातु मे ॥ ७ ॥
क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठामलक्ष्मी नाशयाम्यहम ।
अभूतिमसमृद्धिं च सर्वां निर्णुद मे गृहात ॥ ८ ॥
गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम ।
ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम ॥ ९ ॥
मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीमहि ।
पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः ॥ १० ॥
कर्दमेन प्रजाभूता मयि संभव कर्दम ।
श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम् ॥ ११ ॥
आपः सृजन्तु स्निग्धानि चिक्लीत वस मे गृहे ।
नि च देवीं मातरं श्रियं वासय मे कुले ॥ १२ ॥
आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं पिङ्गलां पद्ममालिनीम् ।
चन्द्रां हिरण्मयी लक्ष्मी जातवेदो म आवह ॥ १३ ॥
आर्द्रां यः करिणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम ।
सूर्यां हिरण्मयी लक्ष्मी जातवेदो म आवह ॥ १४ ॥
ता म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम ।
यस्यां हिरण्यं प्रभूतं गावो दास्योऽश्वान्विन्देयं पुरुषानहम् ॥ १५ ॥

य शुचि प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्यम वहम ।
श्रिय पञ्च दशच च श्रीकाम सतत जपेत ।। १६ ।।

कही कही श्री सूक्त के साथ निम्नलिखित श्लोक भी प्राप्त होते है —

सरसिजनिलय सरोजहस्ते धवलतराशुकगधमाल्यशोभ ।
भगवति हरिवल्लभ मनाज्ञ त्रिभुवनभूतिकरि प्रसीद मह्यम् ।। १७ ।।
धनमग्निधन वायुधन सूर्या धन वसु ।
धनमिन्द्रो बहस्पतिवरुण धनमश्विनौ ।। १८ ।।
वैनतेय सोम पिब सोम पिबतु वृत्रहा ।
सोम धनस्य सोमिनो मह्य ददातु सोमिन ।। १९ ।।
न क्रोधा न च मात्सय न लाभो नाशुभा मति ।
भवन्ति कृतपुण्याना भक्ताना श्रीसूक्त जपेत् ।। २० ।।
पदमानन पद्मऊरु पदमाक्षि पद्मसम्भवे ।
तन्मे भजसि पद्माक्षि यन सौख्य लभाम्यहम् ।। २१ ।।
विष्णुपत्नी क्षमा देवी माधवी माधवप्रियाम ।
विष्णुप्रियसखी देवी नमाम्यच्युतवल्लभाम् ।। २२ ।।
महालक्ष्मी च विद्महे विष्णुपत्नी च धीमहि ।
तन्नो लक्ष्मी प्रचोदयात ।। २३ ।।
पदमानन पद्मिनि पद्मपत्र पदमप्रिय पद्मदलायताक्षि ।
विश्वप्रिय विश्वमनानुकूले त्वत्पादपदम मयि सन्निधस्व ।। २४ ।।
आनन्द कर्दम श्रीद चिक्लीत इति विश्रुता ।
ऋषय श्रियपुत्राश्च मयि श्रीर्देवी देवता ।। २५ ।।
ऋणरागादिदारिद्रय पापञ्च अपमृत्यव ।
भयशाकमनस्तापा नश्यन्तु मम सवदा ।। २६ ।।
श्रीवचस्वमायुष्यमारोग्यमाविधात्पवमान महीयते ।
धन धान्य पशु बहुपुत्रलाभ शतसवत्सर दीघमायु ।। २७ ।।

।। इति श्रीसूक्तम् ।।

पृष्ठ १ २ श्रीसूक्त चौखम्बा सस्कृत सीरीज काशी से सन् १९२३ में मुद्रित ।

भविष्य महापुराण (प्रतिमा लक्षण)

(ब्राह्म पव प्रथम अध्याय १३२)

हन्त ते सवदेवाना प्रतिमालक्षण परम ।
वच्मि ते यदुशार्दूल आदित्यस्य विशषत ।। १ ।।
एकहस्ता द्विहस्ता वा त्रिहस्ता वा प्रमाणत ।
तथा सार्द्धत्रिहस्ता च सवितु प्रतिमा शुभा ।। २ ।।
प्रसादाद्द्वारतो वापि प्रमाण च प्रकल्पितम ।
तद्वत्प्रमाण कतव्य सतत शुभमिच्छता ।। ३ ।।

एकहस्ता भवत सौम्या द्विहस्ता धनधा यदा ।
त्रिहस्ता प्रतिमा भाना सवकामप्रदा स्मृता ॥ ४ ॥
साधत्रिहस्ता प्रतिमा सुभिक्षक्षमकारिणी ।
अग्र मध्ये च मूल च प्रतिमा सवत समा ।
गा धर्वी सा तु विज्ञया धनधा यावहा स्मृता ॥ ५ ॥
देवागारस्य यद्द्वार तस्मादष्टाशमद्यता ।
त्रिभाग पिण्डिका कार्या द्वौ भागौ प्रतिमा भवत ॥ ६ ॥
अङ्गुलश्च तथा मूर्तिश्चतुरशीतिसमित ।
विस्तारायामत कार्या वदन द्वादशाङ्गलम ॥ ७ ॥
मुखात्रिभागश्चिबुक ललाट नासिका तथा ।
कर्णौ नासिकाया तु यौ पादौ चानियतौ तयो ॥ ८ ॥
नयने द्व्यङ्गुल स्याता त्रिभागा तारका भवत ।
ततीयतारकाभागात्कुर्याद दृष्टि विचक्षण ॥ ९ ॥
ललाटमस्तकोत्सेध कुर्यात्तत्सममेव च ।
परिणाहस्तु शिरसो भवद्द्वाविंशदङ्गुल ॥ १० ॥
तुल्या नासिकया ग्रीवा मुखन हृदया तरम ।
मुखमात्रा भवेन्नाभिस्तता मेढमन तरम ।
मुखविस्तारणमुरस्ततोऽधन्तु कटि स्मता ॥ ११ ॥
बाहू प्रवाहतु यौ तु ऊरू जङ्घे च तत्समे ।
गुल्फावस्नात्तु पाद स्यादुच्छ्रितश्चतुरङ्गुल ॥ १२ ॥
षडङ्गुलसुविस्तारस्तस्याङ्गुष्ठाङ्गुलत्रयम ।
प्रदेशिनी च तत्तुल्या हीना शषा नखयुता ॥ १३ ॥
चतुदशाङ्गुल पाद आयामात्परिकीर्तित ।
एव लक्षणसयुक्ता प्रतिमाऽर्च्या भवेत्सदा ॥ १४ ॥
असौ हरेस्तथवारू ललाट च सनासिकम् ।
नियते नयने गण्डौ मूर्तं कुर्यात्समुन्नते ॥ १५ ॥
विशालधवला वामपक्ष्मलायतलाचने ।
सस्मितानन्पद्मस्य चारुविम्बाधरस्तथा ॥ १६ ॥
रत्नप्रोद्भासिमकुटकटकाङ्गदहारवान् ।
अव्यङ्गपदमध्यादिसमायोगोऽपि शोभित ॥ १७ ॥
सुप्रभो मण्डलश्चारुविचित्रमणिकुण्डल ।
कराभ्या काञ्चनी माला प्राद्वहन्ससराहाम ॥ १८ ॥
एव लक्षणसयुक्ता कारयदीहितप्रदाम् ।
प्रजाभ्यञ्च सदा भानु शिवारोग्याभयप्रद ॥ १९ ॥
अल्पाङ्गाया नपभय हीनाङ्गायामकल्पता ।
क्षोतोदर्या च क्षुत्पीडा कृशाया तु दरिद्रता ॥ २० ॥

क्वचिदष्टभुज[1] विद्याच्चतुर्भुजमथापरम ।
द्विभुजश्चापि कर्तव्यो भवनेषु[2] पुरोधसा ॥ ६ ॥
देवस्याष्टभुजस्यास्य यथास्थानं निबोधत ।
खड्गोगदाशर पद्म दिय दक्षिणतो हरे ॥ ७ ॥
धनुश्च खटक चव शङ्खचक्रे च वामत ।
चुतुर्भुजस्य वक्ष्यामि यथवायुधसस्थिति ॥ ८ ॥
दक्षिणन गदापद्म वासुदेवस्य कारयत् ।
वामत शङ्खचक्र च कत ये भूतिमिच्छता ॥ ९ ॥
कृष्णावतारे तु गदा वामहस्ते प्रशस्यते ।
यथेच्छया शङ्खचक्र चोपरिष्टात्प्रकल्पयत् ॥ १० ॥
अधस्तात्पृथिवी तस्य[3] कतव्या पादमध्यत ।
दक्षिणे प्रणत तद्वद्गरुत्मन्त निवेशयत ॥ ११ ॥
वामतस्तु भवेल्लक्ष्मी पदमहस्ता शुभानना ।
गरुत्मानग्रतोवापि सस्थाप्यो भूतिमिच्छता ॥ १२ ॥
श्रीश्चपुष्टि च कत य पाश्वया प[?]मसयुते ।
तोरण चोपरिष्टात्तु विद्याधरसमन्वितम ॥ १३ ॥
देवदुन्दुभिसयुक्त गन्धवमिथुनान्वितम् ।
पत्रव लीसमोपेत सिंहव्याघ्रसमन्वितम ॥ १४ ॥
तथाक पलतोपेत स्तुवद्भिरमरे वर ।
एवविधो भवेद्विष्णोस्त्रिभागनास्य पीठिका ॥ १५ ॥
नवतालप्रमाणास्तु देवदानवकिन्नरा ।
अत पर प्रवक्ष्यामि मानोन्मान विशषत ॥ १६ ॥
जालान्तरप्रविष्टाना भानूना यद्रज स्फुटम् ।
त्रसरेणु सविज्ञेयो वालाग्रंतरथाष्टभि ॥ १७ ॥
तदष्टके न लिक्ष्या तु यूका लिक्ष्याष्टकमता ।
यवोयूकाष्टक तद्वदष्टभिस्तस्तदङ्गुलम् ॥ १८ ॥
स्वकीयाङ्गुलिमानन मुख स्याद द्वादशाङ्गुलम ।
मुखमानन कतव्या सर्वावयवकल्पना ॥ १९ ॥
सौवर्णी राजती वाऽपि ताम्री रत्नमयी तथा ।
शली दारुमयी चापि लोहसीसमयी तथा ॥ २० ॥

---

१ ग ज कुर्याच्चतुर्भुजमथापि वा । द्वि ।
२ ङ च भुवनेषु ।
३ क ख विष्य ।
४ क ख घ °स्थिति । व° ।
५ ग ङ च देवी ।
—०— एतवध न ङ च पुस्तकयो ।

रीतिका धातुयुक्ता वा ताम्रकांस्यमयी तथा ।
शुभदारुमयी वाऽपि देवतार्चा प्रशस्यते ।। २१ ।।
अङ्गुष्ठपर्वादारभ्य वितस्तिर्यावदेव तु ।
गृहेषु प्रतिमा कार्या नाधिका शस्यते बुध ।। २२ ।।
आषोडशा तु प्रासादे कत या नाधिका तत ।
मध्योत्तमकनिष्ठा तु कार्या वित्तानुसारत ।। २३ ।।
द्वारोच्छायस्य य मानमष्टधा तत्तु कारयेत ।
भागमेक ततस्त्यक्त्वा परिशिष्ट तु य भवत् ।। २४ ।।
भागद्वयन प्रतिमा त्रिभागीकृत्य तत्पुन ।
पीठिकाभागत कार्या नातिनीचा न चोच्छ्रिता ।। २५ ।।
प्रतिमामुखमानन नव भागा प्रकल्पयत ।
चतुरङ्गुला भवेद्ग्रीवा भागन हृदय पुन ।। २६ ।।
नाभिस्तस्मादध कार्या भागनकेन[1] शोभना ।
निम्नत्व विस्तरत्वे च अङ्गुल परिकीर्तितम् ।। २७ ।।
नाभेरधस्तथा मेढ्र भागनकेन कल्पयत[2] ।
द्विभागेनाऽऽयतावूरू जानुनी चतुरङ्गुल[3] ।। २८ ।।
जङ्घे द्विभागे विख्याते पादौ च चतुरङ्गुलौ ।
चर्तुदशाङ्गुलस्तद्व मौलिरस्य प्रकीर्तित ।। २९ ।।
ऊर्ध्वमानमिद प्रोक्त पृथुत्व च निबाधत ।
सर्वावयवमानषु विस्तार शृणुत द्विजा ।। ३० ।।
चतुरङ्गुल ललाट स्यादूर्ध्व नासा तथैव च ।
द्व्यङ्गुल तु हनुर्ज्ञेय[4] ओष्ठ स्वाङ्गुलसम्मित ।। ३१ ।।
अष्टाङ्गुले ललाट च तावन्मात्रे भ्रुवौ मते ।
अर्धाङ्गुला भ्रुवोर्लेखा मध्य धनुरिवाऽऽनता ।। ३२ ।।
उन्नताग्रा भवत्पार्श्वे श्लक्ष्णा तीक्ष्णा प्रशस्यते ।
अक्षिणी द्व्यङ्गुलायामे तदर्ध चव विस्तरे ।। ३३ ।।
उन्नतोदरमध्ये तु रक्तान्ते शुभलक्षण ।
तारकाधविभागन दृष्टि स्यात्पञ्चभागिका[6] ।। ३४ ।।

---

१ – ग शोभिना । ङ च शोभिता ।
२ – ङ च त । त्रिभागमाय ।
३ – ङ च ले । द्विभागेनाऽऽयते जङ्घे पा ।
४ – ग घ मे । स ।
५ – क ख ओष्ठ स्वाङ्गुलसमित । चतुरङ्गु ।
६ – क ख गिका । द्वय ।

द्वयङ्गुल तु भ्रुवामध्य नासामूलमथाङ्गुलम ।
नासाग्रविस्तर तद्वत्पुटद्वयमथाऽऽनतम्[१] ।। ३५ ।।
नासापुटबिल तद्वदथाङ्गुलमुदाहृतम् ।
कपोल[२] द्वयङ्गुल तद्वत्कणमूलाद्विनिर्गते[३] ।। ३६ ।।
हृनवग्रमङ्गुल तद्वद्विस्तारो द्वयङ्गला भवत् ।
अर्धाङ्गुला भ्रवो राजी प्रणालसदृशी समा ।। ३७ ।।
अर्धाङ्गुलसमस्तद्वदुत्तरोष्ठस्तु विस्तरे ।
निष्पावसदृश तद्वन्नासापुटदल भवत्[४] ।। ३८ ।।
सक्विकणी ज्योतिस्तुल्य तु कणमूलात्षडङ्गुल ।
कणौ तु भ्रूसमौ ज्ञयावूध्व तु चतुरङ्गुलौ ।। ३९ ।।
द्वयङ्गुलौ कणपाश्वौ तु मात्रामेका तु विस्ततौ ।
कणयोरुपरिष्टाच्च मस्तक द्वादशाङ्गुलम् ।। ४० ।।
ललाट[६] पष्ठतोऽर्धेन प्रोक्तमष्टादशाङ्गुलम् ।
षटत्रिंशदङ्गुलश्चास्य परिणाह शिरोगत ।। ४१ ।।
सकेशनिचयो यस्य द्विचत्वारिंशदङ्गुल ।
केशान्तादधनुका तद्वदङ्गुलानि तु षाडश ।। ४२ ।।
ग्रीवामध्यपरीणाहश्चतुर्विंशतिकाङ्गुल ।
अष्टाङ्गुला भवेद् ग्रीवा पृथुत्वन प्रशस्यते[७] ।। ४३ ।।
स्तनग्रीवान्तर प्रोक्तमेकनाल[८] स्वयभुवा ।
स्तनयोरन्तर तद्वद्द्वादशाङ्गलमिष्यते ।। ४४ ।।
स्तनयोमण्डल तद्वदद्वयङ्गुल परिकीर्तितम ।
चूचुकौ मण्डलस्यान्तयवमात्रावुभौ स्मतौ ।। ४५ ।।
द्वितल[१०] चापि विस्ताराद्वक्ष स्थलमुदाहृतम् ।
कक्ष षडङ्गुल प्रोक्ते बाहुमूलस्तनान्तरे ।। ४६ ।।

---

१ –घ हृत्सपुटद्वयमुन्नत ।
२ –ङ च पोलौ द्वय ।
३ –ङ च गतौ । ह ।
४ –घ णालीसदृशी तथा । अ ।
५ –ग च त । उभे तु सृक्विकणौ तुल्य क ।
६ –क ख लाटात्पष्ठ ।
७ –ङ च ङ्गुल ग्रीवा पथु ।
८ –ङ च विशिष्यते ।
९ –ङ च कनाल ।
१० च त्रिताल ।

चतु शाङ्गलौ[1] पादावङ्गष्ठौ तु त्रियङ्गुलौ ।
पञ्चाङ्गुलपरीणाहमङ्गुष्ठाग्र तथान्नतम ॥ ४७ ॥
अङ्गुष्ठकसमा तद्वदायामा[2] स्यात्प्रदेशिनी ।
तस्या षोडशभागन हीयते मध्यमाङ्गुली ॥ ४८ ॥
अनामिकाष्ट भागन कनिष्ठा चापि हीयते ।
पवत्रयण चाङ्गल्यौ गल्फौ द्वयङ्गुलकौ मतौ ॥ ४६ ॥
पार्ष्णिद्वयङ्गुलमात्रस्तु कलयोच्च प्रकीर्तित ।
द्विपर्वाङ्गुष्ठक प्रोक्त परीणाहश्च द्वयङ्गुल ॥ ५० ॥
प्रदेशिनीपरीणाहस्त्र्यङ्गुल सनदाहृत ।
कन्यसाचाष्ट भागन हीयत क्रमश द्विजा ॥ ५१ ॥
अङ्गुलनोच्छ्रय कार्यो ह्यङ्गुष्ठस्य विशषत ।
तदर्धेन तु शषाणामङ्गुलीना तथा छय ॥ ५२ ॥
जङ्घाग्र परिणाहस्तु अङ्गलानि चतुर्दश ।
जङ्घाम ये परीणाहस्तथवाष्टादशाङ्गल ॥ ५३ ॥
जानुमध्य परीणाह एकविंशतिरङ्गल ।
जानूच्छ्रयोऽङ्गुल प्रोक्तो मण्डल तु त्रिरङ्गलम ॥ ५४ ॥
ऊरुम य परीणाहो ह्यष्टाविंशतिकाङ्गुल ।
एकत्रिंशत्परिष्ठ च्चव वषणौ तु त्रिरङ्गुलौ ॥ ५५ ॥
द्वयङ्गल च तथा मेढ परीणाह षडङ्गुलम ।
मणिबन्धादधो विद्यात्केशरेखास्तथव च ॥ ५६ ॥
मणिकोश[3]परीणाहश्चतुरङ्गुल इष्यते ।
विस्तरेण भवेत्तद्वत्कटिरष्टादशाङ्गुला ॥ ५७ ॥
द्वाविंशति तथा स्त्रीणा स्तनौ च द्वादशाङ्गुलौ ।
नाभिमध्य परीणाहो द्विचत्वारिंशदङ्गल ॥ ५८ ॥
पुरुषे पञ्चपञ्चाशत्कट्या[4] चव तु वेष्टनम् ।
कक्षयोरुपरिष्टात्तु स्कन्धौ प्रोक्तौ षडङ्गुलौ ॥ ५६ ॥

---

१ – ङ च पादावङ्गौ द्वयङ्गुलत स्मतौ । प ।
२ – ग ङ गुष्ठस्तु द्विरगुल । प ।
——एतदर्थ न विद्यते ग च पुस्तकयो ॥ +एतदर्धस्थानऽय पाठो ङ च पुस्तकयो । चचुके मण्डलस्यान्त पादमात्र उभ स्मते इति ॥
३ ग घ च यामे स्या ।
४ घ त्रिंशच्चोपरिष्ठो वृ ।
५ ग कोष्ठप ।
६ घ ट्याव तन्तुवे ।

अष्टाङ्गुला तु विस्तारे ग्रीवा चव विनिर्दिशत् ।
परिणाहे तथा ग्रीवा कला द्वादश निर्दिशत ॥ ६० ॥
आयामो भुजयोस्तद्वद्द्विचत्वारिंशदङ्गुल ।
काय तु बाहुशिखर प्रमाण षाडशाङ्गुलम ॥ ६१ ॥

ऊध्व यद्बाहुपयन्त विन्द्यादष्टाङ्गल शतम ।
तथकाङ्गुलहीन तु द्वितीय पव उच्चते ॥ ६२ ॥
बाहुमध्य परीणाहा भवेदष्टादशाङ्गुल ।
षोडशाक्त प्रबाहुस्तु षट्कलाऽग्रकरा मत ॥ ६३ ॥
सप्ताङ्गुल करतल पञ्चमध्याङ्गुली मता ।
अनामिका मध्यमाया सप्तभागन हीयते ॥ ६४ ॥

तस्यास्तु पञ्चभागेन कनिष्ठा परिहीयते ।
म यमायास्तु हीना व पञ्चभागन तजनी ॥ ६५ ॥
अङ्गुष्ठस्तजनीमूलादध प्रोक्तस्तु तत्सम ।
अङ्गुष्ठपरिणाहस्तु विज्ञयश्चतुरङ्गुल ॥ ६६ ॥
शषाणामङ्गुलीना तु भागो भागन हीयते ।
मध्यमापवम य तु अङ्गुलद्वयमायतम ॥ ६७ ॥
यवो यत्नन सर्वासा तस्यास्तस्या प्रहीयते ।
अङ्गुष्ठपवमध्य तु तज या सदश भवेत् ॥ ६८ ॥
यवद्वयाधिक तद्वदग्रपत्र उदाहृतम् ।
पर्वार्धे तु नखान्विद्यादङ्गलीषु सम नत ॥ ६९ ॥
स्निग्ध श्लक्ष्ण प्रकुर्वीत ईषद्रक्त तथाग्रत ।
निम्नपष्ठ भवन्मध्य पा वत कलयाञ्छितम ॥ ७० ॥

तथव केशवल्लीय स्कन्धोपरि दशाङ्गुला ।
स्त्रिय कार्यास्तु तन्वङ्ग्या स्तनोरुजघनाधिका ॥ ७१ ॥
चतुर्दशाङ्गुलायाममुदा तासु[3] निर्दिशत ।
नानाभरणसपन्ना किंचिच्छ्लक्ष्णभुजास्तत ॥ ७२ ॥
किंचिद्दीर्घ भवेद्वक्त्रमलकावलिरुत्तमा ।
नासा ग्रीवा ललाट च साधमात्र त्रिरङ्गुलम ॥ ७३ ॥
अध्यर्धाङ्गुलविस्तार शस्यतेऽधरपल्लव ।
अधिक नत्रयुग्म तु चतुर्भागन निर्दिशत ॥ ७४ ॥
ग्रीवावलिश्च कतव्या किंचिदर्धाङ्गलाञ्छया ।

---

१ क ख ष्टाङ्गुलशतम । त ।
२ ग घ मामध्यभाग तु ।
३ क ख नाम ।

एव नारीषु सर्वासु देवाना प्रतिमासु च ।
नवतालमिद प्रोक्त लक्षण पापनाशनम ।। ७५ ।।
इति श्रीमात्स्ये महापुराण देवार्चानुकीतन प्रमाणानुकीतन नाम सप्तपञ्चाशदधिकद्वि
शततमोऽध्याय ।। २५७ ।।

पृष्ठ ६६२ – मत्स्य पुराण – हिन्दी साहित्य सम्मेलन –

मूर्तिनिर्माण की मान्यताएँ (अनुवाद)

देवता दानव तथा किन्नरा की प्रतिमा नवताल की होनी चाहिए (अगूठे से लकर मध्यमा अगुली तक फलान पर जितनी लम्बाई होती है उसे ताल कहते ह।) अब इसके बाद प्रतिमाओ के मान एवम् उन्मान की विशषताए बतलाई जा रही ह अर्थात कितनी ऊँची कितनी नीची कितनी मोटी कितनी लम्बी प्रतिमा होनी चाहिए । जाल के भीतर से सूय की किरणा के प्रविष्ट होन पर जा धूलिकण दिखाई पडते है उसे त्रसरेणु कहते ह । उस आठ त्रसरेणु के बराबर एक बालाग्र हाता है उसके आठ गुने जितनी एक लिख्या और आठ लिख्या की एक यूका होती है । आठ यूका का एक जव होता है, उन आठ जवा का एक अगुल होता है । अपनी अगुली के परिमाण से बारह अगुल का मुख होता है इसी मुख के मान के परिमाण से सभी अवयवा की कल्पना करनी चाहिए । सुवण की चाँदी की ताँबे की पत्थर की, लकडी की लोहे की सीसे की पीतल की ताब की और काँसे से मिश्रित धातु की अथवा अत्र शुभ काष्ठो की बनी हुई देवताआ की प्रतिमा प्रशस्त मानी गयी है। अगूठ की गाठ से लेकर वित्त भर तक की लम्बी प्रतिमा की स्थापना अपन घरा मे करनी चाहिए इससे बडी प्रतिमा बुद्धिमाना के घर के लिए नही पसन्द की जाती । बड भवन में सोलह अगुल की प्रतिमा रखी जा सकती है किन्तु इससे बडी तो कभी स्थापित नही करनी चाहिए । इन प्रतिमाओं को अपनी आर्थिक स्थिति के अनुकूल मध्यम उत्तम एव कनिष्ट कोटि की बनानी चाहिए । प्रवेश द्वार की जो ऊँचाई हो उसे आठ भागो में विभक्त कर दें उसके एक भाग को छोड कर जो शेष बचे उसके दो भाग की जितनी लम्बाई हो उतनी लम्बी प्रतिमा बनवाय । (यदि ८ फीट का ऊचा द्वार है तो प्रतिमा २३½ इच ऊँची होगी ।) । बचे हुए भाग में तीन भाग करके एक भाग की पीठिका (देवताओ की मूर्तियों के नीचे का बना हुआ आसन) बनाना चाहिए (आसन प्राय २० इच का होगा) वह पीठिका न बहुत नीची हो और न बहुत ऊँची । प्रतिमा के मुख के भाग के मान (ऊचाई) को नव भागों में विभक्त करें उसमें चार अगुल में ग्रीवा तथा एक भाग में हृदय होगा। उसके नीचे के एक भाग में सुन्दर नाभि बनानी चाहिए । उसकी गहराई तथा विस्तार भी एक ही अगुल का कहा गया है। नाभी के नीचे एक भाग में लिंग बनाय, दो भागा में जंघों का विस्तार रखे । घुटनो को चार अगुल में बनायें जघे दो भागा में पर चार अगुल के हो उसी प्रकार ऐसी मूर्ति का सिर चौदह अगुल का बनाना चाहिए ऐसा विधान बताया गया है। यह तो मूर्ति की ऊँचाई बताई गयी अब उसकी मोटाई या विस्तार सुनिये। ललाट की मोटाई चार अगुल की होनी चाहिए। नासिका भी उतने ही अंगुल की ऊँची होनी चाहिए । दाढी दो अगुल में होनी चाहिए । ओठ भी दो ही अगुल के विस्तार में मान गय ह । मूर्ति के ललाट का विस्तार आठ अगल का होना चाहिए । उतने ही विस्तार में दोनो भौहें भी बनानी चाहिए । भौहों की रेखा आध अगल की मोटाई में हो जो बीच में धनुष की भाति वक्र हो । दोनों छोरों पर उसके

---

१ क ख च। तब वाल ।

अग्र भाग उठे हों, उसकी बनावट चिकनी तथा सुन्दर होनी चाहिए। आँखों की लम्बाई दो अंगुल की हो चौडाई एक अंगुल में हो। उसका मध्य भाग ऊंचा होना चाहिए। शुभ नेत्रों के छोरों पर लालिमा होनी चाहिए। तारे के अधोभाग से पाँच गुनी दृष्टि बननी चाहिए। दोनों भौंहों के मध्य में दो अंगुल का अन्तर रहना चाहिए नासिका का मूल भाग एक अंगुल में रहे। इसी प्रकार नासिका के अग्रभाग एवम् नासा पुटों को बनावें जो नीचे की ओर झुके हुए हों। नासिका के पुटों के छिद्र आधा अंगुल के हों दोनों कपोल दो अंगुल के हों जो कानों के मूल भाग से निकले हुए हों ठोढी का अग्रभाग एक अंगुल में तथा विस्तार दो अंगुल में होना चाहिए। आध अंगुल में भौंहों की रेखा हो जो काली घटा के समान श्याम रहनी चाहिए। नीचे का ओठ तथा ऊपर का ओठ आध आध अंगुल के बराबर हो। उसी प्रकार नासिका के दोनों पुट निष्पाप तथा समान बनाने चाहिए। दोनों ओठों के समीपवर्ती भागों की ज्योति (?) के आकार का बनावें और उन्हें कान के मूल से छ अंगुल दूर पर बनावें। दोनों कानों की बनावट भौंहों के समान रहेगी और उनकी ऊँचाई चार अंगुल की रहेगी। कानों के बगल में दो अंगुल रिक्त स्थान छोड उनका विस्तार एक मात्रा का हो। दोनों कानों के ऊपर मस्तक का विस्तार बारह अंगुल का होना चाहिए। ललाट प्रदेश से पीछे की ओर आधे भाग का विस्तार अठारह अंगुल का बताया गया है। इस प्रकार सारे मस्तक का विस्तार छत्तीस अंगुल का होता है और केश समेत उसका विस्तार ४० अंगुल का। केशों के अन्त प्रदेश से दाढी तक का विस्तार सोलह अंगुल का होता है। दोनों कानों के विस्तार का मान चौबीस अंगुल का है ग्रीवा की मोटाई आठ अंगुल की मानी गई है स्तन और ग्रीवा का अन्तर एक ताल का माना गया है इसी प्रकार दोनों स्तनों में बारह अंगुल का अन्तर रहता है। दोनों स्तनों के मंडल को दो अंगुल में कहा गया है दोनों चूचुक उन मंडलों के बीच में बनाना चाहिए। वक्षस्थल की चौडाई दो ताल की कही गई है तथा दोनों कक्ष प्रदेश छ अंगुल के जिन्हें बाहुओं के मूल भाग तथा स्तनों के बीच में बनाना चाहिए। दोनों पर चौदह अंगुल तथा उनके दोनों अंगूठे दो या तीन अंगुल के होने चाहिए। अंगूठे का अग्रभाग उन्नत होना चाहिए तथा उसका विस्तार पांच अंगुल में रहे। उसी प्रकार अंगूठे के समान ही प्रदेशिनी अंगुली को भी लम्बी बनाना चाहिए उससे सोलहवां अंश अधिक मध्यमा अंगुली होगी अनामिका अपनी मध्यमा अंगुली की अपेक्षा आठवां भाग न्यून रहेगी। उसी प्रकार अनामिका से आठवां भाग न्यून कनिष्ठिका अंगुली रहेगी। इन दोनों अंगुलियों में तीन पोर बनानी चाहिए। पैरों की गाँठ दो अंगुल की मानी गयी है। दोनों एडियां दो दो अंगुल में रहें किन्तु गाँठ की अपेक्षा यह एक कला अधिक ही रहे। अंगूठे में दो पोर बनानी चाहिए उसका विस्तार दो अंगुल का हो। प्रदेशिनी अंगुली का विस्तार तीन अंगुल का होना चाहिए। हे ऋषिगण! कनिष्ठिका अंगुली क्रमश इससे आठवां भाग हीन रहेगी। विशेषतया अंगूठे की मोटाई एक अंगुल की रखनी चाहिए उसके आधे भाग जितनी अन्य शेष अंगुलियों की मोटाई रखनी चाहिए जंघे के अग्रभाग का विस्तार चौदह अंगुल का रहे मध्यभाग में अठारह अंगुल का विस्तार रहे जानु का मध्य भाग इक्कीस अंगुल के विस्तार का हो, जानु भाग की ऊंचाई एक अंगुल में तथा मण्डल तीन अंगुल में हो। उरुओं के मध्य भाग का विस्तार अट्ठाईस अंगुल का हो इसके ऊपर का माप इकतीस अंगुल का अण्डकोष तीन अंगुल का तथा लिंग दो अंगुल का हो। उरु का विस्तार छ अंगुल का हो। मणि व आदि केशों की रेखा मणिकोश इन सब का विस्तार चार अंगुल का हो। कटि प्रदेश का विस्तार अठारह अंगुल में हो। स्त्रियों की मूर्ति में कटि का विस्तार बाईस अंगुल का तथा स्तन का विस्तार बारह अंगुल का होना चाहिए। नाभि के मध्य भाग का विस्तार बयालीस अंगुल का होना चाहिए। पुरुष के कटि प्रदेश का पचपन अंगुल का विस्तार तथा दोनों कक्षों के ऊपर छ अंगुल के विस्तार में स्कन्धों का बनाना

की विधि है। आठ अगुल के विस्तार में ग्रीवा का निर्माण कहा गया है, इसकी लम्बाई बारह कला की होनी चाहिए। दोनो भुजाओ की लम्बाई बयालीस अगल में हो बाहु के मूल भाग सोलह अगुल के प्रमाण में बनावे। बाहु के ऊपरी अश तक बारह अगुल का विस्तार बनना चाहिए। द्वितीय पाश्व इसकी अपेक्षा एक अगुल न्यून कहा गया है बाहु के मध्य भाग का विस्तार अट्ठारह अगुल का होना चाहिए। प्रबाहु सोलह अगुल की होनी चाहिए। हाथ के अग्रभाग का मान छ कला में कहा गया है हथेली का विस्तार सात अगुल का है उसमें पाँच अगुलियाँ मानी गई ह। अनामिका अगुली मध्यमा की अपेक्षा सातवे भाग जितनी हीन हानी चाहिए उससे भी पाँचवे भाग जितनी न्यून कनिष्ठा अगुली हो। मध्यमा से पाचव भाग जितनी न्यून तजनी हो अगुठा तजनी के उदगम से नीची होनी चाहिए किन्तु लम्बाई म उतना ही होना चाहिए। अगूठ का विस्तार चार अगुल का बनना चाहिए। शष अगुलिया के विस्तार क्रमश एक एक भाग न्यून हाते जाते ह। मध्यमा के पोरा के मध्य भाग में दो अगुल का अन्तर रहना चाहिए। इसी प्रकार अन्य अगुलियों के पोरो म एक एक जव की कमी होती जाती है। अगूठे के पारा के मध्य भाग तजनी के समान ही रहना चाहिए। अगला पोर दो जव अधिक कहा गया है। अगुलिया क पूर्वार्द्ध में नखो को बनना चाहिए इन का चिकना सुदर तथा आग की ओर कुछ लालिमायुक्त बनाना चाहिए। मध्य भाग में पीछ की ओर कुछ नीचा तथा बगल में अश मात्र ऊचा बनावे। उसी प्रकार कधो के ऊपर दस अगुल म केशो के लट का निर्माण करना चाहिए। स्त्री प्रतिमाओ को दुबलागिनी बनना चाहिए। इनके स्तन ऊरु प्रदेश एव जाघो को स्थूल बनाना चाहिए। उनके उदर प्रदेश की लम्बाई चौदह अंगुल की होनी चाहिए। प्रतिमा को अनक प्रकार के आभूषणो से विभूषित तथा उसकी भुजाओ को कुछ मृदु एव मनोहारी बनाना चाहिए। मखाकृति कुछ अपेक्षाकृत लम्बी हो अलकावली उत्तम ढग से बनी हुई हो नासिका ग्रीवा एव ललाट साढ तीन अगुल के होने चाहिए। अधर पल्लवो का विस्तार आधे अगुल माना गया है। दोनो नेत्र अधर पल्लवो से चार गुन अधिक विस्तृत होने चाहिए एव ग्रीवा की बलि आध अगुल को ऊची बनानी चाहिए। इस प्रकार सभी देवताओ की प्रतिमाओ एव स्त्री देवताओ की प्रतिमाओ के निर्माण म उपयुक्त नियमो का पालन करना चाहिए। यह नव ताल के परिमाण की प्रतिमाओ का वणन पापो को नष्ट करनवाला कहा गया है। ॥ १ – ७५ ॥

मत्स्य पुराण

॥ अथ द्विषष्ट्यधिकशततमोऽध्याय ॥

(पीठिका)

एकषष्ट्यधिक द्विशततमोऽध्याय ११२०–पृष्ठात्–११२१–पर्यन्तम्

सूत उवाच —

पीठिका[1] लक्षण वक्ष्य यथावदनुपूवश ।
पीठोच्छ्राय यथावच्च भागान् षोडश कारयेत् ॥ १ ॥
भूमावेक प्रविष्ट स्याच्चतुर्भिर्जगती मता ।
वत्तो भागस्तथक[2] स्यान्वृत्त[3] पाटलमागत ॥ २ ॥

---

१ – ग ङ पिण्डिका ।
२ – ङ यथास्य वत्तभागास्तु भागश । भा ।
३ – घ स्याद्वृत्तपट्टस्तु भा ।

भागस्त्रिभिस्तथा कण्ठ[1] कण्ठपट्टस्तु[2] भागत ।
भा ाभ्यामध्वपट्टश्च शषभागेन पट्टिका ।। ३ ।।
प्रविष्ट भागमेकक जगती यावदेव तु ।
निगमस्तु पुनस्तस्य यावद्व शषपट्टिका[4] ।। ४ ।।
वारिनिर्गमनाथ तु तत्र[5] काय प्रणालक ।
पीठिकाना तु सर्वासामेतत्सामा यलक्षणम ।। ५ ।।
विशेषा देवताभ ाङ्कृणुध्व मुनिसत्तमा ।
स्थ ण्डला वाऽथ वापी वा यक्षी वदी च मण्डला ।। ६ ।।
पूणच द्रा च वज्रा[6] च पद्मा वाधशशी तथा ।
त्रिकाणा दशमी तासा स थान वा निर्बोधत ।। ७ ।।
स्थण्डिला चतुरस्रा तु वर्जिता मखलादिभि ।
वापी द्विमखला ज्ञेया यक्षी चैव त्रिमेखला ।। ८ ।।
चतुरस्रायता वेदी न ता लिङ्गषु योजयन ।
मण्डला वतुला या तु मखलाभिगणप्रिया[8] ।। ९ ।।
रक्ता[9] द्विमेखला मध्ये पूणच द्रा तु सा भवे त् ।
म ख नात्रयसयुक्ता षडस्रा वज्रिका भवेत ।। १० ।।
षोडशास्रा भवे पदमा किंचिद्ध्रस्वा तु मूलत ।
प्राग कायणा तद्वत्प्रशस्ता लक्षणान्विता ।। ११ ।।
त्रिशूलसदृशी तद्वतत्रिकोणा ह्यूर्ध्वतो मता ।
तथव धनुषाकारा साधच द्रा प्रशस्यते ।। १२ ।।
परिवेण त्रिभाग न (ण) निगम तत्र कारयत ।
विस्तार तत्प्रमाण च मूले चाग्र तथोध्वत ।। १३ ।।
जलनागश्च कत व्यस्त्रिभागेण (न) सुशोभन ।
लिङ्गस्याधविभागन स्थौल्येन समधिष्ठिता ।। १४ ।।
मेखला तत्त्रिभागेन (ण) खात चैव प्रमाणत ।
अथवा पादहीन तु शोभन कारयेत्सदा ।। १५ ।।

---

१ –ङ ०5 पिण्डापिण्डस्तु ।
२ –क ख वृस्त्रिभा ।
३ –ग त । यस्य न वृत्तपट्ट ।
४ –ङ च षपिण्डिका ।
५ –च कार्यप्रणालिका । पि॰ ।
६ –ङ च वक्री ।
७ –घ ला॰ त्रिगुणा पि । ङ ला द्विगुणा पि॰ ।
८ –ङ था प्रोक्ता च या । सरक्ता ।
९ –घ रिक्ता ।

उतर थ प्रगा न च प्रमाणादधिक[1] भवत ।
स्थण्डिलायामथाऽऽरोग्य धन धाय च पुष्कलम् ॥ १६ ॥
गोप्रदा च भवेद् यश्री वदी सम्पत्प्रदा भवत् ।
मण्डलाया भवत्कीतिवरदा पूणचन्द्रिका ॥ १७ ॥
आयुष्प्रदा भवेदवज्रा पद्मा सौभाग्यदा भवत् ।
पुत्रप्रदाऽर्धचन्द्रा स्यात्त्रिकोणा शत्रुनाशिनी ॥ १८ ॥
देवस्य यजनाथ तु पीठिका दश कीर्तिता ।
शैले शैलमयी दद्यात्पार्थिवे पार्थिवी तथा ॥ १९ ॥
दारुजे दारुजा कुर्यान्मिश्र मिश्रा तथव च ।
नान्ययोनिस्तु कत या सदा शुभफलेप्सुभि ॥ २० ॥
अर्चायामनम[2] द्ध्य लिङ्गयामसम तथा ।
यस्य देवस्य या पत्नी ता पीठे परिकल्पयेत ॥ २१ ॥
एतत्सव समाख्यात समासात्पाठलक्षणम् ॥
इति श्रीमात्स्ये महापुराण देवतार्चानुकीतन ।
पीठिकानुकीर्तन नाम एकषष्टयधिकद्विशततमोध्याय ॥ २६२ ॥

षष्टयधिकद्विशततमोऽध्याय ।

प० स० १११८

मत्स्य पुराण पृष्ठ ५३६ अध्याय २६०

श्लोक ४० – ५०

श्रिय देवाम् प्रवक्ष्यामि नवे वयसि सस्थिताम् ।
सुयौवनाम् पीनगण्डाम् रक्तोष्ठीम् कुञ्चितभ्रुवम् ॥ ४० ॥
पीनोन्नतस्तनतटाम मणिकुण्डलधारिणीम् ।
सुमण्डलम मुखम् तस्या शिर सीमन्तभूषणम ॥ ४१ ॥
पदमस्वस्तिकशङ्खैर्वा भूषिताम् कुण्डलालक ।
कञ्चुकाबद्धगात्री च हारभूषौ पयोधरौ ॥ ४२ ॥
नागहस्तोपमौ बाहू केयूरकटकोज्ज्वलौ ।
पद्महस्ते प्रदातव्य श्रीफल दक्षिणे भुजे ॥ ४३ ॥
मेखलाभरण तद्वत्तप्तकाञ्चनसप्रभाम् ।
नानाभरणसम्पन्ना शोभनाम्बरधारिणीम् ॥ ४४ ॥
पार्श्वे तस्या स्त्रिय कार्याश्चामरव्यग्रपाणय ।
पदमासनोपविष्टा तु पदमसिंहासनस्थिता ॥ ४५ ॥
करिभ्या स्नाप्यमानाऽसौ भृङ्गाराभ्यामनेकश ।
प्रक्षालयन्तौ करिणौ भृङ्गाराभ्या तथा परौ ॥ ४६ ॥

१ – क ख धिकारयेत ।
२ – क ख यामासम ।

स्तूयमाना च लाकेशस्तथा ग धव गुह्यक ।
तथव यक्षिणी कार्या सिद्धासुरनिषविता ।। ४७ ।।

पाश्वयो कलशी तस्यास्तोरण देवदानवा ।
नागाश्चत्र तु कत या ख ग खेटकधारिण ।। ४८ ।।

अधस्तात्प्रकृतिस्तेषा नाभरूध्व तु पौरुषी ।
फणाश्च मूर्ध्नि कत या द्विजिह्वा बहव समा ।। ४९ ।।

पिशाचा राक्षसाश्चव भूतवतालजातय ।
निर्मासाश्चव ते सर्वे रौद्रा विकृतरूपिण ।। ५० ।।

क्षत्रपालश्च कत यो जटिलो विकृतानन ।
दिग्वासा जटिलस्तद्वच्छवागामायुनिषेवित ।। ५१ ।।

कपाल वामहस्ते तु शिर केश समावतम् ।
दक्षिण शक्तिका दद्यादसुरक्षयकारिणीम् ।। ५२ ।।

[मूर्ति २५८ अध्याय २६३ पीठिका] ।

(अध्याय २६१ — मत्स्य पुराण — अनुवादक श्री रामप्रसाद त्रिपाठी का यतीथ साहित्यरत्न पष्ठ ७०२—७०३ हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग) हिन्दी अनुवाद

नवीन अवस्थावाली लक्ष्मी देवी की प्रतिमा का प्रकार बतला रहा हू । उन सु दर नवयौवनावस्था वाली लक्ष्मी को उन्नत कपोल लाल ओष्ठ तिरछी भौंह उठे हुए विशाल उरोजवाली तथा मणिजटित कुण्डल स विभूषित बनाना चाहिए । उनका मुखमण्डल अति सु दर तथा शिर केश वि यास से विभूषित रहना चाहिए । अथवा पद्म स्वस्तिक तथा शखो से युक्त कुण्डल एवम अलकावली से सुशोभित कचुक शरीर मे धारण किये हुए तथा दोनो स्तनो पर हार की लडें शोभित हो रही हो ऐसा निर्मित करना चाहिए । हाथी के शण्ड दण्ड की भाँति स्थूल तथा विशाल दोनो भुजाए केयूर तथा कटक से विभूषित हो, बायें हाथ में कमल तथा दाहिने हाथ में श्री फल देना चाहिए । उसी प्रकार मेखला का आभूषण भी पहिनाना चाहिए । शरीर की कान्ति तपाय हुए सुवण के समान गौर वण की होनी चाहिए । विविध प्रकार के आभूषणो से विभूषित तथा सु दर मनोहारी वस्त्रो से सुशोभित करना चाहिए । उन लक्ष्मी के पाश्व में चमर धारण किय हुए अ य स्त्रियो की प्रतिमा भी निर्मित करनी चाहिए वे लक्ष्मी पद्म के सिंहासन पर बने हुए पद्म के आसन पर ही समासीन हो । ऊपर से झझर को शुण्डा दण्ड में लिय हुए दो हाथी स्नान करा रह हो । उन दोना हाथियो के अतिरिक्त दो दूसरे हाथी उन हाथियों पर जल को झझर के द्वारा छाड रहे हों । ग धव यक्ष तथा लोकेशगण स्तुति पाठ कर रहे हो । इसी प्रकार यक्षणी की प्रतिमा सिद्धो एवम् असुरो से सेवा की जाती हुई बनाना चाहिए । उसके अगल बगल में दो कलश रहे तथा तोरण म देवताओं और दानवों की प्रतिमा रहे, नागो की भी प्रतिमा वहा रहे जो खड्ग तथा ढाल धारण किये हो नीचे की ओर उनका अपना शरीर बनाना चाहिए नाभी से ऊपर मनुष्य की आकृति रहनी चाहिए । सिर में बराबरी से दिखाई पडनेवाले दो जिह्वायुक्त फण बनाने चाहिए । पिशाच, राक्षस, भूत वेताल आदि जातियो के लोगा को भी बनाना चाहिए जो देखने में अति विकृत, भयानक तथा मासरहित दिखाई पड । क्षेत्रपाल को जटाओं से युक्त विकृत मुखवाला नग्न शृगाल तथा कुत्ता से सेवित बनाना चाहिए । कपाल उसके बायें हाथ मे देना चाहिए जा सिर के केशो से घिरा हुआ हो, दाहिने हाथ में असुरो को विनाश करनेवाली छूरी देनी चाहिए ।

★

विषय सम्बन्धी पुस्तकों की सूची

(क) पुस्तक तालिका

(१) अग्निपुराणम् – आनन्दाश्रम मुद्रणालय पूना – १६०० ई० ।

(२) अथर्ववेद संहिता (शौनकीय) – सनातन धर्म प्रेस मुरादाबाद प्रथम संस्करण सम्वत १६८६ वि० ।

(३) अ नगद दसाआ एण्ड दी अनतरावावाला दमाअ। (दी एटथ एण्ड दा नाइथ अगास आफ दो जन कानन) सम्पादक एम० सी० मादी गुजर ग्रथरत्न कार्यालय गान्धी रोड अहमदाबाद–१६३२ ई० ।

(४) अनघराघवम् – मुरारि निणय सागर प्रस बम्बई – १६२६ ई० ।

(५) अभिलषिताथ चिन्तामणि – सोमेश्वरदेव, मसूर – १६२६ ई० ।

(६) अथशास्त्र – कौटिल्य, म० शामशास्त्री मसूर – १६२३ ई० ।

(७) अवस्था – श्रीमद्दयानन्द एग्लोवदिक कालज लाहौर प्रथम संस्करण – १६६१ वि० ।

(८) अहिबुध्न्य संहिता – अडयार लाइब्रेरी अडयार मद्रास प्रथम खण्ड – १६१६ ई० ।

(९) अत्रि संहिता (अष्टादश स्मृतय) – मस्ता सस्कृत साहित्य मण्डल शामली मजफ्फरनगर, सम्वत् १६६८ वि० ।

(१०) इण्डियन इमेजज – बी० सी० भट्टाचाय प्रथम खण्ड थकर स्पिक एण्ड क० कलकत्ता १६२१ ई० ।

(११) इण्टाडक्शन टू तन्त्रशास्त्र – सर जान उडरफ गणश एड कम्पनी प्रा० लि० मद्रास तृतीय संस्करण – १६५६ ई० ।

(१२) इण्डो योरापिया ए इण्डो आरियाँ, ल आण्ड जुस्कवर – त्रा सा अवा जी जू क्री – ड ला वाल पूसा (पारी – १६२४ ई०) ।

(१३) उत्कीण लखाजली – जयचन्द्र विद्यालकार मास्टर खलाडी लाल एण्ड सस कचौडी गली वाराणसी चतुथ संस्करण – सम्वत् २०१६ वि० ।

(१४) ए गाइड टू दी स्कल्पचम इन दी इण्डियन म्युजियम दी ग्रीको बद्धिस्ट स्कूल आफ गान्धार भाग २ – एन० जी० मजुमदार आर्केआलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया १६३७ दिल्ली ।

(१५) ए गाइड टू दी आर्केआलाजिकल गलरीज आफ दी इण्डियन म्यजियम – सी० शिवराम मूर्ति ट्रस्टीज आफ दी इण्डियन म्यजियम कलकत्ता – १६५४ ई० ।

(१६) एक्सकवेशन्स एट हड़प्पा – माधोस्वरूप वत्स, खण्ड १ व २ मनजर आफ पब्लिकेशन्स, गवनमेण्ट आफ इण्डिया दिल्ली – १६४० ई० ।

(१७) एशण्ट इण्डिया अएज डिस्क्राइब्ड बाइ मेगास्थनीज एण्ड एरियन – माकक्रिंडिल द्वितीय संस्करण कलकत्ता – १६२६ ई० ।

(१८) एलमण्टस आफ हिन्दू आइकनोग्राफी – टी० ए० गोपीनाथ राव दी ला प्रिंटिंग हाऊस माउन्ट रोड मद्रास प्रथम खण्ड – १६१४ ई० ।

(१९) एसपेक्टस आफ अर्ली विष्णुइज्म – जे० गोण्डा हट प्राविन्सियाल उटरेख्ट जनाटास्चाप वान कुनस्टन एन वेतनशाप्पेन हेट उटरेख्ट युनिवसिटिइटस फोण्डस नीदरलाण्डस – १६५४ ई० ।

(२०) एतरेय ब्राह्मण – हावड युनिवर्सिटी प्रेस, कम्ब्रिज, मेसाच्युसेट – १६२० ई० ।

(२१) आरिसा एण्ड हर रिमेस एनशण्ट एण्ड मडीवल – एम एम गागुली कलकत्ता, १९१२ ई० ।
(२२) ऋग्वेद – प० गौरीनाथ झा 'वदिक पुस्तक माला सुल्तानगज १९९२ वि० ।
(२३) कन्नौज – प० रामकुमार दीक्षित शिक्षा विभाग उत्तर प्रदेश लखनऊ ।
(२४) कर्णभारम् (भास नाटक चक्रम) – द्वितीय सस्करण १९५१ ई० ओरियण्टल बुक एजेन्सी, पूना २ ।
(२५) कर्पूरादिस्तोत्रम – आयर अविलान १९२२ ई० ।
(२६) कल्पसूत्र (दी कल्पसूत्र आफ भद्रबाहु) – सम्पादक हरमन जकाबी लिपजिग १८७९ ई० ।
(२७) कालिका पुराण – वकटेश्वर प्रेस बम्बई – सम्वत १९६४ वि० ।
(२८) काश्यप सहिता – सम्पादक श्री रा०भ पार सारथी भट्टाचार्य वकटेश्वर ओरियण्टल इन्स्टीटयूट तिरुपति – १९४८ तथा सम्पादक पी० रघुनाथ चक्रवर्ती भट्टाचार्य श्री वकटेश्वर ओरियण्टल सीरीज –६ १९४३ ई० ।
(२८) कुमारसम्भवम् – कालिदास ग्रथावलि अखिल भारतीय विक्रम परिषद काशी द्वितीय सस्करण सम्वत ००७ वि० ।
(२९) कूर्म पुराण – बिबिलीयोथिका इण्डिका कलकत्ता – १८९० ई० ।
(३०) कम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया – ख० १ ई० जे रपसन, एस० चाँद एण्ड कम्पनी लखनऊ फर्स्ट इण्डियन रिप्रिंट १९५५ ई० ।
(३१) कौषीतकीब्राह्मणम – ज० एन० हरमन्न कास्टबुल, लन्दन – १८८७ ई० ।
(३२) कृष्णोपनिषद (ईशाद्यष्टोत्तरशतोपनिषद) – निर्णय सागर प्रेस बम्बई तृतीय सस्करण – १९२५ ई० ।
(३३) गरुड पुराण – वकटेश्वर प्रेस बम्बई (सस्कृत टीका) ।
(३४) गायत्रीतन्त्रम – चौखम्बा सस्कृत सीरीज आफिस बनारस–१ १९८६ ई० ।
(३५) चतुर्भाणि – डॉ० मोतीचन्द्र व श्री वासुदेवशरण अग्रवाल हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय बम्बई प्रथम सस्करण – दिसम्बर १९५९ ई० ।
(३६) जन सूत्राज – हरमन्न जकाबी, सेक्रेड बुक्स आफ दी ईस्ट सीरिज खण्ड २२ आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस लन्दन – १८८४ ई० ।
(३७) जमिनीय ब्राह्मणम – सेक्रेटरी इण्टरनेशनल एकाडमी आफ इण्डियन कल्चर नागपुर – १९५४ ई० ।
(३८) टेरा कोटाज फीगरीन्स फ्राम कौशाम्बी – सतीशचन्द्र काला म्युनिसिपल म्यूजियम इलाहाबाद – १९५० ई० ।
(३९) ट्री एण्ड सरपेण्ट वरशिप – जेम्स फरगूसन इण्डिया आफिस एम० एच० एलन एण्ड क० १३ वाटरलू प्लस लन्दन – १८६८ ई० ।
(४०) डिवनीतोर एटिमालाजिक डला लाग ग्रक – इ० वाआजाक पारी – १९२३ ई० ।
(४१) तक्षशिला खण्ड १ २ ३ – सर जान मार्शल कम्ब्रिज – १९५१ ई० ।
(४२) तैत्तिरीय सहिता (कृष्ण यजुर्वेदीय) – आनन्दाश्रम मुद्रणालय पूना – १९०४ ई० ।
(४३) तैत्तिरीय उपनिषद् – मणिलाल इच्छाराम देसाई कोटसामुन बिल्डिंग न० ८ बम्बई ।
(४४) दक्षिणामूर्ति सहिता – जयकृष्णदास गुप्ता, विद्याविलास प्रेस बनारस सिटी १९३७ ई० ।
(४५) दशकुमारचरितम – दण्डि निर्णय सागर प्रेस बम्बई – शाके १८३५ ।

(४६) दी आट आफ इण्डिया थ्रू दी एजज – स्टला क्रामरिश दी फडन प्रस ५ क्रामवेल प्लस ल दन द्वितीय सस्करण – १९५५ ई० ।
(४७) दी आट आफ इण्डियन एशिया – हैनरिक जिम्मर, बालिंगन सीरीज न्ययाक, खण्ड १ २ १९५५ ई० ।
(४८) दी इण्डियन बुद्धिस्ट आइकानोग्राफी – विनयनाथ भट्टाचाय प्रकाशक – के० एल० मुखोपाध्याय ६, १ ए बञ्छाराम अक्रूर लन कलकत्ता – १२, द्वितीय सस्करण – १९५८ ई० ।
(४९) दीघनिकाय – पाली टक्स्ट सोसाइटी द्वारा लुजक एण्ड क० लि ४६ ग्रट रसेल स्ट्रीट लन्दन ।
(५०) दी कम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया सप्लीमण्टरी वाल्यूम – दी इण्डस सिविलिजशन – ए० एच० व्हीलर दी सिडिक्स आफ दी कम्ब्रिज युनिवर्सिटी प्रस लन्दन १९५३ ई० ।
(५१) दी डवलपमेण्ट ऑफ हिन्दू आइकानोग्राफी – ज एन० बनर्जी कलकत्ता युनिवर्सिटी प्रस कलकत्ता द्वितीय सस्करण – १९५६ ई० ।
(५२) दी मानमेण्टस आफ साँची खण्ड १, २, ३ – मार्शल ज० एण्ड फूश ए० मनजर आफ पब्लिकेशन्स गवनमेण्ट आफ इण्डिया दिल्ली – १९३७ ई० ।
(५३) दी मिरर आफ जसचर – आनन्द कुमार स्वामी तथा गोपाल कृष्णराव डागीराला हारवड युनिवर्सिटी प्रस लन्दन – १९१७ ई० ।
(५४) दशोपनिषद् (ईशाद्यष्टोत्तरशतोपनिषद) – निणय सागर प्रस बम्बई तृतीय सस्करण – १९२५ ई०
(५५) देवीभागवतम – पण्डित पुस्तकालय काशी (१९५६ ई०) तथा वकटश्वर प्रस बम्बई – विक्रम सवत् १९८८ ।
(५६) नागानन्दम् – श्री हर्ष स्टडण्डड पब्लिशिंग क० माई हीरागट, जालन्धर सिटी प्रथम सस्करण – १९५८ ई० तथा चौखम्बा सस्कृत सीरीज आफिस बनारस १ ।
(५७) नारदपुराणम् – वेकटश्वर प्रेस बम्बई – १८६७ ई० ।
(५८) नीतिशतकम् – भतृहरि मास्टर खलाडीलाल एण्ड सस वाराणसी – १९४७ ई० ।
(५९) नीलमतपुराणम् – रामलाल तथा प० जगदधर जदू मोतीलाल बनारसीदास लाहौर १९२४ ई० ।
(६०) नषधमहाकाव्यम – श्रीहष चौखम्बा सस्कृत सीरीज आफिस, बनारस १ सम्वत् २०१० वि० ।
(६१) पद्मपुराणम् – (चार खण्ड) आनन्दाश्रम मुद्रणालय पूना – १८९४ ई० ।
(६२) प्रतिमानाटकम – भास द्वितीय सस्करण – १९५८ ई० रामनरायणलाल बुक्सेलर, इलाहाबाद ।
(६३) प्रतिज्ञायौगन्धरायणम् (भास नाटक चक्रम्) – ओरीयण्टल बुक एजेन्सी, पूना, द्वितीय सस्करण – १९५१ ई० ।
(६४) प्रतिवार्षिक पूजा कथा सग्रह – प० गोपाल शास्त्री नन द्वितीय भाग – काशी, १९३३ ई० ।
(६५) पाणिनिकालीन भारतवष – डा० वासुदेवशरण अग्रवाल मोतीलाल बनारसीदास नपाली खपडा बनारस प्रथम सस्करण – सम्वत् २०१२ वि० ।
(६६) प्री हिस्टारिक इण्डिया – स्टुअट पिग्गट, पेनगुन बुक्स मिडिलसेक्स १९५२ ई० ।
(६७) फरदर एक्सकवेशन्स एट मोहनजोदडो खण्ड १ २ – इ० ज० एच० माके गवनमेण्ट आफ इडिया दिल्ली – १९३७ ई० ।
(६८) ब्रह्मपुराणम् – आनन्दाश्रम मुद्रणालय, पूना – सन् १९३५ ई० ।

(६९) ब्रह्मवैवर्तपुराणम् – आनन्दाश्रम मुद्रणालय पूना १८९५ ई० ।
(७०) बुद्धचरितम – अश्वघोष, संस्कृत भवन, कठौतिया, पो० काझा जिला – पूर्णिया (बिहार) प्रथम सस्करण – दिसम्बर १९४२ ई० ।
(७१) बुद्धिस्ट आर्ट इन इण्डिया – ए० ग्रुनवेडेल बरनाड क्वेरिच, लन्दन – १९०१ ई० ।
(७२) भविष्य महापुराण – वेंकटेश्वर प्रस, बम्बई – सम्वत् १९६७ वि० ।
(७३) भारतीय लिपितत्व – नगेन्द्रनाथ वसू आर० सी० मित्रा, ९ कानपुकुरबाई लेन बाग बाजार कलकत्ता – १९१४ ई० ।
(७४) भारहुत इन्स्क्रपशन्स – बेनीमाधव बरूआ एण्ड कुमार गगानन्द सिन्हा कलकत्ता युनिवर्सिटी प्रेस, सीनट हाऊस, कलकत्ता – १९२६ ई० ।
(७५) मत्स्यमहापुराणम् – खमराज श्रीकृष्णदास श्रीवेंकटश्वर स्टीम प्रेस, मुम्बई तथा आनन्दाश्रम मुद्रणालय, पूना १९०७ ई० ।
(७६) मथुरा (उत्तर प्रदेश के सास्कृतिक केन्द्र) – श्रीकृष्णदत्त वाजपेयी शिक्षा विभाग उत्तर प्रदेश लखनऊ ।
(७७) मनुस्मति – गंगाप्रसाद उपाध्याय, कला प्रस इलाहाबाद तथा नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ ।
(७८) महाभारत – श्री महावीर प्रिंटिंग प्रेस लाहौर सम्वत् १९९० वि० ।
(७९) महानारायण उपनिषद् – गवनमेण्ट सेण्ट्रल बुक डिपो बम्बई १८८८ ई० ।
(८०) मानवगृह्यसूत्रम् – दास इम्प्रीमेरी डी० आई एकाडमी इम्पीरियल डेस साइसेज, वासआस्टर ९ लीग्ने नं० १२, १८९७ ई० तथा सनातन धम प्रस मुरादाबाद ।
(८१) मानसार आन आर्किटेक्चर एड स्कल्पचर – पी० के० आचाय, दी आक्सफोड यनिवर्सिटी प्रस लन्दन ।
(८२) मानसोल्लास – प्रथम भाग – सोमदेव सेण्ट्रल लाइब्रेरी, बडौदा – १९२५ ई० ।
(८३) मानसोल्लास – द्वितीय भाग – सोमेश्वर दत्त, गायकवाड आरीयण्टल सीरीज न० ३४, बडौदा १९३९ ई० ।
(८४) मारकण्डेयपुराणम् – प० जीवानन्द विद्यासागर, सुपरिन्टेण्डण्ट फ्री सस्कृत कालेज, कलकत्ता – १८७९ ई० तथा सनातन धम प्रस, मुरादाबाद – १९०८ ई० ।
(८५) मालतीमाधवम् – गवनमेण्ट सेण्ट्रल बुक डिपो बम्बई – १९०५ ई० ।
(८६) मालविकाग्निमित्रम् – कालिदास, कालिदास ग्रथावलि अखिल भारतीय विक्रम परिषद, काशी द्वितीय सस्करण – सम्वत् २००७ वि० ।
(८७) मिथोलाजी आजियाटिक – पोल लुई कुशो, लिब्रेर डु फ्रास, ११० बुलेवार सा जरमा, पारी १९२८ ई० ।
(८८) मिलिन्द पञ्ह (दी क्वेसचन्स आफ किंग मिलिन्द) – टी० डब्लू० आर० डविडस, सेक्रेड बुक्स आफ दी ईस्ट सीरीज न० ३५ ३६ आक्सफोड युनिवर्सिटी प्रस लन्दन ।
(८९) मुद्राराक्षस – विशाखदत्त, चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, बनारस १ ।
(९०) मोहनजोदडो एण्ड दी इण्डस सिविलिजेशन खण्ड १, २ ३ – सर जान मार्शल, आथर प्रासथेन, ४१ ग्रेट रसेल स्ट्रीट लन्दन – १९३१ ई० ।
(९१) यक्षाज – आनन्द कुमार स्वामी खण्ड १, २, दी स्मीथसोनीयन इन्स्टीटयूट वाशिंगटन १९२८ ई० ।

(९२) रघुवंशम् – कालिदास, कालिदास ग्रन्थावलि अखिल भारतीय विक्रम परिषद काशी, द्वितीय संस्करण – संवत २००७ वि० ।

(९३) रामायणम् – वाल्मीकि गसपरे गोरेसीओ वाल्यूम सेकेण्डो – १८४४ ई० ।

(९४) ललितासहस्रनाम – निर्णय सागर प्रेस बम्बई – १९१४ ई० तथा वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई ।

(९५) ला इकनोग्राफी बुद्धिक ड लाण्ड – अथवा दी बिगनिंग्स आफ बुद्धिस्ट आर्ट – फूश ए०, हमफरी मिलफोर्ड, लन्दन – १९१७ ई० ।

(९६) ला ग्राण्ड डीएस – ज० प्रजीलुस्की पाइओट – पारी – १९५० ई० ।

(९७) ला नूवेल रिसेश आ बेग्राम – हाकिन जे० पारी – १९५८ ई० ।

(९८) ला स्कल्पल्यूर ड भारहुत – आनन्द कुमार स्वामी एडिसन्स ड आर्ट एड हिस्टोरी, पारी १९५६ ई० ।

(९९) ला स्कल्पल्यूर ट बोध गया – आनन्द कुमार स्वामी लस एडिमन्स ड आर्ट एट ड हिस्टोरी पारी – १९३५ ई० ।

(१००) लिंगमहापुराणम – क्षेमराज श्रीकृष्णदास वेंकटेश्वर मुद्रणालय बम्बई १९१७ ई० ।

(१०१) वाजसनयिमाध्यान्दिन श्री शुक्ल यजुर्वेद संहिता – सनातन धर्म प्रेस मुरादाबाद द्वितीय संस्करण – संवत् १९९६ वि० ।

(१०२) वामनपुराणम – खेमराज श्रीकृष्णदास वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई – संवत १९८६ वि० ।

(१०३) वाराहमहापुराणम् – खेमराज श्रीकृष्णदास वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई – संवत् १९८० वि० तथा नवल किशोर प्रेस लखनऊ – १९१५ ई० ।

(१०४) विक्रमोर्वशीयम् – कालिदास कालिदास ग्रन्थावलि अखिल भारतीय विक्रम परिषद काशी द्वितीय संस्करण – संवत २००७ वि० ।

(१०५) विष्णुधर्मोत्तरपुराणम् – स्टेला क्रामरिश कलकत्ता युनिवर्सिटी प्रेस कलकत्ता द्वितीय एवं संशोधित संस्करण – १९२८ ई० तथा श्री वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई, संवत् १९९६ वि० ।

(१०६) विष्णुपुराणम – वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई संवत १९६७ वि० ।

(१०७) विष्णुसहस्रनाम – गीताप्रेस गोरखपुर ।

(१०८) वेणीसंहारम् – नारायण भट्ट ओरीयण्टल बुक सप्लाइंग एजन्सी पूना – १९२२ ई० तथा चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस वाराणसी १ ।

(१०९) वैदिक इण्डेक्स आफ नेम्स एंड सब्जेक्टस – मैकडानल एंड कीथ मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी – १९५८ ई० ।

(११०) वृहत्संहिता – वाराहमिहिर चौखम्बा विद्याभवन चौक वाराणसी १९५९ ई० ।

(१११) वृहदारण्यक उपनिषद् – जीवानन्द विद्यासागर कलकत्ता – १८७५ ई० तथा आनन्दाश्रम मुद्रणालय पूना ।

(११२) संस्कृत इंगलिश डिक्सनरी – मोनियर विलियम्स आक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस लन्दन, द्वितीय संस्करण – १९५६ ई० ।

(११३) संस्कृत साहित्य का इतिहास – बलदेव उपाध्याय शारदा मंदिर काशी – १९४८ ई० ।

(११४) सम नोटस आन इंडियन आर्टिस्टिक अनाटामी – ए० एन० टगार, दी इंडियन सोसाइटी आफ ओरीयण्टल आर्ट ७–ओल्ड पोस्ट आफिस स्ट्रीट कलकत्ता – १९१४ ई० ।

(११५) समरागणसूत्रधार – सम्पादक महामहोपाध्याय टी० गनपत शास्त्री बडौदा सेण्ट्रल लाइब्रेरी बडौदा प्रथम खड – १९२४ ई० द्वितीय खड १९२५ ई० ।
(११६) सामवेद – प० जयदव शर्मा आय साहित्य मण्डल लि० अजमेर सवत् २००३ वि० ।
(११७) साधनमाला – विनयतोष भट्टाचाय गायकवाड ओरीयण्टल सीरीज बडौदा खण्ड १ – १९२५ ई० खण्ड २ – १९२८ ई० ।
(११८) सीतोपनिषद (ईशाद्यष्टोत्तरशतोपनिषद) – निणय सागर प्रस, बम्बई ततीय सस्करण १९२५ ई० ।
(११९) सलक्ट इ सक्रिपशन्स बअरिंग आन इडियन हिस्ट्री एण्ड सिविलिजेशन – दिनश चन्द्र सरकार, कलकत्ता युनिवर्सिटी, कलकत्ता – १९४२ ई० ।
(१२०) सौभाग्य लक्ष्मी – प० कन्हैयालाल मिश्र बम्बई – सवत १९८८ वि० ।
(१२१) सौभाग्य लक्ष्म्युपनिषद् (ईशाद्यष्टोत्तरशतोपनिषद) – निणय सागर प्रस, बम्बई तृतीय सस्करण – १९२५ ई० ।
(१२२) सौन्दयलहरी – गनश एण्ड कम्पनी मद्रास – १९५७ ई० ।
(१२३) सौन्दरनन्दकाव्यम – अश्वघोष सस्कृत भवन कठौतिया पो० काझा जिला – पूर्णिया द्वितीय सस्करण – मई १९५९ ई० ।
(१२४) स्कल्पचस इन दी इलाहाबाद म्युनिसिपल म्यूजियम – सतीश चन्द्र काला, किताबिस्तान इलाहाबाद – १९४६ ई० ।
(१२५) स्कान्दमहापुराणम – खमराज श्रीकृष्णदास बम्बई – सवत १९६६ वि० ।
(१२६) स्वप्नवासवदत्तम् (भास नाटकचक्रम्) – ओरीयण्टल बुक एजन्सी पूना २ द्वितीय सस्करण – १९५१ ई० तथा चौखबा सस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी १ ।
(१२७) शतपथब्राह्मणम् – श्रीगौरीशकर गोयनका अच्युतग्रथमाला, काशी प्रथम व द्वितीय खड प्रथम सस्करण – सवत १९९४ वि० ।
(१२८) शाक्तानन्द तरगिणी – आगमानुसधान समिति, कलकत्ता, बगला सस्करण ।
(१२९) शारदातिलकम – दी सस्कृत प्रस डिपोजिटरी, ३० कानवालिस स्ट्रीट कलकत्ता खण्ड १, २ १९३३ ई० ।
(१३०) शुक्रनीति सार – जीवानन्द विद्यासागर कलकत्ता द्वितीय सस्करण – १८९० ई० ।
(१३१) शुक्रनीति शास्त्र – हिन्दू जगत् कायालय शामली जिला – मुजफ्फरनगर ।
(१३२) शुक्लयजुर्वेद – वदिक यन्त्रालय अजमेर – सवत् १९८० वि० ।
(१३३) शिवपुराणम – श्याम काशी प्रस मथुरा (दो भागो में) १९९६ वि० ।
(१३४) शिशुपालवधम् – माघ निणय सागर प्रस बम्बई सातवाँ सस्करण १९४० ई० ।
(१३५) शिल्परत्नम – श्रीकुमार सम्पादक के० साम्बशिव शास्त्री त्रिवेन्द्रम सस्कृत सीरीज न० ९८ खण्ड २, १९२९ ई० ।
(१३६) श्रावस्ती – एम० वेंकटारामया मनेजर आफ पब्लिकेशन्स गवनमण्ट आफ इडिया दिल्ली १९५६ ई० ।
१३७) श्रीमद्भागवतम – श्री राधाविनोद श्रीदेवकीनन्दन मद्रणालय काशी – सवत् १९६१ वि० ।

(१३८) श्रीमहालक्ष्मी व्रतकथा – लक्ष्मी वेंकटश्वर प्रेस कल्याण बम्बई सवत् १९७२ वि० ।

(१३९) श्रीवत्स फ्राम वाली – मिलवालवी बडौदा – १९३३ ई० ।

(१४०) श्रीसूक्तम् – भार्गव पुस्तकालय काशी तथा चौखम्बा सस्कृत सीरीज आफिस वाराणसी १
१९२३ ई० ।

(१४१) शृगारशतकम – भर्तृहरि हरिदास एण्ड क० कलकत्ता – मई १९२५ ई० ।

(१४२) हर्षचरितम – निर्णय सागर प्रेस बम्बई ।

(१४३) हिन्दू हालिडज एड सेरिमोनियल्स – बी० ए० गुप्ता कलकत्ता – १९१९ ई० ।

(१४४) हिस्ट्री आफ इण्डियन एण्ड इण्डोनेशियन आर्ट – आनन्द कुमार स्वामी एडवर्ड गोल्डस्टन
लन्दन – १९२७ ई० ।

(१४५) त्रिपुरारहस्यम् – गवर्नमेण्ट सस्कृत लाइब्रेरी बनारस प्रथम खड – १९२५ ई० द्वितीय खण्ड
१९२७ ई०, तृतीय खण्ड – १९२८ ई० तथा चतुर्थ खण्ड १९३३ ई० ।

(ख) लेखो की तालिका

(१) अप फ्राम दी वेल आफ टाइम – लुई मार्डन दी नेशनल ज्योग्राफिकल मैगजीन जनवरी
१९५९ ई० ।

(२) अर्ली इण्डियन आइकोनोग्राफी श्रीलक्ष्मी – आनन्दकुमार स्वामी ईस्टर्न आर्ट खण्ड १,
जनवरी १९२९ ई० ।

(३) आरकेइकटराकोटाज – डा० कुमार स्वामी 'मार्ग भाग ६ खण्ड १ ।

(४) आवर लडी आफ ब्यूटी एण्ड एबण्डस पद्मश्री – डा० मोती चन्द्र नेहरू अभिनन्दन ग्रन्थ
कमेटी, प्रभुदयाल बिल्डिंग कनाट सरकस नई दिल्ली नवम्बर १४ १९४९ ई प ९७–११३ ।

(५) एक्सकवेशन्स एट भीटा – जे० एच० मार्शल पष्ठ २९ ९४, आर्केआलाजिकल सर्वे ऑफ
इण्डिया रिपोर्ट १९११ १२ ई० ।

(६) एक्सकवेशन्स एट बसाढ़ – टी० ब्लाच आर्केआलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया रिपोर्ट १९०३
१९०४ ई० ।

(७) एक्सकवेशन्स एट हस्तिनापुर इत्यादि – बी० बी० लाल एन्शण्ट इण्डिया न० १० ११
पष्ठ ५ १५१ डाइरेक्टर जनरल आफ इण्डिया न्यू दिल्ली (१९५४ ५५ ई०) ।

(८) एक्सप्लोरेशन आफ हिस्टारिकल साइटस – वाई० डी० शर्मा एन्शण्ट इण्डिया न० ९
पृष्ठ ११६ १६९ डाइरेक्टर जेनरल आफ इण्डिया डिपार्टमेण्ट आफ आर्केआलाजी दिल्ली
– १९५२ ई० ।

(९) एन एन्शण्ट टेक्स्ट आन दी कास्टींग आफ मेटल इमेजज – सर सी० कुमार सरस्वती जरनल
आफ इण्डियन सोसाइटी आफ ओरियण्टल आर्ट खण्ड ४ न० २ दिसम्बर १९३६ ई०, पृष्ठ
१३९ १४३ ।

(१०) एनशेण्ट इण्डियन आइवरीज – मोतीचन्द्र प्रिंस आफ वेल्स म्यूजियम बलटिन न० ६,
१९५७ ५८ ई० बम्बई ।

(११) ओन दी आइकोनोग्राफी आफ दी बुद्धाज नेटिवीटी –फूशे आर्केआलाजिकल सर्वे आफ इडिया
मेमायर्स न० ४६, १९३६ ई० ।

(१२) काशी की प्राचीन दवमूर्तियां 'श्रीलक्ष्मी — नारायण दत्तात्रेय कालेकर आज २६ अक्टबर १९५७ इ० पृष्ठ ५ कालम ३ ।

(१३) कौशाम्बी की मणमर्तियाँ — सतीशचन्द्र काला सम्पूर्णानन्द अभिनन्दन ग्रथ सवत् २००७ वि० नागरा प्रचारिणी सभा काशी ।

(१४) गौतमीपुत्र श्री शातकर्णी की विजय प्रशस्ति — श्रीकृष्णदत्त वाजपयी नागरी प्रचारिणी पत्रिका विक्रमाक वशाख माघ २००० वि० ।

(१५) जब शिव जी न जापान को चीन के दमन से बचाया — भिक्ष चिम्मनलाल धमयग — १२ फरवरी १९६१ ई० ।

(१६) दी इण्डस सिविलिजशन एड दी नियर ईस्ट — फ्राकफाट एनअल बिबलियाग्राफी आफ इडियन आर्कआलाजी, लाइडन पष्ठ १३३ — १९३६ ई० ।

(१७) दी काकरस लाइफ इन जन पटिंग — आनन्द कुमार स्वामी जरनल आफ इण्डियन सोसाइटी आफ ओरीयण्टल आट खण्ड ३ न० २ — १९३५ ई० ।

(१८) दी पारयूर आफ दी बद्धिस्ट गाडसेज आफ कौशाम्बी — गोविंद चन्द्र मजारी मई १९५६ ई०

(१९) दी लम्प बअरर (दीपलक्ष्मी) — जी० याजदानी, जनल आफ इण्डियन सोसाइटी आफ आरीयण्टल आट खण्ड २ १९३४ ई० पष्ठ सख्या ११ १२ ।

(२०) दिवाली थ्रू दी एजज — सुभाष जे० रेल दी लीडर अक्टूबर २० १९६० ई० पष्ठ १ कालम ७ ।

(२१) नोटस आन सम इण्डियन आम्युलटस — मोरेश्वर दीक्षित बुलटिन, प्रिंस आफ वेल्स म्यजियम आफ वेस्टर्न इण्डिया बम्बई ।

(२२) पद्मिनी विद्या — जे० एन० बनर्जी जनल आफ इण्डियन सोसाइटी आफ ओरीयण्टल आट १९४१ ई० ।

(२३) पारयूर य बीजू डा लाण्ड प्राता हिस्तारिक थज आ युनिवर्सिटी डु पारी (१९५५ ई०) गोविन्दचन्द्र ।

(२४) ब्रह्मयामल तत्र (ए न्यू टक्स्ट ऑन प्रतिमा लक्षण) — पी० सी० बागची जरनल आफ इण्डियन सोसाइटी आफ आरीयण्टल आट खण्ड ३, दिसम्बर १९३५ ई० ।

(२५) भारतीय व्यायाम के साधन 'गदा — नीलकण्ठ जोशी, आज ३० अगस्त १९५९ ई० ।

(२६) मसान की मणमूर्तिया — गोविन्द चन्द्र आज ५ जनवरी १९५९ ई० ।

(२७) लम्पसकस से प्राप्त भारतलक्ष्मी की मूर्ति — श्री वासुदेवशरण अग्रवाल नागरी प्रचारिणी पत्रिका, विक्रमाक वशाख माघ २००० वि०, प० ३९ ४२ ।

(२८) ल लोटस् ए ला नसान्स ड डयु — ए० मारे जुरनाल आजियातिक मे-जुर्यां १९१७ ई० ।

(२९) वदिक वडस फार ब्यूटीफुल एण्ड ब्युटी इत्यादि — आल्डनवग रूपम न० ३२, अक्टूबर १९२७ ई० ।

(३०) सम भोजपुरी फोक साग्स — सर जी० ए० ग्रीयसन, दी जरनल आफ दी रायल एशियाटिक सोसाइटी आफ ग्रेट ब्रिटेन एण्ड आयरलैण्ड लन्दन १९१० ई० ।

(३१) स्टोन डिस्क्स फाउण्ड एट मुर्तजीगज — एस० ए० सीथर, जरनल आफ बिहार रिसच सोसाइटी खण्ड ३७ १९५१ ई० ।

*

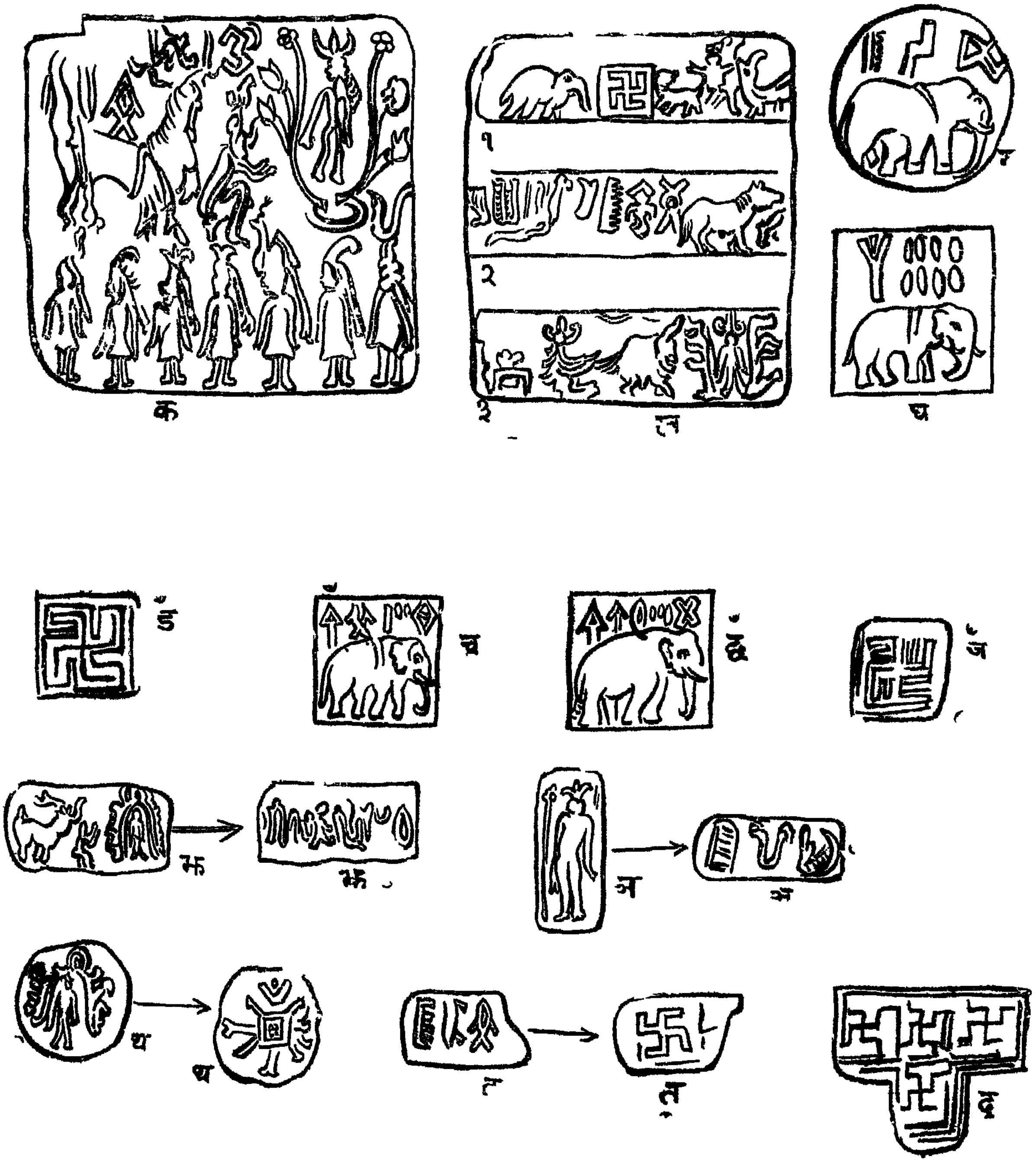

सिन्धु घाटी की मोहरों पर देवी (लक्ष्मी) की मूर्ति, गज तथा स्वस्तिक की आकृतियां ।

फलक २

ख

[क] पटना से प्राप्त मौयकालीन लक्ष्मी की म ामय मूर्ति।

[ख] आधुनिक लक्ष्मी की मण मूर्ति।

[ग] एक अगूठी के पत्थर पर बनी लक्ष्मी की मर्ति।

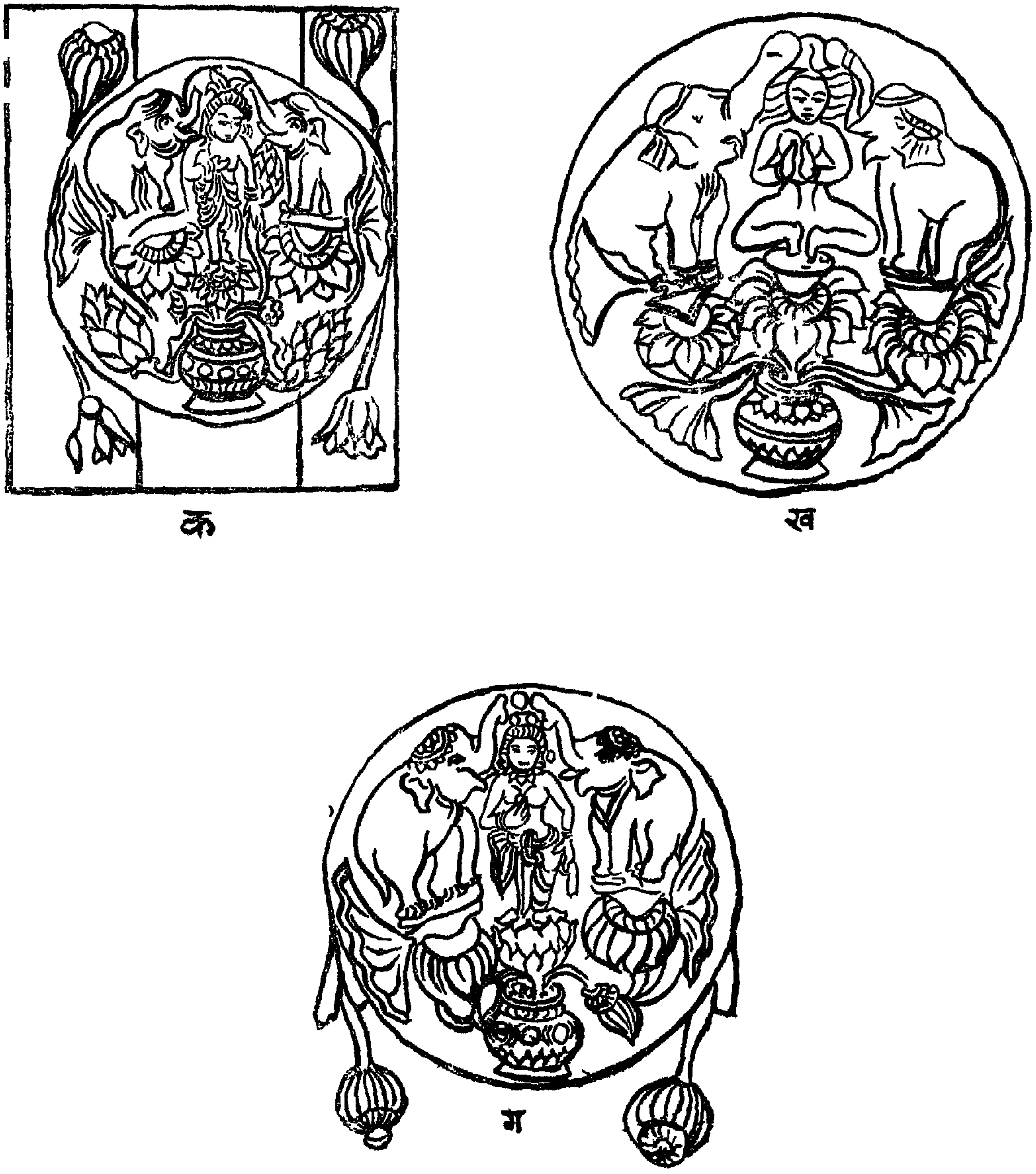

भारहुत के पाषाण खण्डों पर अंकित खड़ी और बैठी का गजलक्ष्मी की मूर्तियाँ ।

फलक ४

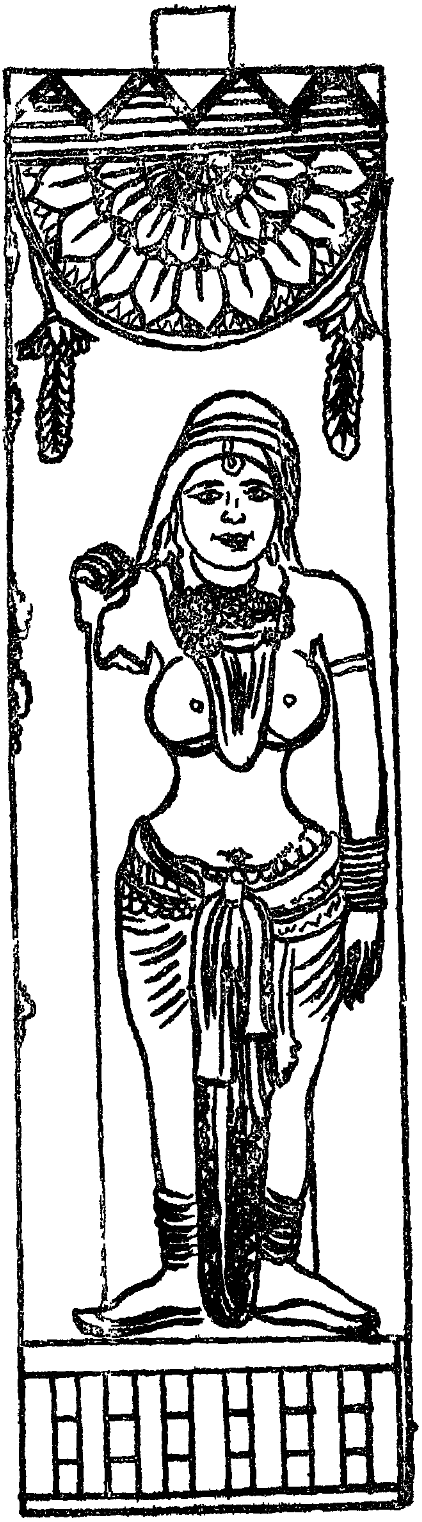

क

ख

भारहुत के पाषाण-खण्डों पर अंकित

[क] श्री माँ देवता की मूर्ति ।

[ख] पद्म-हस्ता लक्ष्मी की मूर्ति ।

फलक ५

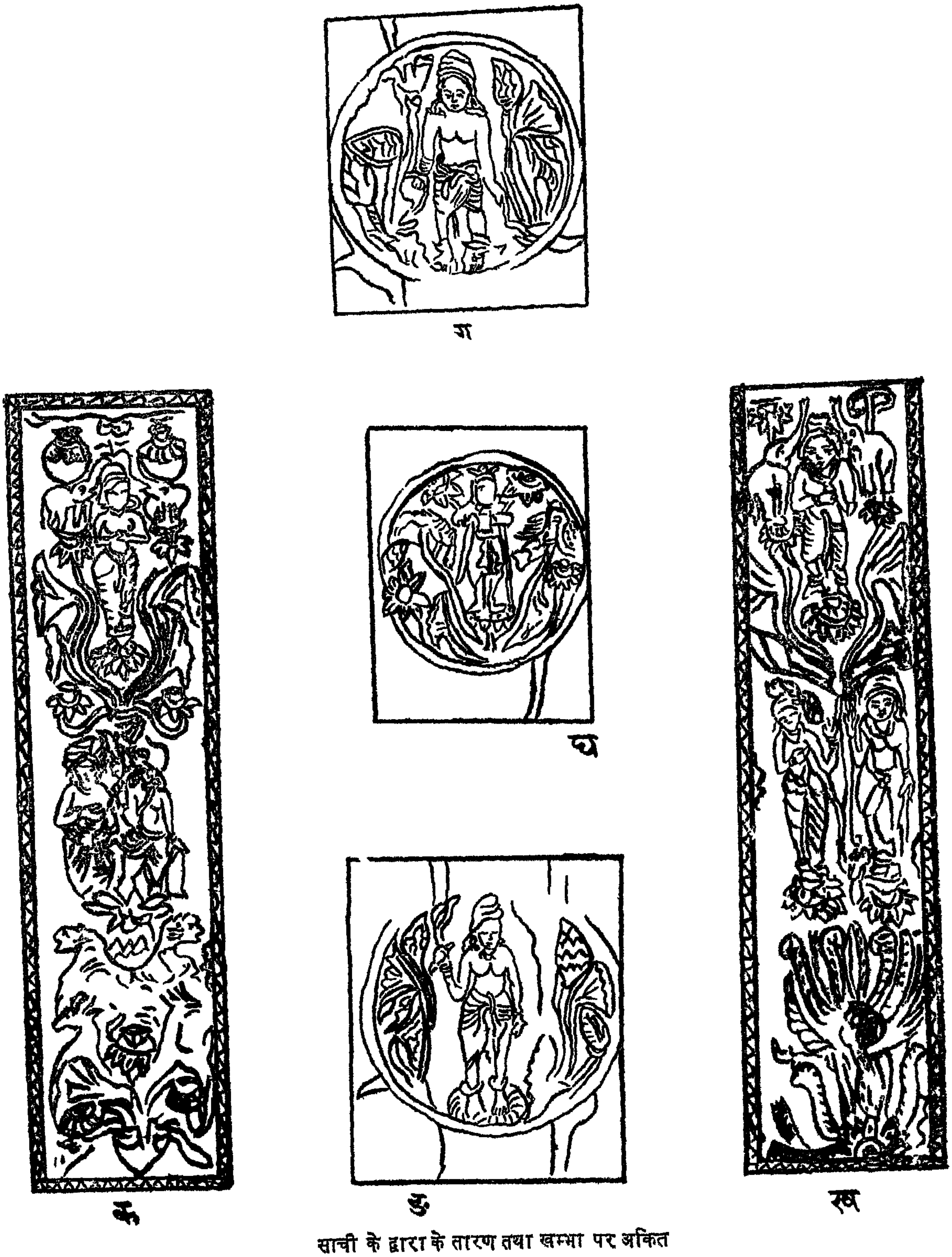

साची के द्वारा के तारण तथा खम्भा पर अकित
पद्म हस्ता तथा ग । लक्ष्मी की मूर्ति ।

फलक ६

ग

क

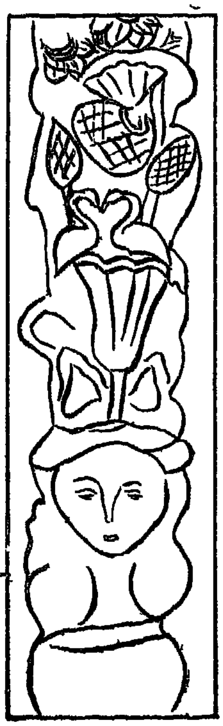

घ

ख

[क] साँची के पाषाण खण्ड पर अंकित पद्मवासिनी लक्ष्मी ।

[ख] सुङ्गकालीन लक्ष्मी की मूर्ति ।

[ग] सुङ्गकालीन राजलक्ष्मी की मूर्ति ।

फलक ७

क

ख

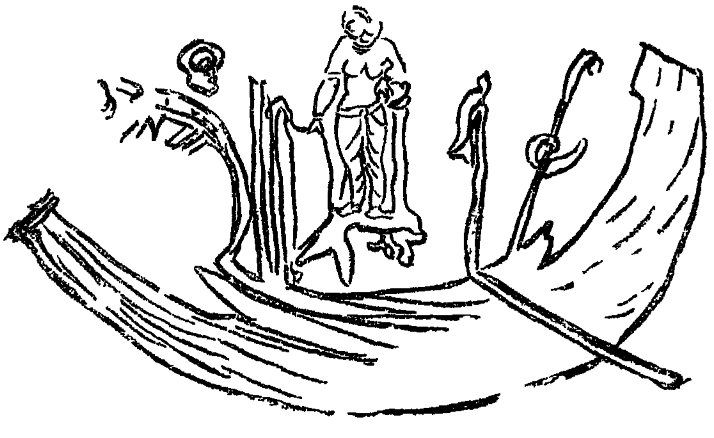

ग

[क] साची से प्राप्त गजलक्ष्मी की मूर्ति ।

[ख] बसाढ से प्राप्त एक मणमय फलक पर पख लगी हुइ ल^मी की मर्ति ।

[ग] बसाढ से प्राप्त एक मोहर पर नाव पर खडी लक्ष्मी की मूर्ति ।

फलक ८

ख

बोध गया के पाषाण खण्डों पर अंकित लक्ष्मी की मूर्ति ।

फलक ६ (अ)

क

ख

ग

घ

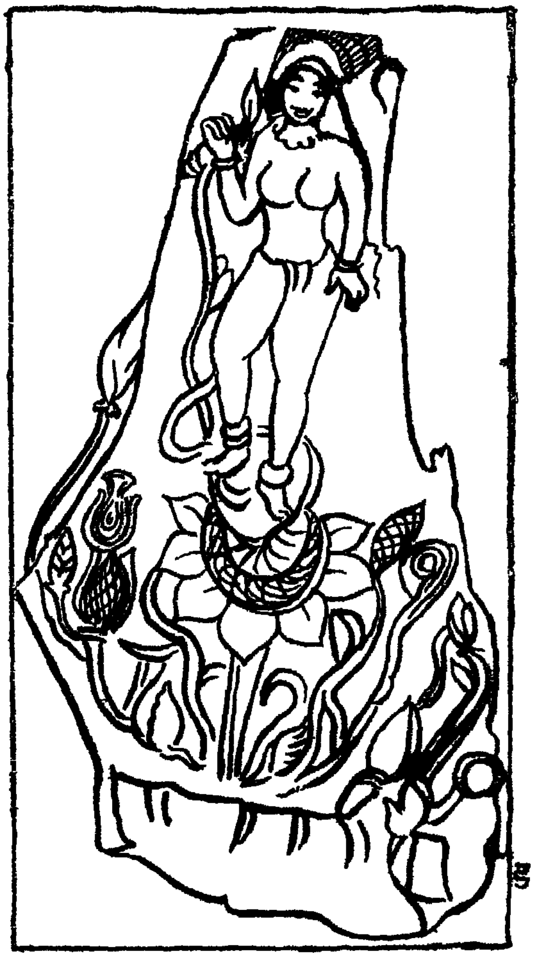

ङ

क—ख—ग—मोहरा तथा मुद्राओं पर अंकित लक्ष्मी की मूर्ति।

घ—ङ—लक्ष्मी की मृण्मय मूर्तियाँ।

फलक ९ (च)

च—लक्ष्मी की मृणमय मूर्ति।

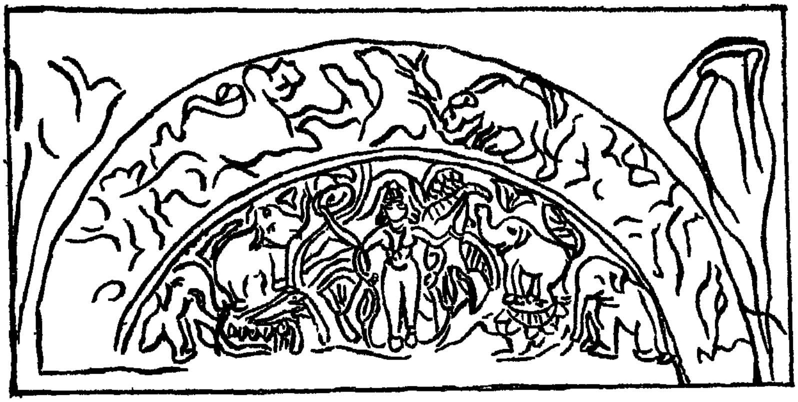

क

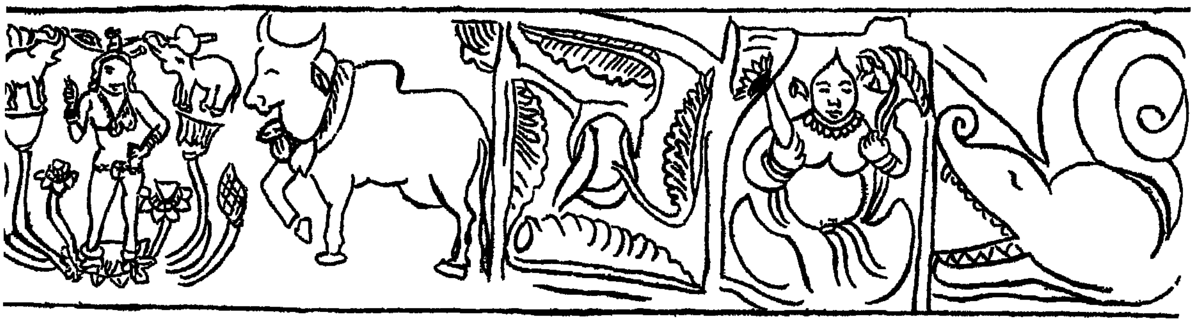

ख

[क] खण्ड गिरि के पाषाण-खण्ड पर अंकित गज-लक्ष्मी।

[ख] कौशाम्बी से प्राप्त एक पाषाण-खण्ड पर अंकित गज लक्ष्मी, वृषभ, गज स्वस्तिक यक्ष तथा मकर।

फलक ११

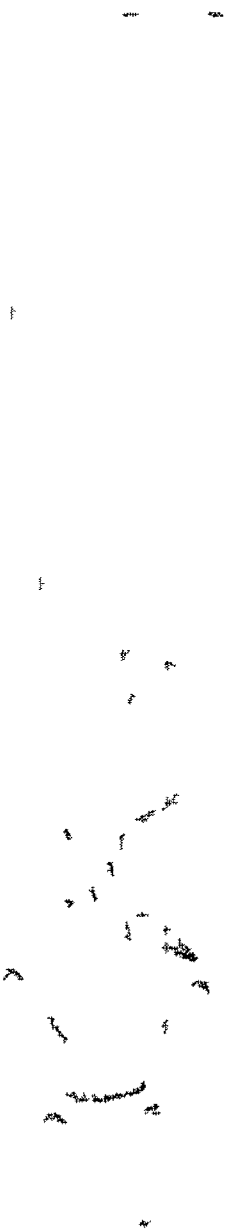

कौशाम्बी से प्राप्त एक पाषाण पर घट से निकलते हुए पद्‌म पर गज लक्ष्मी की मूर्ति ।

फलक १२

कौशाम्बी से प्राप्त ईसा की प्रथम शताब्दी की एक गजलक्ष्मी की मृणमय मूर्ति गज मुकुट पर अंकित है।

फलक १३

क

ख

ग

घ

तक्षशिला से प्राप्त लक्ष्मी की विविध आकृतियाँ

फलक १४

अमरावती के एक पाषाण खण्ड पर अंकित लक्ष्मी की मूर्ति

फलक १५

क

ख

क—शेष शायी विष्णु के साथ लक्ष्मी की मूर्ति (कम्बोज)।

ख—गणेश, लक्ष्मी, कुबेर।

फलक १६

इलोरा में अंकित गजलक्ष्मी की मूर्ति ।

फलक १७

क---खिचिंग की गजलक्ष्मी।

ख---लक्ष्मी दक्षिण भारत से प्राप्त।

चित्र १८

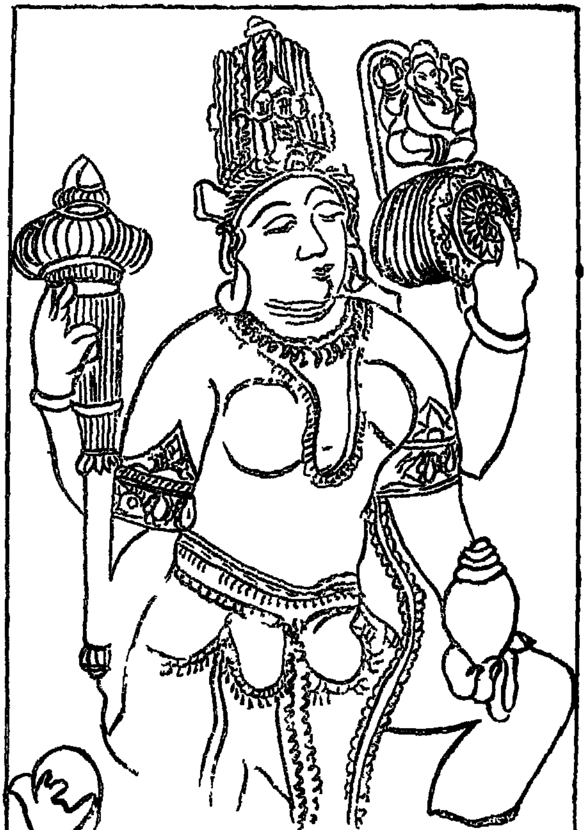

काशी में एक पाषाण खण्ड पर पर अकित वैष्णवी की मूर्ति ।

फलक २०

लक्ष्मी परिणय।

फलक २१

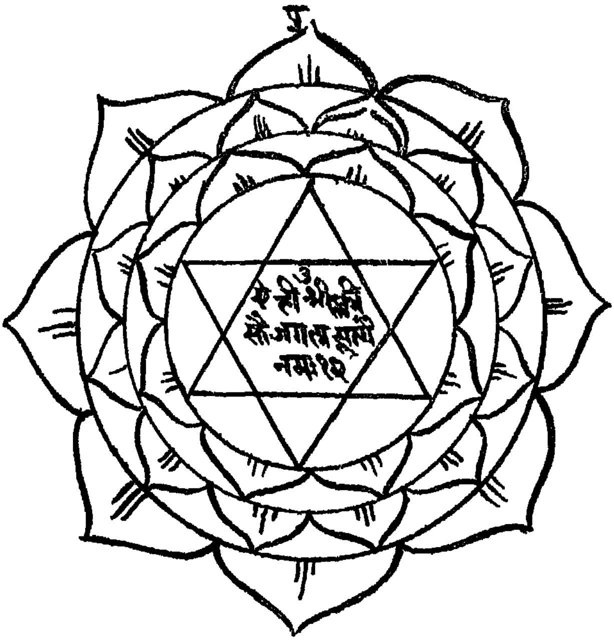

श्री महा लक्ष्मी यन्त्र

फलक २२

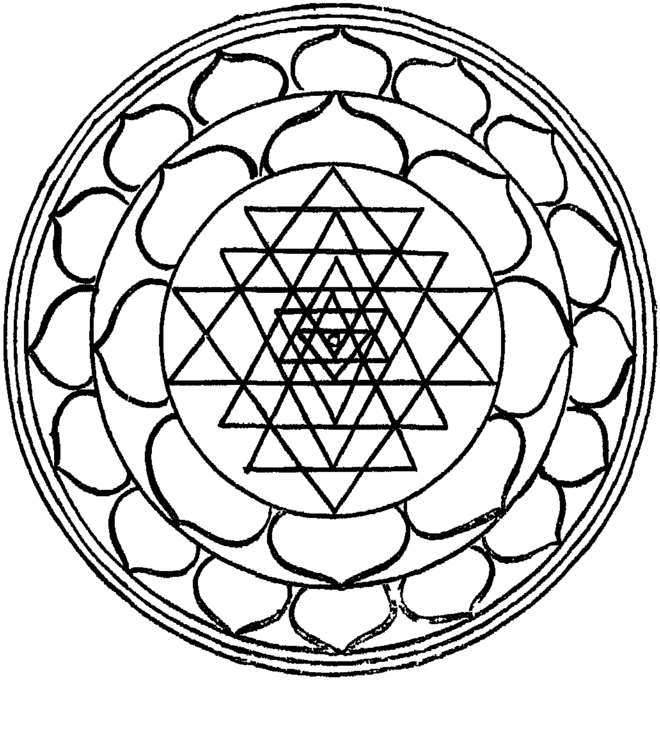

श्री महालक्ष्मी यन्त्र ।

फलक २३

क, ख, ग, घ, ङ च छ, हाथ की विविध मुद्राएँ नाटकार अलल करें

ज—अर्ध परियक आसन । झ श्री वत्स का चिह्न ।

ट—परियक आसन । ञ—त्रिरत्न का चिह्न

फलक २४

क

ख

क —जन धम-ग्रथो के अनुसार गजलक्ष्मी ।

ख जन धम-ग्रथों के अनुसार पूर्णघट ।

फलक २५ (क)

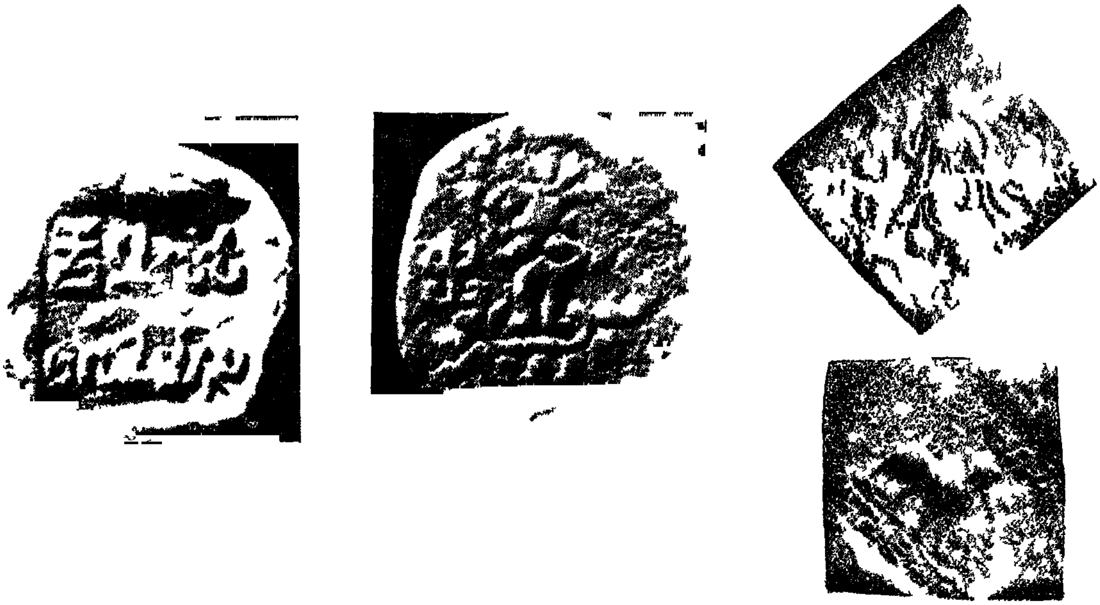

ख

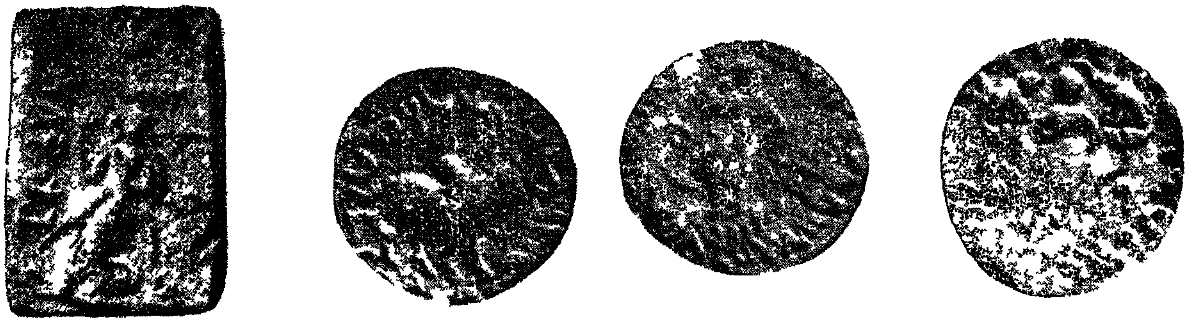

ग घ ङ

च छ

प्राचीन भारतीय राज्यों की मुद्राओं पर लक्ष्मी की मूर्ति

फलक २५ (ख)

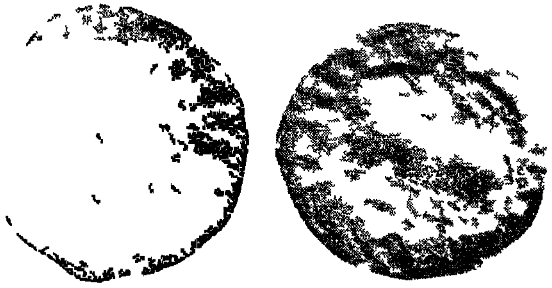

ज

झ

ञ

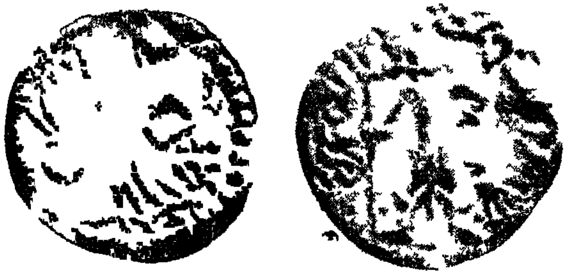

ठ

प्राचीन भारतीय राज्यों की मद्राआ पर लक्ष्मी की मूर्ति ।

फलक २६ (क)

ड

ड

ढ

ढ

ण

ण

त

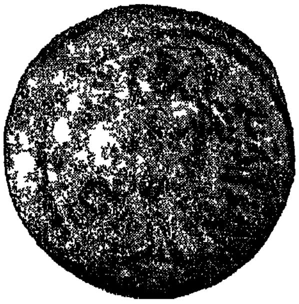
त

थ

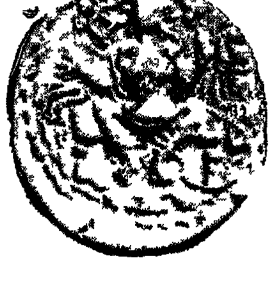
थ

द

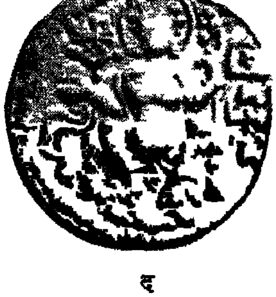
द

गुप्त साम्राज्य की मुद्राओं पर लक्ष्मी

फलक २६ (ख)

ध

ध

न

न

प

प

फ

फ

ब

ब

भ

भ

गुप्त साम्राज्य की मुद्राओ पर लक्ष्मी

फलक १७

म

य

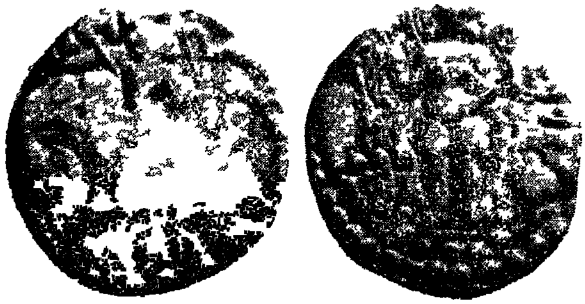

श

ष

गुप्त साम्राज्य की मुद्राओ पर लक्ष्मी की मूर्ति

फलक २८

मध्ययुगीन भारतीय राजाओं की मुद्राओं पर लक्ष्मी

1907

फलक २६

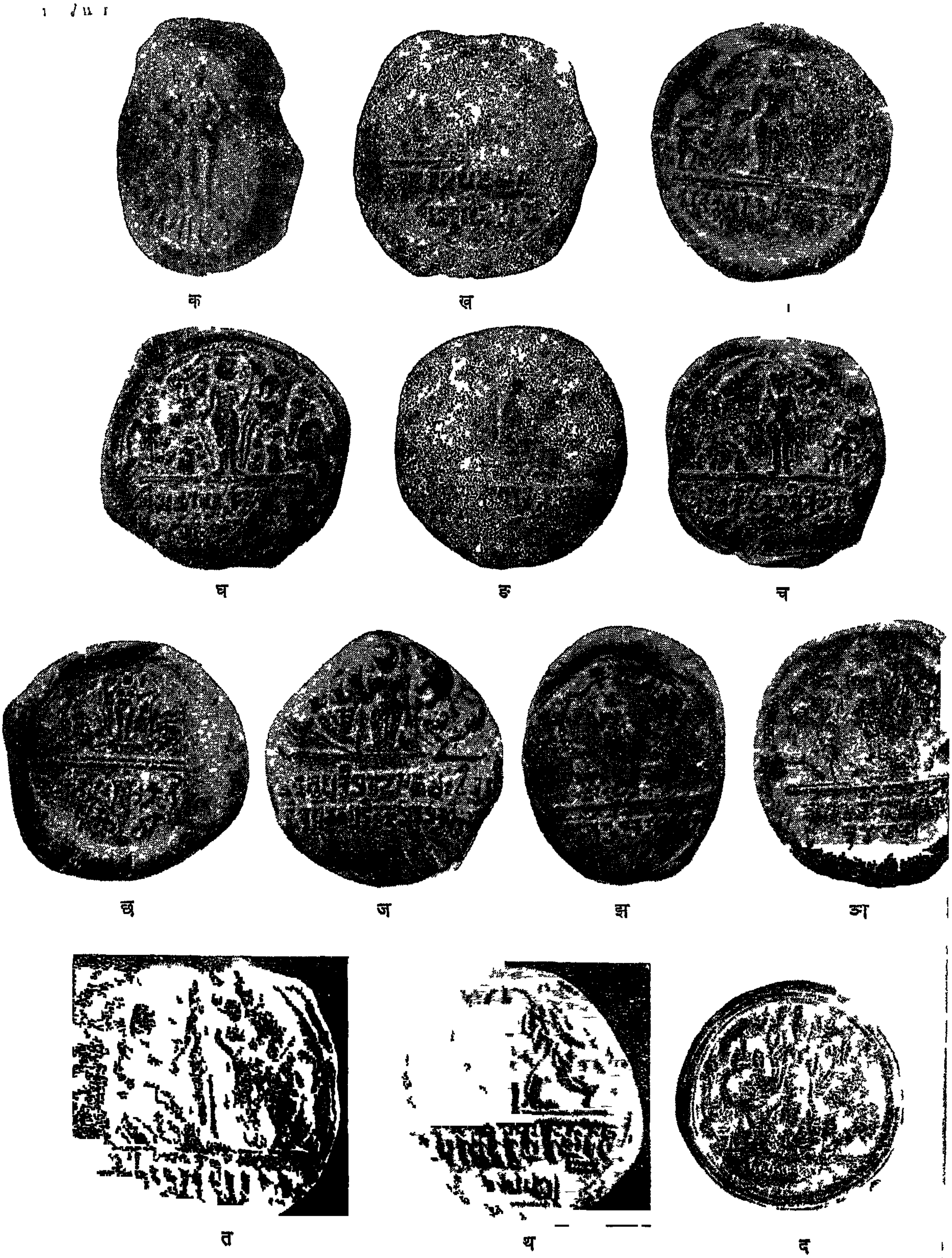

मोहरों पर गजलक्ष्मी